गिरनारकी बालकथाएँ

सचित्र

आचार्य हेमवल्लभसूरि

Apro/lip/2020/12/13/n

विजय रूपानी

मुख्यमंत्री, गुजरात राज्य

दिनांक. 15-12-2020

संदेश

गुजरात की धरती पर श्री गिरनार महातीर्थ की महिमा अपरंपार है। गिरनार माने अखंड श्रद्धा का प्रतीक। आज की नई पीढ़ी को कहानी के रूप में चित्रों के साथ **"गिरनारकी बालकथाएँ"** के नाम से प्रकाशित हो रहा यह पुस्तक गुजरात की धरोहर के समान गिरनार के इतिहास के लिए सोने में सुगंध समान बना रहेगा। तदुपरांत आज के ऐसे भौतिकता के दौर में मोबाइल और टेक्नोलॉजी में लिप्त रहते बच्चों के लिए यह चित्रसभर कहानी संग्रह नई पीढ़ी को हिन्दी साहित्य की ओर आकर्षित करने में मार्गदर्शक स्वरूप बनेगा।

गिरनार महातीर्थ की लगभग 3150 बार यात्रा कर चुके और यह पुस्तक के लेखक प. पू. **आचार्य हेमवल्लभसूरि** महाराज साहब को **"गिरनारकी बालकथाएँ"** पुस्तक प्रकाशित करने के लिए अभिनंदन और शुभकामनाएं देता हूँ।

आपका,

(विजय रूपानी)

To,
Shree Dineshchandrabhai D. Shah, Trustee
Sahsavan Kalyanak Bhoomi Tirthoddhar Samiti
Opp. Minraj School, Rupayatan Road,
Bhavnath Taleti, Junagadh – 362 001.
Mo.: 94096 85999.

गिरनारमंडन श्री नेमिनाथाय नमः

गिरनारकी बालकथाएँ

जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संप्रदायकी दृष्टिसे सचित्र बालावबोध गिरनार माहात्म्य

: संपादक :

युगप्रधान आचार्यसम प.पू.पं. श्री चन्द्रशेखरविजयजी गणिवर्य के शिष्य
परम पूज्य आचार्य श्री धर्मरक्षितसूरि महाराज साहेब के शिष्य
परम पूज्य आचार्य श्री हेमवल्लभसूरि महाराज साहेब

: प्रकाशक :

श्री गिरनार महातीर्थविकास समिति
C/o गिरनार दर्शन धर्मशाळा,
शिवनिकेतन के पासमें, रुपायतन रोड, जुनागढ-३६२००१.
मो. : ०२८५-२६५७०९९/१९९ मो. ९४०९६८५९९९
Email. : girnardarshan@gmail.com, g.tirthvikash@gmail.com
website : www.girnardarshan.com

गिरनारकी बालकथाएँ (सचित्र)

प्रथम संस्करण - हिन्दी ५०००,
गुजराती ५०००, अंग्रेजी ५००० नकल

ISBN : 978-81-949353-0-8

JSBN
gyann0006

मूल किंमत : १२५/-

बेचने की किंमत : १००/-

संपादक : आचार्य हेमवल्लभसूरि

प्राप्तिस्थान

श्री गिरनार महातीर्थविकास समिति
C/o गिरनार दर्शन धर्मशाळा,
शिवनिकेतन के बाजुमें, रुपायतन रोड,
जुनागढ-३६२००१.
फोन : ०२८५-२६५७०९९/१९९
मो. ९४०९६८५९९९

ज्ञाननी बारी
जी-१, लाभ कोम्प्लेक्ष
१७ तालुका सोसायटी,
नवजीवन, अमदावाद-३८००१४.
मो. ९४०८३७१२०६

महेता डेरी
तळेटी रोड, पालिताण-३६४२७०.
फोन : ०२८४८-२५२२३२

समकित ग्रुप
१४८/१०२, चंद्र दर्शन,
जवाहरनगर, रोड नं. ९,
गोरेगाम (वे.), मुंबइ-४०० ०६२.
मो. ९८२०१२१११५

वर्धमान संस्कार धाम
भवानीकृपा बिल्डींग, १ला माला,
११२, जगन्नाथ शंकर शेठ रोड,
गिरगाम चर्च पासे, मुंबइ-४०० ००४.
फोन : ०२२-२३६७०९७४

केयुरभाइ शेठ
G/F-३१, अर्पण कोम्प्लेक्ष
डीलक्ष चार रस्ता, पासपोर्ट ओफीस के पासे,
निझामपुरा, वडोदरा-३९०००२.
मो. ७२८५००५१५२, ९५१०५८०४८७

अखिल भारतीय संस्कृति रक्षक दळ
सुभाष चोक, गोपीपुरा, सुरत
फोन : ०२६१-२५९९३३७

Amitkumar Mahaveerji Salecha
C/O Arham Gold, Ground Floor, Ram Rajendra Kuteer,
Isukavagu Street, R.Agraharam Guntur - 522003 (A.P)
98492 76450, 86366 47791

हिन्दी अनुवाद : भावनाबेन भट्ट -भावनगर - मो. ९८७९२ २२०१८

मुद्रक : किरीट ग्राफीक्स - अहमदाबाद- मो. ९८९८४९००९१, ९४०९३४२६०१

प्रस्तावना

जग में तीरथ दो बड़े, शत्रुंजय गिरनार;
एक गढ़ ऋषभ समोसर्या, एक गढ़ नेमकुमार ।

यह दोनों तीर्थ में शत्रुंजय महातीर्थ जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ में बहुत प्रसिद्ध है किंतु गिरनार महातीर्थ के माहात्म्य से सब अनभिज्ञ रहने के कारण यह तीर्थ पिछले कुछ वर्षों से उपेक्षित रहा है ।

गिरनार महातीर्थ के उत्कर्ष हेतु पिछले लगभग 11 साल से अथाक प्रयास किये जाने के कारण आज सब गिरनार के माहात्म्य को जानने और अनुभव करने लगे हैं । पूरे भारत में और विदेशों में भी लोगों के हृदय में आज दिन-प्रतिदिन गिरनार और गिरनारी नेमिप्रभु के प्रति प्रेम और भक्ति में सविशेष बढ़ोतरी होने लगी हैं ।

गिरनार महातीर्थ के उत्कर्ष के "चलो गिरनार चले..." के इस अभियान में गिरनार की अनेकविध बातों को दर्शाते अनेक पुस्तक आदि साहित्यिक प्रकाशन आजतक हुए हैं । इस तरह सभी जैनों के दिल में और दिमाग में गिरनार को प्रविष्ट कराने के प्रयास हो रहे हैं ।

आज के बच्चे और युवा आनेवाले कल के सुश्रावक, संघ के पदाधिकारी और शासन के कार्यों में निर्णायक भूमिका निभाने वाले होंगे। इसीलिए नई पीढ़ी भी यह गिरनार के माहात्म्य का अभ्यास करे यह बहुत जरूरी है। क्योंकि वे भी यह पवित्रभूमि की महिमा को जानकार विशेष श्रद्धावान बन सकें।

अतीत में अनंते तीर्थंकरों के दीक्षा,केवलज्ञान और मोक्ष कल्याणक हुए हैं। वर्तमान में बाईसवें तीर्थंकर बाल ब्रह्मचारी नेमिनाथ भगवान के भी दीक्षा, केवलज्ञान और मोक्ष कल्याणक हुए हैं तथा भविष्य की आनेवाली चौबीसी के चौबीसों तीर्थंकर परमात्मा के मोक्ष कल्याणक और पिछले दो तीर्थंकर के दीक्षा और केवलज्ञान कल्याणक भी यह पवित्रभूमि पर होनेवाले हैं। यह तीर्थ की ऐसी महिमा को जानकर उसके प्रति विशेष आदर-सम्मान के द्वारा सब की आत्मा का उत्थान हो ऐसे शुभ आशय से यह सचित्र बाल-कहानीयों का प्रकाशन हो रहा है। "चित्र शब्दों से ज्यादा बोलते हैं" इसीलिए पूर्वाचार्य आदि की तीर्थमहिमा, तीर्थभक्ति, तीर्थबलिदान इत्यादि घटनाओं का वर्णन करती कहानियां बालजीवों को विशेष रूप से ग्राह्य बने ऐसे सुंदर और आकर्षक चित्रों समेत यह पुस्तक का प्रकाशन बालवर्ग के हृदय में यह तीर्थ के प्रति विशेष भावना, श्रद्धा और समर्पण जगायेगा ऐसा विश्वास हैं।

गिरनार के माहात्म्य दर्शाती यह कहानियां अनेक ग्रंथो के आधार पर तैयार की गई है। उन सभी साहित्य सर्जकों, प्रकाशकों आदि तथा ग्रंथ सर्जन करने में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे सहायक हुए साधु-साध्वीजी भगवंतो, श्रावक-श्राविकाओं अनेक ज्ञानभंडारो तथा विविध संस्थाओ का अत्यंत ऋणी हूँ। विशेषसे यह प्रकाशन अवसर एक महत्त्वपूर्ण संदेश भेजनेवाले गुजरात राज्यके मुख्यमंत्री माननीय श्री विजयभाई रुपाणी एवं धर्म, राष्ट्र और संस्कृति संबंधी ऐतिहासिक साहित्यसर्जनमें सदा व्यस्त रहनेवाले विद्वान प्रोफेसर(डॉक्टर) विशाल आर. जोषीने अपना अमूल्य समय देकर पुस्तकको पढकर 'प्रसाद' रुप प्रस्तावना भेजी है। इस कारण से मैं उनका अत्यंत ऋणी हूं।

इस पुस्तक में रही कहानियों को कुशल चित्रकार श्री. **अंकुरभाई सूचक** ने सुंदर चित्रों द्वारा परिभाषित करके विशेष रसप्रद बनाकर बहुत ही सहयोग दिया है। तथा सतत मेरे साथ रहकर मुझे सभी तरह से अनुकूल बने हुए मेरे शिष्यों मुनि **देवर्षिवल्लभविजयजी**, मुनि **ह्रींवल्लभविजयजी**, मुनि **श्रींवल्लभविजयजी** तथा मुनि **मोक्षवल्लभविजयजी** के उपकारों को कैसे भूल सकता हूँ!

आखिरमें यह महातीर्थ के प्रति तीव्र भावना-भक्ति-सम्मान के कारण यह पुस्तक में जिनाज्ञा के विरुद्ध कुछ लिखा गया हो तो अन्तःकरणपूर्वक क्षमा चाहता हूँ।

यह महातीर्थ चिंतामणि रत्न है। इसका प्रभाव अकल्पनीय और अवर्णनीय है, हर कोई यह महातीर्थ की प्रीति-भक्ति के प्रभाव से इस जन्म में शांति-समाधि, अगले जन्म में सद्गति और परंपरा में सिद्धगति को पायें यही मंगलकामना।

- हेमवल्लभविजय

वि.सं 2076
द्वि. अश्विन वद बारस
(श्री नेमिनाथ च्यवन कल्याणक)

INDEX

विषयदर्शन

१)	गिरनारकी महिमा न्यारी....	७
२)	यह विश्व की सब से प्राचीन प्रतिमा कौनसी	१०
३)	सत्त्वशाली रत्नसार श्रावक	१६
४)	पृथ्वी के तिलक समान 'कर्ण विहार प्रासाद'	२४
५)	जाप जपें पाप कटें (गोमेध यक्ष)	३०
६)	शासन रखवाली माँ अम्बिका देवी	३४
७)	जादुई गजपद कुंड	४२
८)	सिद्धिदायक रैवतगिरि	४६
९)	राजर्षि भीमसेन	५०
१०)	एक था तापस (वशिष्ठ मुनि)	५८
११)	रंक बना राजा (अशोकचंद्र)	६२
१२)	सौभाग्य मंजरी	६६
१३)	जीवंत और जाग्रत देव	७०
१४)	बुद्धि के बेताज बादशाह (वस्तुपाल)	७६
१५)	तीर्थभक्ति के लिए त्याग (पेथड मंत्री)	८४
१६)	जीत तो हंमेशा सत्यकी ही होती है...	९२
१७)	मंत्र का प्रभाव	९६
१८)	अन्य स्थान पर रहकर ध्यावै रैवतगिरि	१०२
१९)	गिरनार की अजब-गजब की बाते	१०६
२०)	गिरनार के अर्वाचीन उद्धारकों की झाँकी	११०

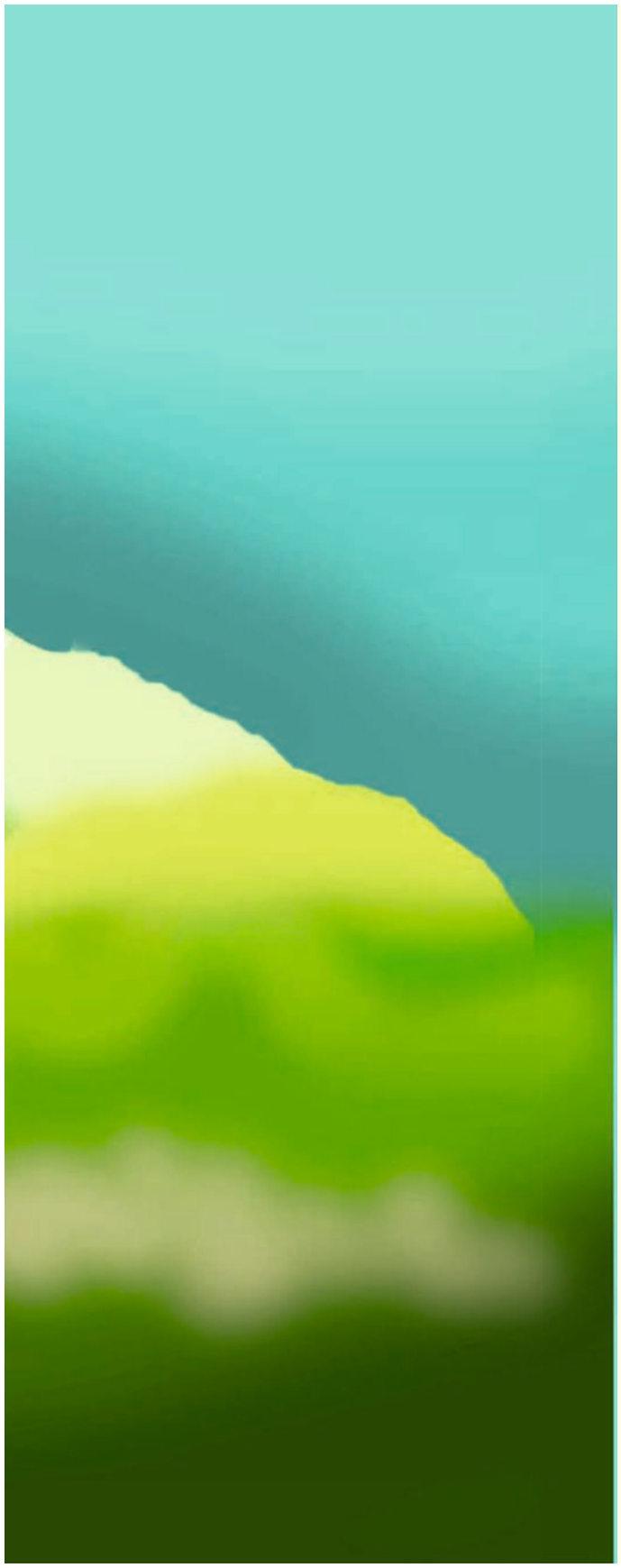

गिरनारकी महिमा न्यारी.... १

- गिरनार भी शत्रुंजयगिरि की तरह प्रायः शाश्वत है । पाँचवें आरे के अंत में जब शत्रुंजय की ऊँचाई घटकर सात हाथ होगी तब गिरनार कीं ऊँचाई ४०० हाथ रहेगी ।
- रैवतगिरि (गिरनार) शत्रुंजयगिरि का पाँचवाँ शिखर होने के कारण वह पाँचवाँ ज्ञान अर्थात् केवलज्ञान दिलानेवाला है ।
- गिरनार पर अनंत तीर्थंकर आये हुए हैं और यहाँ पर महासिद्धि अर्थात् मोक्षपद पाया है । दूसरे अनंत तीर्थंकरो के दीक्षा, केवलज्ञान और मोक्षकल्याणक यहाँ हो चूके हैं । वैसे ही अनेक मुनि भी मोक्षपद प्राप्त कर चूके है । और भविष्य में प्राप्त करेंगे ।
- गत चौबीशी में से १० तीर्थंकरका मोक्षकल्याणक गिरनार से हुआ था ।
- वर्तमान-चौबीशी के बाईसवें तीर्थंकर बालब्रह्मचारी श्री नेमिनाथ भगवान के दीक्षा-केवलज्ञान और मोक्षकल्याणक गिरनार पर हुए है ।
- आगामी चौबीशी में होनेवाले श्री पद्मनाभ आदि २४ तीर्थंकरो का मोक्ष गिरनारसे होनेवाला है । और अंतिम दो तीर्थंकर के दीक्षा-केवलज्ञान कल्याणक भी यहाँ से होनेवाले है ।
- स्वर्गलोक, पाताललोक और मृत्युलोक के चैत्यों में सुर, असुर और राजा गिरनार के आकार को हमेशा पूजते हैं ।
- गिरनार की भक्ति करनेवालों को इस भव में और परभव में दरिद्रता नहीं आती ।
- गिरनार महातीर्थ में निवास करनेवाले तिर्यंचों (जानवर) को भी आठ भव के अंदर सिद्धिपद प्राप्त होता है ।
- गिरनार महातीर्थ पुण्य का ढेर है ।
- गिरनार महातीर्थ की सेवा से कई पुण्यात्मा इस लोक में सर्व संपत्ति और परलोक में परमपद को प्राप्त करते हैं ।
- गिरनार महातीर्थ की सेवा से पापी जीव सर्वकर्मों का संक्षेप करके अव्यक्त और अक्षय ऐसे शिवपद को प्राप्त करते हैं ।

- गिरनार महातीर्थ की मिट्टी को गुरुगम के योग से तेल और घी के साथ मिलाकर अग्नि में गरम करने से सुवर्णमय बन जाती है।
- गिरनार महातीर्थ में हर एक शिखर के ऊपर जल, स्थल और आकाश में घूमनेवाले जो जीव हैं, वे सब तीन भव में मोक्ष प्राप्त करते हैं।
- जो जीव गिरनार महातीर्थ पर आकर अपना न्यायोपार्जित धन सुपात्रदान द्वारा सद्व्यय करते हैं, उनको अनेक भवों तक सर्व संपत्ति प्राप्त होती है।
- जो जीव गिरनार तीर्थ पर आकर भाव से जिनप्रतिमाजी की पूजा-अर्चना करते हैं, वे शीघ्र ही मोक्षपद प्राप्त करते हैं, घर में बैठकर भी शुद्धभाव से अगर गिरनारजी का ध्यान करें तो भी चौथे भव में मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

- गिरनार महातीर्थ में 'मोक्षलक्ष्मी' के मुखरूप रहे हुए गजपद नामक कुंड के पवित्र जल के स्पर्श से ही अनेक जन्मों के पापो का नाश होता है।
- गिरनार महातीर्थ के गजपदकुंड का 'जलपान' करने से काम, श्वास, अरूचि, ग्लानि, प्रसुति और उदर के बाहरी रोग भी अंतर के कर्ममल की पीडा की तरह नाश होते हैं।
- जगत में कोई भी ऐसी औषधियाँ, सुवर्णादि सिद्धियाँ और रसकूपिकाएँ नहीं, जो इस गिरनार तीर्थ पर न मिले।
- आकाश में उड़ते पंछीओ की छाया भी अगर इस गिरनार पर्वत को छूती है तो उनकी भी दुर्गति का नाश होता है।
- सहसावन में नेमिनाथ भगवान के दीक्षा और केवलज्ञान कल्याणक हुए थे।
- सहसावन में (लक्षारामवन) श्री रहनेमिजी और साध्वीजी राजीमतिश्रीजी आदि मोक्षपद प्राप्त कर चूके हैं।
- सहसावन में अभी श्री नेमिनाथ परमात्मा की प्राचीन प्रतिमायुक्त अद्भुत समवसरण मंदिर है।
- गिरनार महातीर्थ की पहली टुंक पर अभी भी चौदह-चौदह बेमिसाल जिनालय पर्वत के ऊपर तिलक समान शोभित हो रहे हैं।
- भारतभर में मूलनायक के रूप में तीर्थंकर नहीं होते हुए भी सामान्य केवली सिद्धात्मा श्री रहनेमिजी का एकमात्र जिनालय गिरनार महातीर्थ में है।
- जब तक गिरनार महातीर्थ की यात्रा नहीं की हो, तब तक ही जीवों के सर्व दुःख, सर्व पाप और संसार का घोर भ्रमण रहता है।

प्रश्न :

प्र. १ अंतिम चौबीशी के कितने तीर्थंकर गिरनार से मोक्ष गये थे ?

प्र. २ गिरनार महातीर्थ किसका ढेर है ?

प्र. ३ घरबैठे गिरनार का ध्यान करनेवाले कितने भव बाद मोक्षपद पा सकते है ?

गिरनारकी एसी न्यारी बातें जानकर स्वयं और दूसरोंको यह तीर्थ के प्रति आदरभाव जगे इसलिए तन-मन-धनसे प्रेरणा करें।

यह विश्व की सब से प्राचीन प्रतिमा कौनसी २

असंख्य सालों पहले की बात है । गत चौबीसी के 'सागर' नामक तीसरे तीर्थंकर परमात्मा का दर्शन करके पूरी उज्जयिनी नगरी में हर्ष छाया हुआ था । केवलज्ञानी परमात्मा विहार करते हुए एक बार उज्जयिनी नगरी के बाहर बगीचे में पधारे। वहाँ करोडों देवों ने आकर प्रभु का भव्य समवसरण रचा । पहला गढ़ चांदी का, दूसरा सुवर्ण का और तीसरा रत्न का.. देखने पर जैसे देव विमान से भी अधिक मनोहर लगता था ।

भगवान के पास जाना किसको अच्छा नहीं लगता ? भगवान पधारें हैं यह समाचार सुनकर छोटे-बड़े हर कोई भगवान के दर्शन के लिए चले । हजारों देवी-देवता, नर-नारि, पशु-पंछि सब एक ध्यान से प्रभु की मीठी-मधुर वाणी सुन रहे हैं । कोई भी उठने का नाम नहीं ले रहा । किसी को भी समवसरण छोड़कर जाने की इच्छा नहीं होती है । भगवान ने भव्य जीवों को मोक्ष मार्ग दिखानेवाला प्रवचन दिया ।

प्रवचन पूर्ण होने के बाद प्रवचन सुनने आये हुए नगर के राजा 'नरवाहन' प्रभु को पूछते है कि, ''हे प्रभु ! मैं मोक्ष को कब प्राप्त करूँगा ? इस संसार से मेरी मुक्ति कब होगी ?'' भगवान ने कहा , ''राजन ! आनेवाली चौबीसी के बाईसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ परमात्मा का तीर्थ तेरे लिए सही में तारक तीर्थ बनेगा । संसार सागर से जो तार दे वो तीर्थ ! श्री नेमिनाथ प्रभु के शासन में तुम्हें केवल ज्ञान होगा । तुम्हारा निर्वाण होगा और तुम इस संसार से छूटकर मोक्ष के सुख को पाओगे !''

अपना भविष्य जानकर नरवाहन राजा को संसार में रहना अच्छा नहीं लगता था। वह अब संसार से थक चुके थे। उनको जल्द से जल्द मोक्ष प्राप्त करना था। इसीलिए नरवाहन राजा ने भगवान के पास दीक्षा ली । संयम धर्म की उत्तम आराधना करते हुए नरवाहन राजा की मृत्यु हुई । मरकर वे पांचवें देवलोक में दस सागरोपम वर्षों की आयु वाले इंद्र हुए।

अष्टमहाप्रातिहार्य से सुशोभित सागर प्रभु भरत क्षेत्र की धरती को पावन करते हुए एक बार चम्पापुरी नगरी के बगीचे में पधारें। समवसरण में बैठकर परमात्मा अपनी मीठी- मधुर वाणी से सिद्धशिला और सिद्ध के जीवों का वर्णन कर रहे थे।

''४५ लाख योजन की, उलटे छाते के आकारवाली, श्वेत रंग की सिद्धशिला है । वह चौदह राज लोक के ऊपरी भाग में आई है । वह सिद्धशिला मध्य में आठ योजन चौड़ी है और दोनों

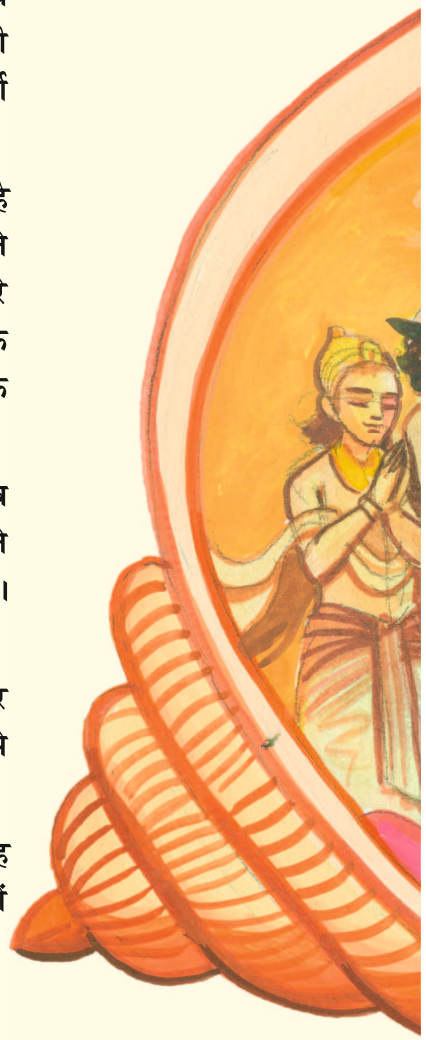

ओर से पतली होते हुए मक्खी की पंख जैसी अत्यंत पतली होती है। मोती, शंख या स्फटिक के समान सिद्धशिला अति निर्मल और अति सुंदर है। वह सिद्धशिला पर अनंत सिद्ध आत्मा आठ कर्म का नाश करके कभी भी खत्म न हो वैसे अनंत सुख का अनुभव करते हैं। वह सुख का स्वरूप मात्र जिनेश्वर परमात्मा या केवली भगवंत ही जान सकते है।

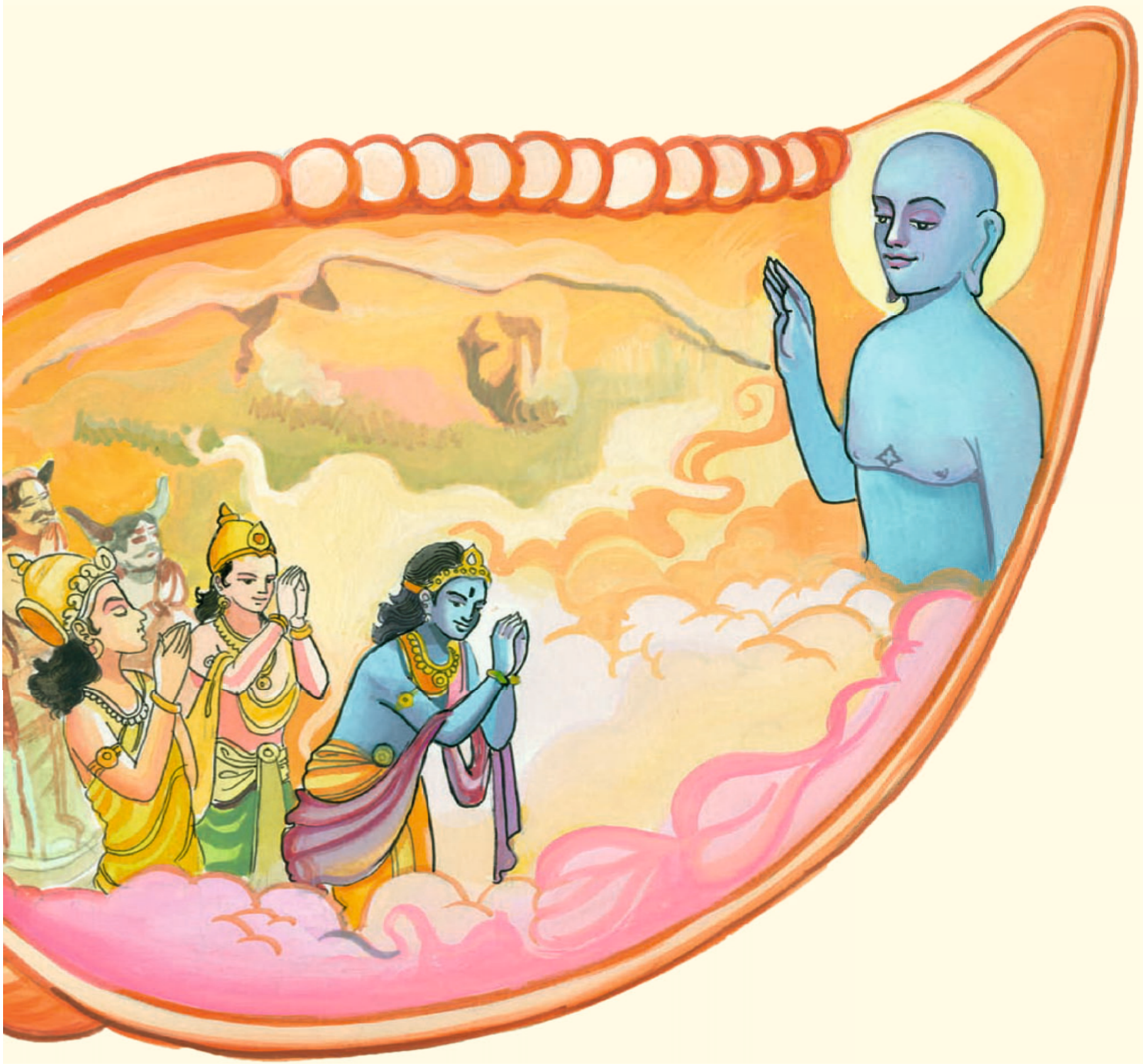

तब प्रवचन सुनकर पांचवें देवलोक के इंद्र यानी कि नरवाहन राजा का जीव सर्वज्ञ भगवंत को नमन करके पूछता है, ''भगवन ! में इस संसार की कैद से कब मुक्त हो पाऊँगा ? आप ने जो कहा वह मोक्षसुख मुझे भी मिलेगा कि नहीं ? और सब भगवंतों की तरह मुझे भी मोक्ष प्राप्त करना है । कहिए भगवन् मेरा मोक्ष कब होगा ?''

भगवान तो बहुत ज्ञानी थे । भगवान तो इस लोक का जान सके, दूर का भी देख सके । अरे ! मोक्ष तक का सब कुछ भी भगवान देख सके । भगवानने तो अपने ज्ञान से देखा कि यह जीव कब मोक्ष की प्राप्ति करेगा ? और ब्रह्मेन्द्र को कहा, ''सुनो ! ब्रह्मदेव ! आप तो बहुत पुण्य शाली हैं, यकीनन आप मोक्ष को प्राप्त

करोगे मगर इस जन्म में तो आपका मोक्ष नहीं होगा । कुछ समय के बाद (आने वाली चौबीसी में) आदिनाथ प्रभु से लेकर जो चौबीस भगवान होंगे उसमें बाईसवें श्री नेमिनाथ होंगे । वह बाल ब्रह्मचारी प्रभु के आप 'वरदत्त' नाम के प्रथम गणधर बनेंगे । भव्य जीवों को बोध कराकर, सब कर्मों का नाश करेंगे मतलब कि श्री रैवताचल महातीर्थ से आप मोक्ष को प्राप्त करोगे ।

सागर भगवान की बात सुनकर ब्रह्मेन्द्र के आनंद की सीमा न रही । खुशी से वह झूमने लगा । अब तो बस उसे प्रभु नेमिनाथ की ही याद आती रही ।

''अहो ! मुझ पर श्री नेमिनाथ प्रभु का बहुत ही उपकार होगा क्योंकि श्री नेमिनाथ प्रभु मुझे दीक्षा देंगे। मैं उनका गणधर बनूँगा । इसीलिए मैं अभी से ही श्री नेमिनाथ भगवान की श्रेष्ठ रत्नों से मूर्ति बनाकर उनकी बहुत ही हृदय से भक्ति आराधना करके अपने कर्मों का नाश करूँ'' ऐसे भाव के साथ ब्रह्मेन्द्र ने जिसका तेज बारह योजन तक फैलता हो ऐसी श्याम वर्ण की प्रभु की वज्र की प्रतिमा बनवा ली । दस सागरोपम तक हर रोज उस प्रतिमा की संगीत, नृत्य-नाटक इत्यादि से तीन काल (सुबह, दोपहर, शाम) भक्ति कर रहा है । इस तरह श्री नेमिनाथ प्रभु की उत्तम शुभ-भाव से भक्ति करते हुए अपनी आयु को पूर्ण करता है । वहाँ से अनेक छोटे मोटे जन्म लेकर श्री नेमिनाथ प्रभु के समय 'पुण्यसार' नामक राजा बनता है ।

समवसरण में नेमि प्रभु कहते हैं, ''यह पुण्यसार राजा गत जन्म में खुद ही बनवाई मेरी मूर्ति की दस सागरोपम तक की हुई भक्ति के प्रभाव से मेरे वरदत्त नामक पहले गणधर बनेंगे और मोक्ष के शाश्वत सुख को पाएगें ।''

समवसरण में उपदेश के समय पर श्री नेमिनाथ प्रभु के ऐसे मधुर वचन सुनकर उस वक्त के पांचवें देवलोक के इंद्र उठकर परमात्मा को नमस्कार करते हुए बताते हैं कि, ''है भगवंत ! आप की मूर्ति को मैं आज भी अपने देवलोक में पूजता हूँ और मुझ से पहले हुए सभी इंद्र ने भी उनकी भक्ति की हैं । आज आपके कहने से ही प्रतिमा अशाश्वत है वह जाना । बाकी हम सब तो उस प्रतिमा को शाश्वत ही मानते थे ।'' तब प्रभु ने कहा, ''हे इंद्र ! तिर्च्छालोक में हो वैसी देवलोक में अशाश्वत प्रतिमा होती नहीं इसलिए आप उस प्रतिमा को यहाँ ले आओ''

प्रभु की आज्ञा से इंद्र जल्दी से वह मूर्ति को ले आया। कृष्ण महाराजा ने आनंद से पूजा करने के लिए मूर्ति प्रभु से ली । सुर, असुर और राजा श्री नेमिनाथ प्रभु को नमन करके उनके मुख से श्री रैवताचल का महत्व सुनने लगे।

प्रभु कहते है कि, ''यह रैवतगिरि श्री शत्रुंजय गिरिराज का अति सुंदर पांचवां शिखर है। जो कल्पवृक्ष इत्यादि उत्तम वृक्षों से घिरा हुआ है। वह महातीर्थ में बहते झरनों के पानी के स्पर्श से भी भव्य प्राणियों के पापों का नाश होता है।

सर्व तीर्थों की यात्रा का फल यह गिरनार के दर्शन और स्पर्श से मिलता है।

इस गिरनार पर आकर जो अपने धन का दान करते हैं उन्हें जन्मो जन्म संपत्ति मिलती है।

जो प्राणी यहाँ भाव से जिन प्रतिमा की पूजा करते है वह मोक्ष सुख को पाते है। तो मानव सुख की तो बात ही क्या करें ?

जो जीव यहाँ सुसाधु (सुपात्र साधु) को शुद्ध अन्न, वस्त्र और पात्र का दान करता है उसका मोक्ष जल्दी से होता है।

इस रैवतगिरि पर के वृक्ष और मोर इत्यादि पशु-पंछि भी धन्य और पुण्यशाली है, तो मनुष्य की तो बात ही क्या करें ?

देवता, ऋषि, सिद्ध पुरुष, गंधर्व, किन्नर इत्यादि हमेशा इस तीर्थ की सेवा के लिए आते हैं।

गिरनार पर गजपद जैसे कुंडों के अलग अलग प्रभाव हैं। जिसमें छह महीने तक स्नान करने से जीवों के रोगों का नाश होता है।''

इस तरह बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथ प्रभु के मुख से श्री गिरनार गिरिवर की महिमा सुनकर सब आनंदित होते हैं। उस समय श्री कृष्ण महाराजा पूछते है, ''हे परम करुणा सागर ! जो प्रतिमा मेरे महल में रखनी है, वह वहाँ कितने समय तक रहेगी ? और फिर बाद में कहाँ कहाँ पूजी जायेगी ?

प्रभु कहते है कि, ''जब तक द्वारिकापुरी रहेगी तब तक यह प्रतिमा आपके मंदिरमें पूजी जाएगी। तत्पश्चात् काँचनगिरि पर देवता उसकी पूजा करेंगे। मेरे मोक्ष प्रस्थान के दो हजार साल के बाद अम्बिका देवी की आज्ञा से उत्तम भाववाला 'रत्नसार' नाम का एक वणिक एक गुफा में से वह प्रतिमा बाहर लायेगा और रैवतगिरि पर जिनालय में स्थापित करके उसकी पूजा करेगा। बाद में एक लाख तीन हजार दोसो पचास साल तक यह प्रतिमा वहाँ रहेगी और बाद में वहाँ से अदृश्य हो जाएगी। उस वक्त 'दुषम दुषम' नाम के छठवें आरे की शुरुआत होते ही अधिष्ठात्री अम्बिका देवी उस प्रतिमा को पाताल लोक में पूजेगी। दूसरे देवता भी उसकी पूजा करेंगे।''

वर्तमान काल में श्री रैवतगिरि पर सुशोभित श्री नेमिनाथ भगवान का अद्भुत इतिहास ऐसा बताता है कि यह प्रतिमा गत चौबीसी के तीसरे 'सागर' तीर्थंकर परमात्मा के काल में पांचवें ब्रह्मलोक देवलोक के

ब्रह्मेन्द्र ने बनाई होने के कारण भरतक्षेत्र में वर्तमान में सब से पुरानी प्रतिमा के तौर पर यह प्रतिमा गिनी जाती है।

गत चौबीशी के तीसरे सागर तीर्थंकर के समय में बनी हुई और इस चौबीशी के चौबीशवें महावीर प्रभु के शासन में गिरनार पर आज भी बिराजित श्री नेमिनाथ प्रभु की प्रतिमा २० कोड़ाकोड़ी सागरोपम वर्ष में थोड़े ही कम वर्ष यानी कि अरबों के अरबों साल पुरानी है।

यह प्रतिमा वर्तमान स्थान पर प्रतिष्ठित होने का समय-

श्री नेमिनाथ प्रभु मोक्ष में जाने के बाद के २००० साल के बाद यह प्रतिमाजी प्रतिष्ठित होने के कारण करीबन ८४,७८४ साल से यह प्रतिमा इसी स्थान पर विराजमान है।

❋

प्रश्नो :

प्र. १ यह भरत क्षेत्र की सबसे प्राचीन प्रतिमा कौन सी है ? वह किसने और कब बनाई थी ?

प्र. २ अशाश्वत प्रतिमा कहां नहीं होती है ?

प्र. ३ श्री गिरनार महातीर्थ पर श्री नेमिनाथ प्रभु की प्रतिमा किसने स्थापित की है ?

कैसा गजब इतिहास है यह गिरनार के नेमिनाथ दादा का ! अरे ! हमने बहुत पुण्य किये हो न ! तो ही ऐसे दादा के दर्शन और यात्रा करने को मिलती है !

भगवान की वाणी सुनकर दीक्षा लेकर नरवाहन राजा ने अपना जन्म कैसे सुधार लिया ! देव बनकर उन्होंने नेमिनाथ भगवान की मूर्ति बनवाई और बहुत ही भक्ति करके वह मोक्ष को पा गये !

अब हम हर साल कम से कम एकबार तो दादा के दर्शन-पूजा करने के लिए जाएंगे न ? हम भी ऐसी भक्ति करेंगे न ?

सत्त्वशाली रत्नसार श्रावक ३

भरतक्षेत्र की धन्य धरा पर वर्तमान चौबीसी के बाईसवें तीर्थंकर बाल ब्रह्मचारी श्रीनेमिनाथ परमात्मा के मोक्ष में जाने के बाद दो हजार साल जितना समय गुजर गया था । उस समय सोरठ देश में 'काम्पिल्य' नाम का नगर था । धनवानों से शोभायमान नगरी में 'रत्नसार' नाम का एक धनवान श्रावक रहता था । अचानक बारह साल तक के अति कठिन दुर्भिक्ष का समय आया । पशुओं तो ठीक मानव भी पानी के बगैर मरने लगे । उस वक्त जीवन जीने के लिए और धन कमाने के लिए रत्न श्रावक एक देश से दूसरे देश में घूमता हुआ काश्मीर देश के कोई नगर में जाकर रहने लगा ।

काश्मीर देश में आकर अचानक रत्न श्रावक को किस्मत का साथ मिला । वह दिन-प्रतिदिन बहुत ही धन कमाने लगा । गत जन्म में किये हुए कोई पुण्यानुबंधी पुण्यके उदय से मिली हुई लक्ष्मी को अच्छे कार्यो में खर्च करने की उसे इच्छा होने लगी । धन का संग्रह करने के बदले उसे धर्म के कार्यो में सदुपयोग करने लगा । श्रीअरिहंत परमात्मा की पूजा-भक्ति करने श्रीआनंदसूरीश्वरजी महाराज की निश्रा में श्रीसिद्धाचल, गिरनार इत्यादि महातीर्थों का स्पर्श करने के लिए पैदल संघयात्रा की शुरुआत की ।

गांव-गांव, देव-गुरु और धार्मिक भक्ति तथा नए नए जिनालय बनाते हुए श्रीआनंदसूरि गुरु की अपार भक्ति करते हुए संघ आगे बढ़ रहा था । पहले किये हुए कोई बूरे कर्मो के कारण मार्ग में आते उपसर्गों और विघ्नों के विनाश करने श्रीनेमिनाथ भगवान की अधिष्ठात्री श्रीअम्बिका देवी का ध्यान करते हुए रत्नसार संघ को आगे बढ़ा रहा है । आनंद के साथ श्रीसंघ तीर्थाधिराज श्री सिध्धगिरि की शीतल छांव में आया । बहुत ही उल्लास के साथ तीर्थाधिराज की भक्ति की । तत्पश्चात् श्रीसंघ रैवतगिरि महातीर्थ के आनंददायी वातावरण में आया । पूर्वमें हुए अनंत तीर्थंकरों की भूमि को स्पर्श करके अपनी आत्मा को धन्य समझने लगे ।

वर्तमान चौबीसी के बाईसवें तीर्थंकर बाल ब्रह्मचारी श्रीनेमिनाथ प्रभु की पावन प्रतिमा की संघ ने भाव से पूजा की । रत्नसार श्रावक संघ के साथ मुख्य शिखर की

ओर आगे बढ़ रहा था । उस वक्त रास्ते में जाते हुए सभी ने छत्रशिलाको नीचे से कंपते हुए देखा । रत्नसार ने तुरंत ही अवधिज्ञानी गुरु श्रीआनंदसूरि म.सा. को ऐसा होने का कारण पूछा । तब ज्ञान से देखकर गुरु भगवंत बताते है कि, ''हे रत्नसार ! तुमसे ही यह रैवतगिरि तीर्थ का भंग होगा और तुमसे ही यह तीर्थ का उद्धार भी होगा ।''

रत्नसार श्रावक खुद महातीर्थ के भंग का निमित्त बननेवाला था इस बात से वह अत्यंत दुखी हो जाता है । प्रभु की प्रतिमा को दूर से ही नमन करके वह वापस लौट रहा था तब गुरु श्रीआनंदसूरि बताते हैं कि, ''रत्न ! इस तीर्थ का भंग तुमसे होने का अर्थ तुम्हारे संघ के श्रावकों द्वारा होगा । तुमसे तो यह महान तीर्थ का अधिक उद्धार होगा, इसीलिए तुम खेद न करना !'' गुरु भगवंत के ऐसे उत्साहजनक वचनों को सुनकर रत्न श्रावक संघ के साथ रैवतगिरि के मुख्य शिखर में प्रवेश करता है । आनंदित हुए सभी यात्रियों गजेंद्रपद कुंड में स्नान करने लगे । रत्न श्रावक भी इस दिव्य जल से स्नान करता है । उत्तम वस्त्र पहनकर गजपद कुंड के पानी को कुम्भ में भरकर जैन धर्म में श्रद्धावान ऐसे विमलराजा द्वारा श्रीरैवतगिरि पर स्थापित की गई लेप की हुई श्रीनेमिनाथ प्रभु की मूर्ति के पास जाता है ।

सभी यात्रि अति प्रसन्न होकर गजपद कुंड के शुद्ध जल के कुम्भ भरकर लेपमयी प्रतिमा का प्रक्षालन करने लगे । उस वक्त अनेक बार पुजारी द्वारा रोकने पर भी वे माने नहीं । ज्यादा आनंदित होकर अतिशय जल से प्रक्षालन करने से पानी के निरंतर प्रवाह के कारण लेपमयी प्रतिमा का लेप पिघलने लगा । पल भर में ही प्रतिमा गीली मिट्टी के टीले जैसी बन गई । यह दृश्य देखकर रत्न श्रावक को बहुत ही आघात लगा । वह दुखी होकर बेहोश हो गया । सभी लोग शोक करने लगे । चारों दिशाओं में हाहाकार मच गया । सब दुखी हो गये । संघपति रत्न श्रावक पर शीतल जल के छिड़काव से वह फिर से होश में आया ।

स्वस्थ होने के बाद प्रभुजी की प्रतिमा को मिट्टी के रूप में देखकर रत्न श्रावक दुखी हृदय से विलाप करने लगा कि, ''इस महातीर्थ का नाश करने वाला मैं पापी ! मुझे धिक्कार है ! अज्ञानी ऐसे मेरे यात्रियों को भी धिक्कार है ! अरे ये क्या हो गया ? उल्लास के साथ इस महातीर्थ के दर्शन करने आया था और तीर्थ की भक्ति के बदले तीर्थनाश का निमित्त बन गया ।

अब मैं दान-शील-तप-भावना कौन से कार्य करूँ ? जिसके प्रभाव से मेरा यह पाप कर्म धूल जाएं ! नहीं ! नहीं ! अब तो अनेक अच्छे कार्य करने पर भी मेरा यह पाप कर्म धुलेगा नहीं ऐसा लगता है । अब खामखा चिंता क्यूँ करनी ? बस ! अब तो नेमिनाथ परमात्मा का ही शरण मुझे मिलो !'' ऐसे दृढ़ संकल्प के

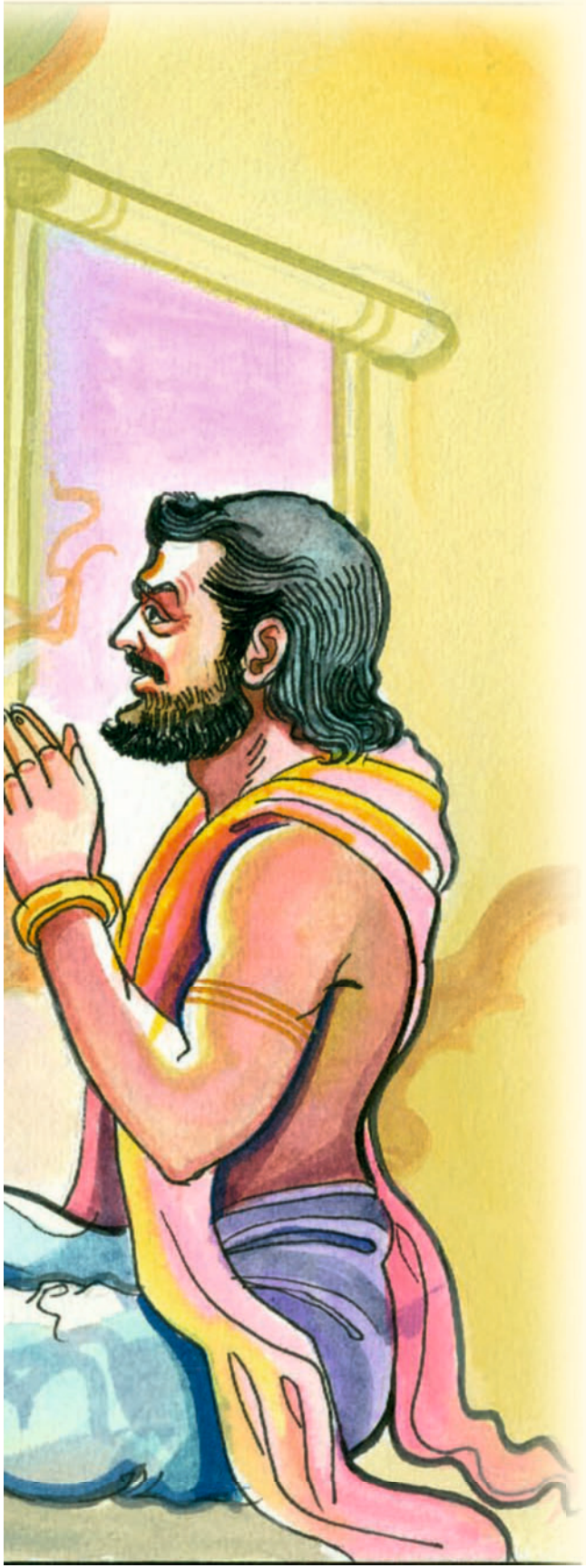

साथ रत्न श्रावक चारों आहार पानी का त्याग कर वहीं पर ही प्रभु के चरणों में आसन लगाकर बैठ गया ।

रत्न श्रावक के धैर्य और सत्त्व की परीक्षा की शुरुआत होने लगी । अनेक आफतों को सहकर एक महीना पूरे होते ही शासन के अधिष्ठात्री श्रीअम्बिका देवी ने रत्नसार को दर्शन दिए । तप धर्म का प्रभाव जानकर प्रसन्नता के साथ रत्न श्रावक ने अम्बिका देवी को नमस्कार किया । अम्बिका देवी उसे कहती है कि, "हे वत्स ! तुम धन्य हो ! तुम दुखी क्यों होते हो ? तुमने खुद तीर्थयात्रा करने के साथ अनेक जीवों को संघ के साथ यात्रा करवाई है । तुमने अपना मनुष्य जन्म सार्थक किया है । यह प्रतिमा का पुराना लेप नाश होने पर नया लेप होता ही रहता है । जैसे पुराने वस्त्र निकालकर नए वस्त्र पहने जाते हैं वैसे ही तुम भी इस प्रतिमा को नया लेप करवाकर फिर से इसकी प्रतिष्ठा करवाओ !" अम्बिका देवी के इस वचनों को सुनकर रत्न कहता है, "माँ ! आपकी आज्ञा से यह मूर्ति को लेप करवाकर फिर से स्थापना करूँ तो भविष्य में फिर से मेरी ही तरह कोई अज्ञानी आकर इस बिम्ब का नाश करनेवाला बनेगा । इसलिए हे मैया ! यदि आप मेरे तप से वास्तव में प्रसन्न हुए हों तो मुझे ऐसी कोई मूर्ति दीजिए कि जिसका भविष्य में किसीसे भी नाश न हो सकें और भक्तजन भाव से जलाभिषेक इत्यादि करके अपनी इच्छा को पूर्ण कर सकें ।"

रत्न श्रावक के इन वचनों को सुने न सुने इतने में अम्बिका देवी अदृश्य हो गई । देवी को अदृश्य हुई देख रत्न कुछ समय तक चिंतित हो गया । परंतु तुरंत ही स्वस्थ होकर रत्न फिर से अम्बिका देवी के ध्यान में बैठ गया । उसकी कसौटी करने के लिए अम्बिका देवी ने बहुत ही उपसर्ग किये मगर रत्न ध्यान में से बिल्कुल ही हिला नहीं तब गर्जना करते सिंह पर बैठकर चारों दिशाओं में प्रकाश फैलाती

अम्बिका देवी प्रकट हुई । रत्न को कहने लगी कि, "हे वत्स ! तुम्हारे सत्त्व से मैं संतुष्ट हुई हूँ । इसलिए अपने मन की जो भी इच्छा हों वो मुझ से मांग लो ।" देवी के वचन सुनकर रत्न श्रावक कहने लगा कि, "हे माँ ! यह महातीर्थ के उद्धार के सिवा और कुछ मेरी इच्छा नहीं है । आप मुझे श्री नेमिनाथ प्रभु की ऐसी वज्र समान मूर्ति दीजिए कि जो यहाँ हमेशा रहें । जिस को पूजकर मैं अपना जन्म सफल करूँ और अन्य जीवों को भी आनंद हो ।"

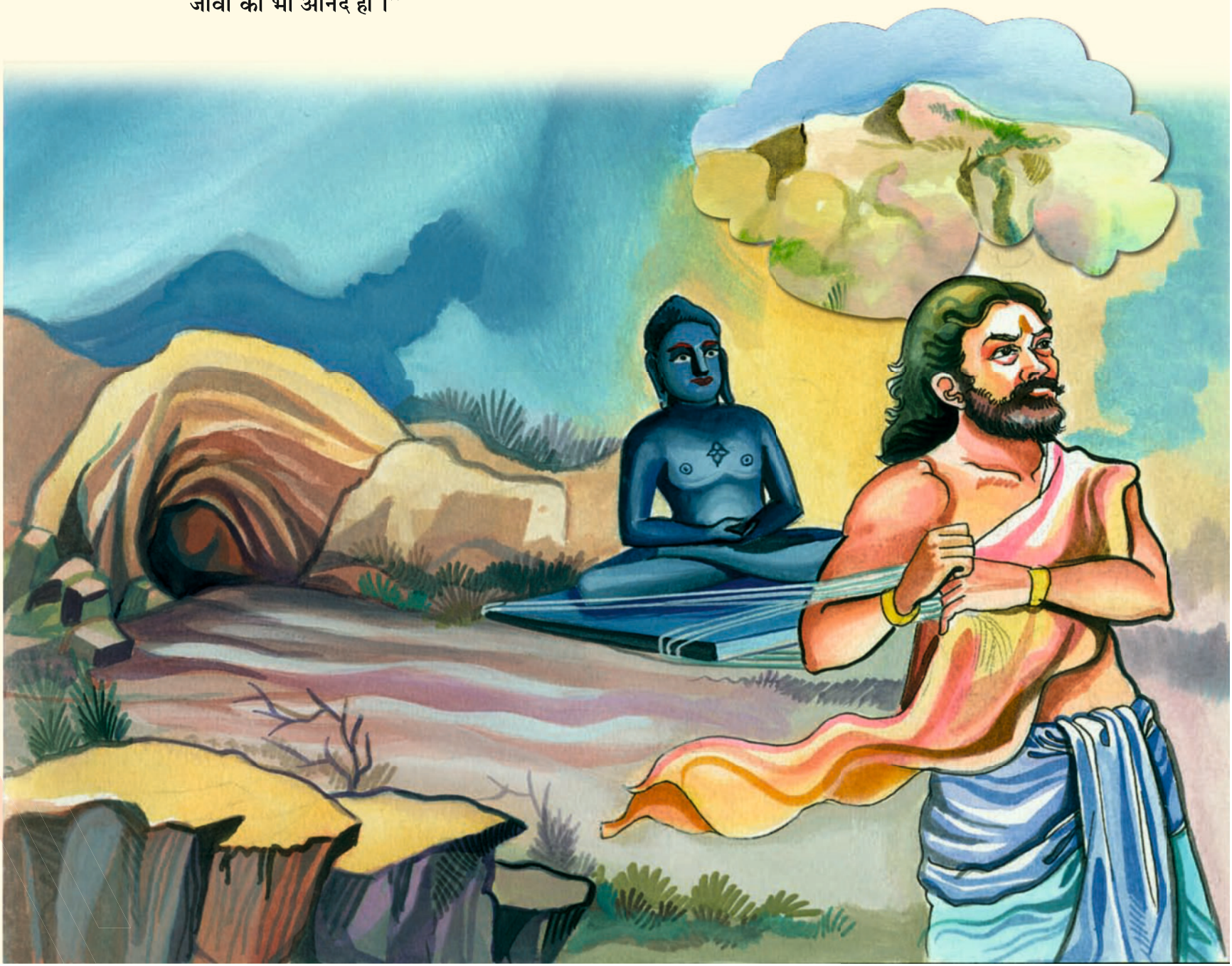

तब अम्बिका देवी ने कहा कि, ''तीर्थंकर भगवंत ने तुम्हारे हाथ से तीर्थ का उद्धार होगा ऐसा कहा है इसलिए तुम मेरे साथ चलो ! मेरे पीछे पीछे इधर-उधर देखे बिना आओ !'' रत्न श्रावक देवी के पीछे पीछे जाने लगा । देवी पूर्व दिशा में आये हिमाद्रि पर्वत के कंचन शिखर पर गई । वहाँ सुवर्ण नामक गुफा के पास आकर 'सिद्धि विनायक' नामक अधिष्ठाता देव को गुफा के द्वार खोलने की बिनती की । देवी के आदेश से वह देव ने तुरंत ही द्वार खोले । तब अंदर से अनूठा प्रकाश प्रकट हुआ । आगे अम्बिका देवी और पीछे रत्न श्रावक यह दिव्य गुफा में प्रवेश करते हैं । विविध मणि, रत्न इत्यादि की मूर्तियां दिखाते हुए अम्बिका देवी ने कहा, ''हे रत्न ! यह सब सौधर्म नाम के इंद्र ने बनाई है । यह धरणेन्द्र ने पद्मरागमणि में से बनाई हुई मूर्तियाँ है । यह भरत महाराजा, आदित्य यशा, बाहुबली इत्यादि ने रत्न, माणिक, इत्यादि से बनाई हुई, लंबे अरसे तक पूजा-भक्ति की हुई मूर्तियाँ है । यह ब्रह्मेन्द्र ने रत्न-मणि सार से बनाई हुई असंख्य काल तक ब्रह्मलोक में पूजित हुई मूर्ति हैं । यह राम और कृष्ण ने बनाई हुई मूर्तियां है । इस मूर्तियों में से तुम्हें जो पसंद हो वही ले लो !''

देवाधिदेव परमात्मा की ऐसी दिव्य प्रतिमाओं का दर्शन करके रत्न श्रावक खुश हो गया । उसकी आँखों और हृदय में आनंद और आश्चर्य समा नहीं रहा था । आज उसके जीवन का धन्य दिन था ! एक प्रतिमा को देखें और दूसरी को भूल जाता था । कौन सी प्रतिमा पसंद करें यह निर्णय करना उसके लिए कठिन हो गया था । आखिर वह मणिरत्नवाली मूर्ति पसंद करता है । तब देवी ने कहा, ''हे वत्स ! भविष्य में लोग लोभी होंगे और यह बिम्ब की अवज्ञा करेंगे इसीलिए भावी का विचार करके तुम ब्रह्मेन्द्र ने रत्न-माणिक के सार से बनाई हुई, बिजली, चक्रवात, अग्नि, जल, लोहा, पत्थर या वज्र से भी भंग न हों ऐसी मजबूत और अति प्रभावक इस प्रतिमा को ग्रहण करो'' तत्पश्चात् देवी ने बारह योजन तक प्रकाशित हो रही मूर्ति के तेज को अपनी शक्ति से खींचकर उस प्रतिमा को सामान्य तेजवाली बना दी । फिर देवी ने कहा कि ''अब इस मूर्ति को कच्चे सूत के धागे में बांधकर इधर-उधर या पीछे देखे बिना जल्दी से ले जाओ ! यदि मार्ग में कहीं पर भी रुके तो यह मूर्ति वहाँ पर ही स्थिर हो जाएगी ।'' रत्न श्रावक को इस तरह सूचना देकर अम्बिका देवी अपने स्थान पर गई ।

अम्बिका देवी की अपार कृपा से पाई प्रतिमा को लेकर रत्न श्रावक देवी के आदेश अनुसार आस-पास या पीछे देखे बगैर जल्दी से मूर्ति को जिनालय के मुख्य द्वार तक ले आता है । उस समय रत्न श्रावक सोचता है कि, ''जिनालय में पहले रही लेपवाली प्रतिमा को दूर करके अंदर की जगह को साफ सुथरा न

कर लूं तब तक यह मूर्ति को यहाँ पर ही रख दूँ'' इसलिए वह मूर्ति को द्वार के पास ही रखकर पुरानी मूर्ति को दूर करके साफ सफाई करके रत्न श्रावकने बाहर आकर नई मूर्ति को ले जाने का प्रयास किया । मगर वह प्रतिमा उसी स्थान पर स्थिर हो गई । बहोत लोगों से भी न हिले वैसे चिपक गई । तब रत्न श्रावक चिंतित होकर चारों आहार का त्याग करके फिर से अम्बिका देवी की आराधना में बैठ गया । निरंतर सात दिन के उपवास के बाद अम्बिका देवी फिर से प्रगट होकर कहने लगी, ''हे वत्स ! मैंने पहले ही कहा था कि रास्ते में कहीं पर भी रुके बिना इस बिम्ब को स्थापित करना ! अब किसी भी प्रकार से यह प्रतिमा यहाँ से हिलेगी नहीं । इसलिए यह प्रतिमा को इसी जगह पर रखकर पश्चिम दिशा में प्रवेशद्वार हो वैसा जिनालय बनवा दो ।''

यह कहकर अम्बिका देवी अंतर्ध्यान हो गए । रत्न श्रावक ने भी उन्हीं की सूचना अनुसार जिनालय बनवाया । सम्पूर्ण संघ के साथ आनंद-उल्लास से प्रतिष्ठा का महोत्सव किया । अष्टकर्मों का नाश करने वाली अष्टप्रकार की पूजा की । लोगों में जिनशासन की महिमा दर्शाती और गगन को छूती हों वैसी महा

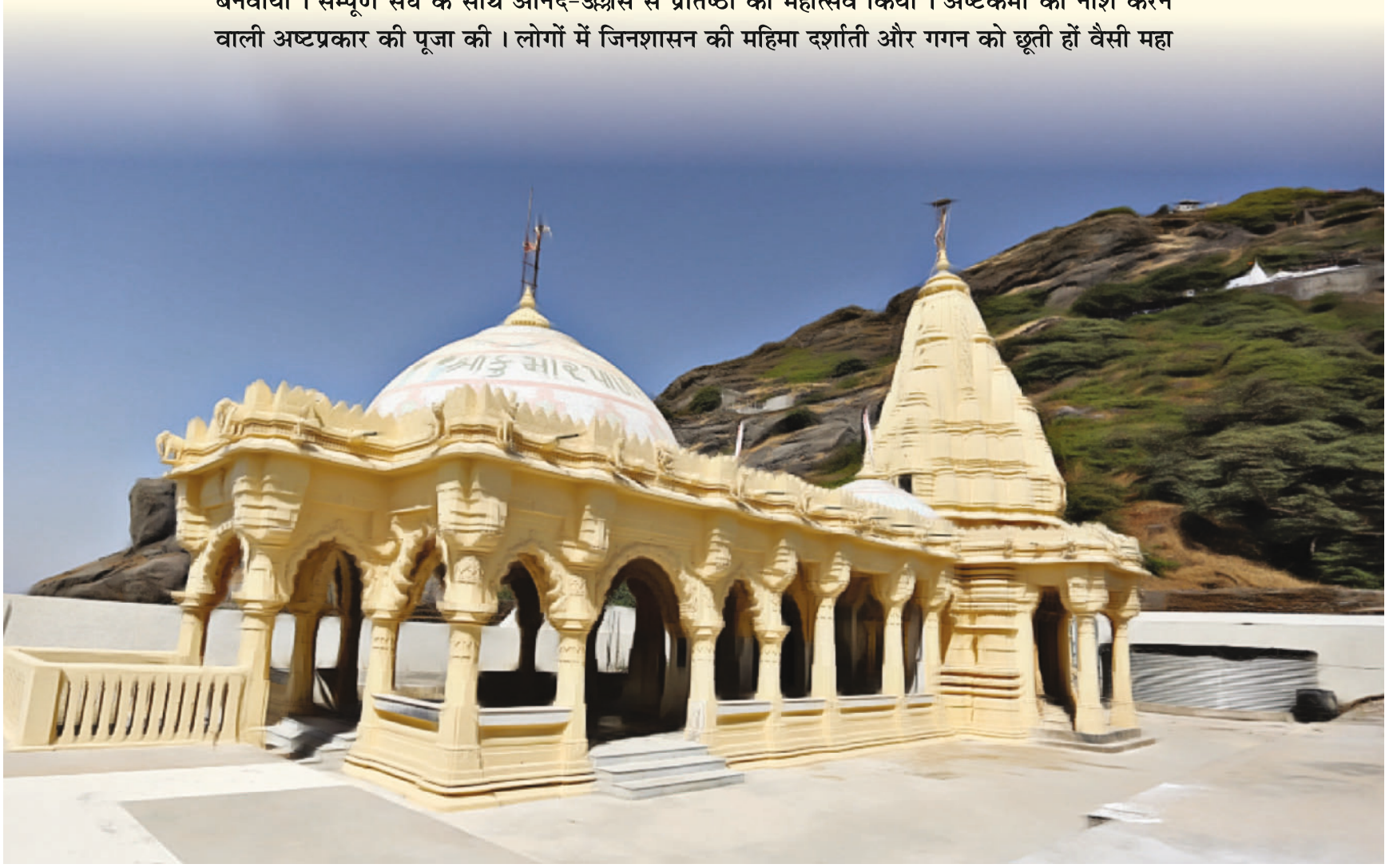

ध्वजा को आकाश में लहरायी । उदार दिल से दान इत्यादि सत्कर्म किये । श्रीनेमिनाथ प्रभु के सामने खड़ा रहकर स्तुति कर रहा है ।

"हे जगत के नाथ ! आप की जय हो ! आप हम सबके हृदय में हमेशा रहिए ! आप देव-दानव- मानव से पूजित हो ! आप की महिमा अद्भुत है । अष्टमहाप्रतिहार्य से सुशोभित ऐसे हे विश्व के आधार ! प्रभु ! आप को नमस्कार हो !"

अत्यंत भाव से स्तुति करने के बाद रत्न श्रावक जैसे कि साक्षात् प्रभु को देखता हों वैसे मूर्ति को प्रणाम करता है । तब उसकी भक्ति से खुश हुई अम्बिका देवी क्षेत्रपाल देवताओं के साथ वहाँ आकर रत्न श्रावक के कंठ में सुंदर सुगंधित पुष्पों की माला पहनाती हैं । जिनशासन का काफी प्रचार करते हुए रत्न श्रावक अपने जन्म को सफल बनाता हैं और परंपरा से वह मोक्षसुख को प्राप्त करेगा ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ रत्न श्रावक संघ में आते उपसर्गों और विघ्नों का नाश कैसे करता हैं ?

प्र. २ सुवर्ण गुफा में कैसी कैसी प्रतिमाएं होती हैं ?

प्र. ३ गिरनार पर रत्न श्रावक से पहले किसने श्रीनेमिनाथ प्रभुजी की प्रतिमा की स्थापना की थी ? वह प्रतिमा कैसी थी ?

प्र. ४ ब्रह्मेन्द्र ने बनाई हुई श्रीनेमिनाथ प्रभु की मूर्ति की विशेषता क्या है ?

धन्य हो ! वह रत्न श्रावक को, जिनकी श्रद्धा और सत्त्व के कारण विश्व की सबसे प्राचीन प्रतिमा का पूजन-भक्ति करने का पुण्य हमें मिला । प्रभु को प्रार्थना करें कि जीवन में आती कसौटी-मुश्किलों के सामने हम बिना लड़खड़ाए वैसी ही श्रद्धा और सत्त्व को फैला सकें और हमारी आत्मा का कल्याण करें....

पृथ्वी के तिलक समान 'कर्ण विहार प्रासाद' ४

कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य श्री हेमचंद्रसूरिजी के समय की यह बात है। उस वक्त गुजरात देश की सुख समृद्धि बहुत ही अद्भुत थी। महाराजा सिद्धराज उस वक्त गुजरात पर शासन करते थे । प्रजाजनों में वह बहुत ही प्रिय थे। नगर-नगर में गांव-गांव में उनके गुणगान गाए जाते थे । पाटण के राजा सिद्धराज ने संवत ११७० में सोरठ देश पर आक्रमण किया और वहाँ के राजा रा'खेंगार को हरा दिया । अब महाराजा सिद्धराज का गुजरात और सौराष्ट्र पर एक चक्री शासन चलता था । जैन धर्म प्रति अत्यंत श्रद्धावाले राजा ने पुण्यशाली ऐसे सज्जन मंत्री को सौराष्ट्र के 'दंडनायक' का पद दिया ।

प्रतिभाशाली, होशियार, कुशलतापूर्वक कार्य करनेवाले सज्जन ने बहुत ही कम समय में प्रजा का प्रेम जीत लिया था । राज संचालन के लिए सज्जन मंत्री ने जूनागढ़ को मुख्य स्थान बनाया । सोरठ देश की शान में वृद्धि करने के लिए उन्होंने बहुत ही प्रयास किए और सफलता प्राप्त की । एकबार गिरनार गिरिवर पर चढ़ना हुआ तब वहाँ के टूटे हुए और पुराने हो गए जिनालयों की बूरी हालत देखकर सज्जन मंत्री बहुत ही दुखी हुआ । महाराज सिद्धराज के राज्य में जिनालयों की ऐसी हालत ! उस वक्त हमेशा एकांतर दिन उपवास तप की आराधना करते राजगच्छ के आचार्य श्री भद्रेश्वरसूरिजी के शुभ उपदेश से सज्जन मंत्री ने जीर्ण हुए श्री नेमिनाथ परमात्मा के लकड़ी से बने जिनालय को नया बनवाने का संकल्प किया ।

शुभ मुहूर्त में गिरनार के जिनालय को नया बनाने का काम शुरू हुआ । कुशल कारीगर अपनी कला दिखाने लगे । खंडहर हुए मंदिरों को महलों का रूप देने लगे । गिरनार की गुफाओं में और शिखरों में आज शिल्पियों की टंचियो और हथोडियों की आवाज घूम रही थी । सज्जन अपनी सभी ताकत जिनालय बनवाने में लगा रहे थे । एक ओर सोरठ देश की जिम्मेदारी और दूसरी ओर जिनालय का जीर्णोद्धार ! ये दो महत्वपूर्ण कार्य में व्यस्त रहते सज्जन को जिनालय के लिए धन की चिंता थी । यदि वो चाहते तो सोरठ देश के गांव-गांव में जाकर काफी संपत्ति इकट्ठी कर सकते थे परंतु राज्य के वहन का भार भी उनके सिर पर होने से वह मुमकिन नहीं था । इसीलिए अभी तो सोरठ देश की आय जो राज भंडार में जमा करनी थी वह तीन साल की सालाना आय को इस जीर्णोद्धार के कार्य में लगा दी । समय मिलते सौराष्ट्र के गांवों से यह रकम इकट्ठा करके राजभंडार में जमा कर देंगे ऐसा निर्णय किया और ७२ लाख द्रम्म की रकम जीर्णोद्धार के कार्य में खर्च की ।

सज्जन मंत्री के ऐसे अच्छे काम नहीं देख सकते वैसे कुछ लोगों ने राजा को फरियाद की । सौराष्ट्र के सज्जन मंत्री ने तीन-तीन साल से सोरठ देश की आय का एक रुपया भी राजा के भंडार में जमा नहीं किया हैं । महाराजा सिद्धराज तो यह बात सुनकर आग बबूला हो उठें । उन्हें भी लगा कि कुछ गलत हो रहा है । इसलिए जूनागढ़ जाकर राज संचालनका हिसाब देखने की उनकी इच्छा हुई। राजा को सज्जन मंत्री पर अविश्वास हो गया है ऐसे समाचार महामंत्री बहाड ने जूनागढ़ सज्जन मंत्री को पहुँचाया । बुद्धिमान सज्जन मंत्री परिस्थिति को समझ गए । सोरठ देश की आय अब कैसे भरी जाए यही सोचने लगे । उनकी नजर के सामने वंथली गांव आया । वंथली तीर्थ की रिद्धि-सिद्धि अनूठी थी । गिरनार के लिए तन-मन-धन देनेवाले काफी श्रावक वहाँ बसते थे ।

जीर्णोद्धार की राशि इकट्ठा करने के लिए सज्जन मंत्री सिद्धराज के आने से पहले वंथली की ओर गए । गांव के श्रेष्ठियों- महाजनों को इकट्ठा करके गिरनार के जिनालयों के लिए रकम की बात की । गांव के श्रेष्ठि बहुत ही उल्लास के साथ अपनी अपनी रकम लिखवाने के लिए मंडराने लगे । भरचक सभा में मैले कपड़े पहने हुआ एक इंसान आगे आने के लिए महेनत कर रहा था । तब भीड़भाड़ के कारण गुस्से में आ गए एक व्यक्ति ने उसे कहा कि, ''अरे ! तुम्हें वहाँ क्यूँ जाना हैं ? वहाँ तुम्हारा कौन सा खजाना गाड़ा हुआ है ? गिरनार गिरिवर की यह टीप चल रही हैं वहाँ बीच में न आ । दो पैसे भी लिखवाने की तेरी हैसियत है क्या ?'' वह इंसान तो किसी की भी बात न सुनते हुए चुपचाप आगे बढ़ता हुआ सज्जन मंत्री के पास पहुँच जाता है । सज्जन मंत्री के पास जाकर उनके कान में कहता है, ''मंत्रीश्वर ! यह महाप्रभावक गिरनार के लिए मैं मेरा सब कुछ देने को तैयार हूँ । आप सोरठ देश की तीन साल की मामूली रकम के लिए क्यूँ टीप करते हो ? यह महाजन तो भाग्यशाली हैं उन्हें दान पुण्य के बहुत ही अवसर मिलते ही रहे है । मगर आज इस रंक पर कृपा करके सभी रकम का लाभ मुझे ही लेने दीजिए ।''

सज्जन मंत्री दो मिनट के लिए आश्चर्यचकित हुए । यह मैले वस्त्रवाला सभी रकम देने के लिए तैयार ! ये कौन है ? वह सोचकर उसे पूछते हैं, ''आपका नाम क्या हैं?'' वह इंसान प्रेम से जवाब देता हैं, ''भीम - साथरियो, मंत्रीश्वर ! इस गरीब को दो पैसे का पुण्य कमाने का अवसर देंगे तो मेरा जीवन धन्य हो जाएगा ।''वैसा कहकर पूरी सभा के सामने अपनी भावना बताते हुए सज्जन मंत्री के चरण में नमस्कार करके अपनी झोली फैलाई ।

सज्जन मंत्री भी उसकी भावना देखकर उसकी बात का स्वीकार करते हैं । भीम साथरिया से जीर्णोद्धार की रकम के वचन को लेकर मंत्रीश्री वापस जूनागढ़ पधारे हैं । वहाँ पहुँचते ही महाराजा सिद्धराज नजदीक आने के समाचार मिलते हैं । जब सुबह महाराजा का प्रवेश होता हैं । उस समय जूनागढ़ के नगरजन धूमधाम से उनका स्वागत करते हैं । महाराजा के आगमन का उत्सव मनाते हैं । महाराजा सिद्धराज के महल में आते ही सज्जन मंत्री नमस्कार करते हुए उनके हालचाल पूछते है तब सज्जन मंत्री के लिए गलत सोच रखनेवाले महाराजा ने कहा, ''आप के जैसे विश्वास का भंग करनेवाले, राज्य का द्रोह करने वाले इस राज्य में उच्च स्थान पर हो तब स्वस्थता कहाँ से होगी ? सौराष्ट्र की तीन साल की आवक का हिसाब कहाँ है ?''

महाराजा की इस पीड़ा को जाननेवाले सज्जन ने शांति से जवाब दिया, ''महाराजा ! राज्य की आवक के पैसे पैसे का हिसाब तैयार ही है । आप कृपालु सफर की थकान मिटाने के लिए थोड़ी देर आराम कर लीजिए ।''

सज्जन मंत्री के दृढ़तापूर्ण वचन सुनकर महाराजा सिद्धराज थोड़े शांत हुए । अपनी शंका के लिए उन्हें दुख हुआ । पूरे दिन नगर जनों से सज्जन मंत्री के कार्यों की प्रशंसा सुनी । साथ ही साथ में सज्जन मंत्री ने करवाये जिनालयों के सुंदर जीर्णोद्धार की बातें भी सुनी । शाम को महाराजा ने मंत्री को अगली सुबह में सांकली गांव से निकलकर गिरनार गिरिवर की यात्रा करने की अपनी इच्छा दर्शाई ।

जब सुबह महाराजा और मंत्री गिरनार गिरिवर चढ़ रहे थे तब शिखर पर शोभायमान सुंदर जिनालय और आकाश को छूने का प्रयत्न कर रही ऊंची ऊंची ध्वजाओं की शोभा देखकर महाराजा ने पूछा, ''वह कौन पुण्यशाली माता-पिता है ? जिनके संतानों ने इतने सुंदर, मनोहर जिनालयों का निर्माण किया है ?''

तब मंत्री कहते है, ''स्वामी ! भाग्यशाली है वह कर्णदेव और वह मीनलदेवी ! जिनके महापुण्य शाली संतान गुजरात के पति श्री सिद्धराज के प्रताप से ही ऐसा अद्भुत सर्जन हुआ है ।''

अचंभित हुए महाराजा इस बात का रहस्य पूछते हैं तब मंत्री कहते हैं, ''हे स्वामी ! आप के पुण्य प्रभाव से ही यह अनूठा सर्जन हो पाया है । सोरठ देश की धन्य धरती की तीन-तीन साल की आवक इस जिनालय के नव निर्माण में खर्च हुई है । इनके प्रताप से ही यह मंदिर इतने अनुपम लग रहे हैं । आप कृपालु ही सोरठ देश के स्वामी हो । इसीलिए आप के पिता कर्णदेव और माता मिनलदेवी ही धन्य हुए हैं ! आप के पिता की याद में बने हुए ''कर्ण प्रसाद'' नामके इस जिनालय से गिरनार की शोभा बढ़ गई है । फिर भी आप को सोरठ की तीन साल की आवक राजभंडार में जमा करनी हो तो पैसे-पैसे के हिसाब-किताब के साथ पास

के वंथली गांव का श्रावक भीम साथरिया अकेले ही रकम भरने के लिए तैयार है और जीर्णोद्धार का उत्तम लाभ लेकर आत्मभंडार में पुण्य जमा करना हो तो वह रास्ता भी आपके लिए खुला ही है।''

सज्जन मंत्री के वचनों को सुनकर महाराजा सिद्धराज उनके ऊपर खुश होते हैं और कहते हैं, ''इतने सुंदर जिनालय का महा कीमती लाभ मिलता हों तो मुझे वह तीन साल की आवक से कोई मतलब नहीं है। मंत्रीश्वर ! आपने तो कमाल की है। आप की बुद्धि, कार्य कुशलता और वफादारी के लिए मेरे मन में बहुत ही मान हुआ है। मंत्रीश्वर आपके लिए मुझे जो शंका हुई है उसके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। आज मैं धन्य हो गया हूँ।''

इस ओर मंत्रीश्वर के समाचार की प्रतीक्षा करता भीम साथरिया अधीर होकर जूनागढ़ आता है । मंत्री को जीर्णोद्धार की रकम के लिए कोई समाचार नहीं भेजने का कारण पूछता हैं । सज्जन उसे सब हकीकत बताते हैं उसे जानकर भीम को बहुत ही आघात लगता है । हाथ में आई पुण्य की तक लूट जाने से वह थोड़ी देर के लिए बेहोश हो जाता है । फिर स्वस्थ होते ही कहता है, ''मंत्रीश्वर ! जीर्णोद्धार के दान के लिए सोची हुई रकम अब मुझे कोई काम की नहीं । आप इन पैसों का स्वीकार करके इसका योग्य उपयोग कीजिएगा !''

वंथली गांव से आई धन की गाड़ियां सज्जन मंत्री के आंगन में आ पहुंची । सज्जन को उस द्रव्य का स्वीकार करना ही पड़ा । बुद्धिमान सज्जन ने भीम - साथरिया के उस दान से वर्तमान के 'मेरकवशी' नाम के जिनालय का निर्माण किया और भीम-साथरिया की याद बनी रहे इसके लिए शिखर के जिनालयों के नजदीक ''भीमकुंड'' नामक एक विशाल कुंड का निर्माण करवाया ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ कौन से भगवंत एकांतर उपवास करते थे ?

प्र. २ आज के श्री नेमिनाथ प्रभु के देरासर का नाम क्या हैं ?

प्र. ३ भीम-साथरिया ने दिए हुए पैसों से उनकी याद में सज्जन ने क्या निर्माण करवाया ?

सज्जन मंत्री का कैसा साहस ! कि तीर्थ के लिए महाराजा के क्रोध की भी परवाह नहीं की! और कैसा भीम-साथरिया का वचन पालन ! ये दोनों की तीर्थ-भक्ति को लाखों सलाम ! महाराजा सिद्धराज की भी कैसी उदारता !

जय गिरनार ! जय नेमिनाथ !

जाप जपें पाप कटें (गोमेध यक्ष) ५

भरतक्षेत्र की भव्य भूमि पर सुग्राम नाम का रम्य गांव था । वहाँ गोमेध इत्यादि अनेक यज्ञों को करनेवाला एक ब्राह्मण रहता था । 'गोमेध' नाम के यज्ञ कराने में होशियार होने के कारण वह ब्राह्मण लोगों में गोमेध ब्राह्मण नाम से प्रसिद्ध हुआ । अज्ञान के अंधकार के कारण वह धर्म के नाम पर अनेक प्राणियों की हिंसा करता था । जीवहिंसा के भयानक पाप कर्म के फल स्वरूप उसकी पत्नी और पुत्रों की मृत्यु हो गई । परिवार विहीन वह अकेला हो जाने से अत्यंत दुखी हुआ ।

थोड़े समय के बाद वह गोमेध का शरीर अनेक रोगों का घर बना । कुष्ठ रोग जैसे अनेक रोगोंवाला उसका शरीर देखकर लोग उसका अपमान करने लगे । उसके प्रति तनिक भी दया दिखाये बगैर उसके सगे संबंधि उसको 'हट हट' करने लगे । अनेक रोगों की पीड़ा से दुखी होकर गोमेध अपना जीवन बिताने लगा । उसके शरीर में असंख्य कीड़े उत्पन्न होने लगे । वह नरक की पीड़ा का साक्षात् अनुभव करने लगा । शरीर के अंग अंग से निकलते कीड़े-मवाद इत्यादि गंदगी के कारण उसके शरीर से बदबू आने लगी । उसके शरीर पर मक्खियां मंडराने लगी । वो बहुत ही त्रास का अनुभव करने लगा ।

गलियों में भटकता-राजमार्गों पर बेवजह घूमता, वेदनाओं को सहता हुआ वह मृत्यु की राह देख रहा था । वो अनेक बार सोचता था कि, ''मैंने जीवन भर यज्ञ-क्रिया की, देवी-देवताओं को खुश करने के लिए मैंने कितने ही पैसों का पानी किया और इस वक्त मेरी ये हालत ? ऐसा कैसे हुआ ? वह सोचता ही रहता था मगर उसे कोई समाधान नहीं मिला ।

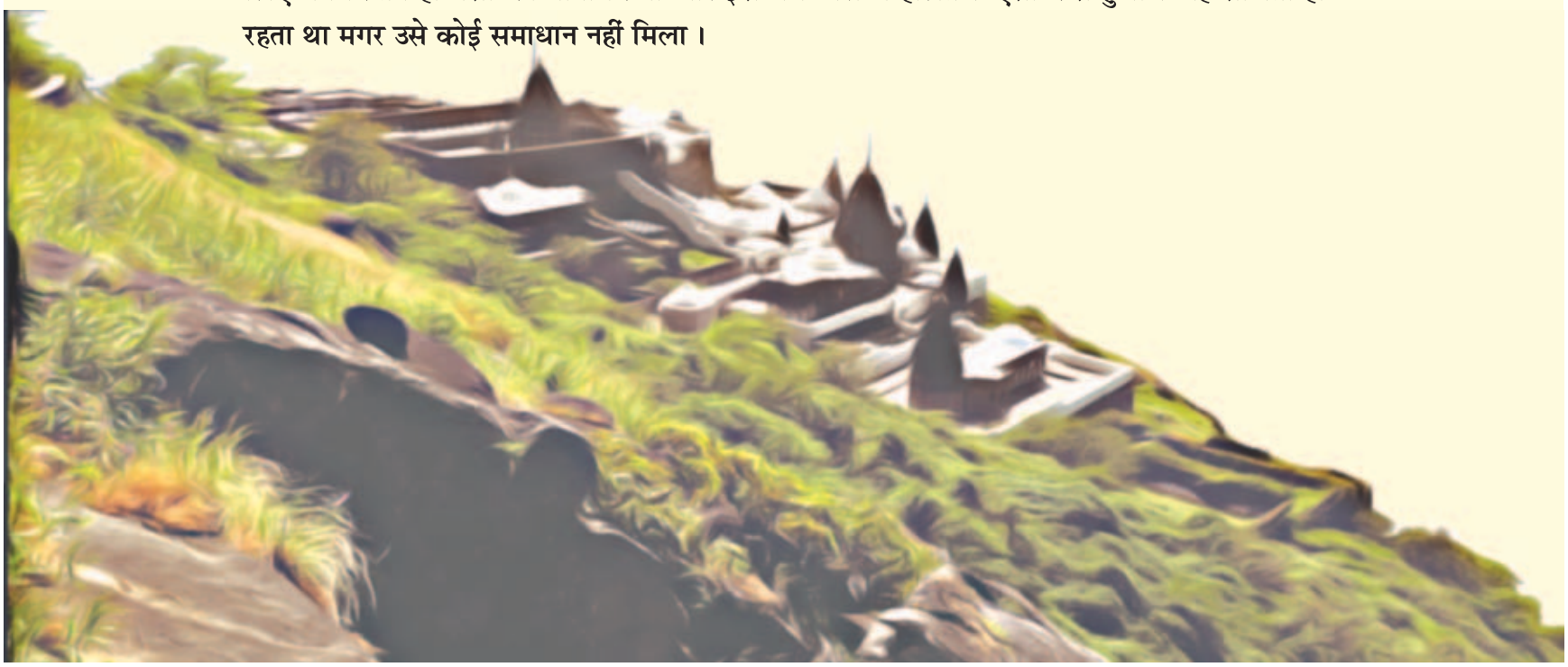

किन्तु ऐसे भाग्य विहीन गोमेध के जीवन में एक अजीब सा समय आया । अतीत में किये हुए अच्छे कार्यों (पुण्य) का फल कभी न कभी तो मिलता ही है । वैसे ही गोमेध के पूर्वजन्म के कोई पुण्य से उसे मार्ग में एक मुनि भगवंत मिले । दया के भंडार समान महात्मा को उसकी ऐसी बूरी हालत देखकर उस पर करुणा जगी । वह विशिष्ट ज्ञानी थे । इसीलिए गोमेध के पास गये और उसे 'धर्मलाभ' देते हुए कहा, "हे वत्स ! तुमने धर्मबुद्धि से अनेक जीवों की हत्या की है । तुमने जो बूरे काम किये है उसका अंजाम है यह ! ये पाप कर्मों का फल तो तुम्हें नरक गति में भी मिलेगा । मगर तुम यदि यह पीड़ा से त्रस्त हुए हो और आगे के जन्मो में भी यह पाप के फलों से बचना चाहते हो तो अभी भी देर नहीं हुई । तुम करुणासागर, जीव-दयापालक ऐसे जिनेश्वर परमात्मा ने

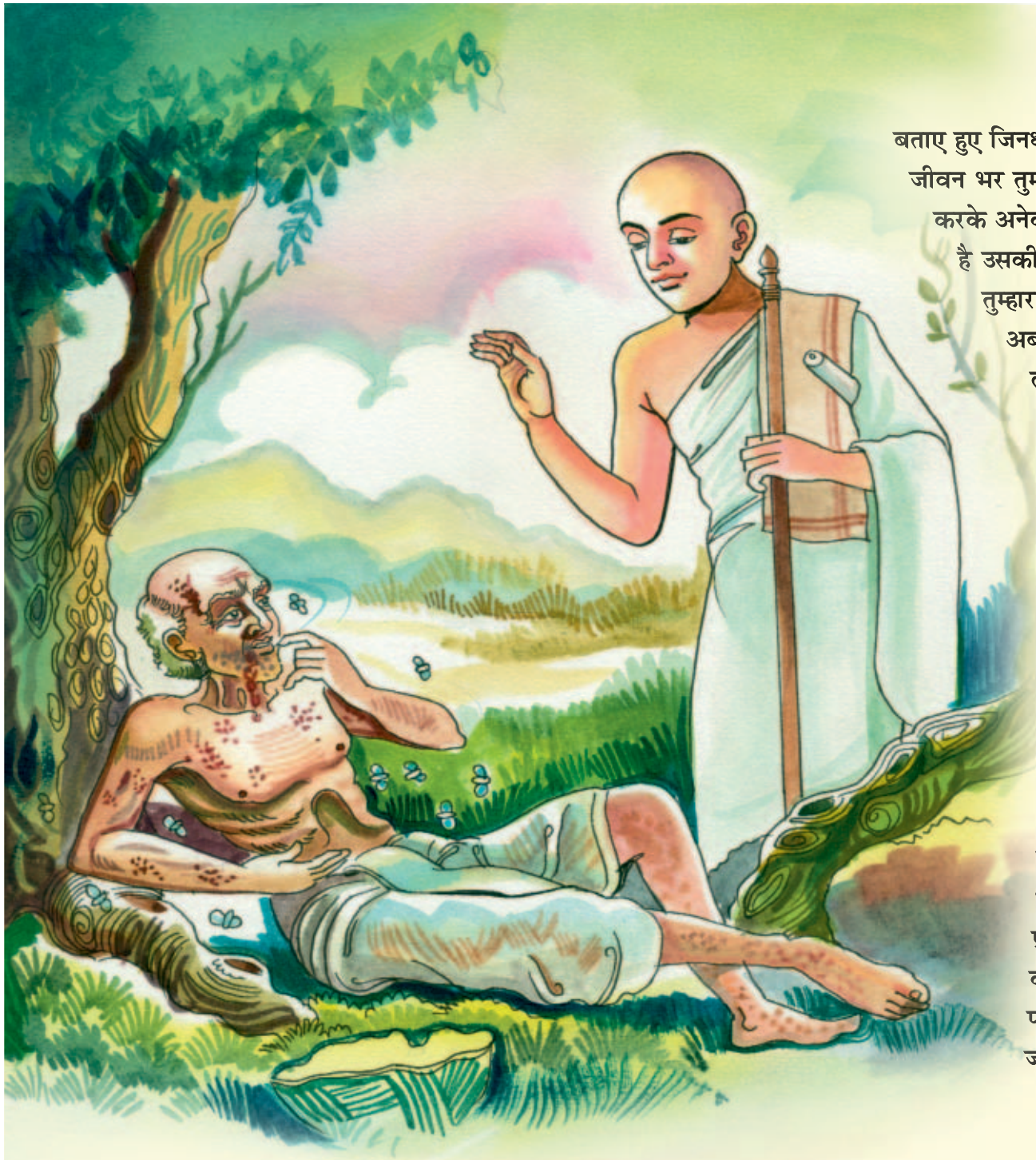

बताए हुए जिनधर्म का स्वीकार करो ! जीवन भर तुम ने जो हिंसा और यज्ञ करके अनेक जीवों को त्रास दिया है उसकी तुम क्षमा मांग लो ! तुम्हारा जीवन तो बिगड़ा ! अब अपनी मृत्यु को सुधार लेना तुम्हारे हाथ की बात है ! और तुमने किये हुए बूरे कर्मों का नाश करने हेतु और देवों से पूजित, अनंते तीर्थंकरों की कल्याणकभूमि ऐसे श्रीरैवतगिरि महातीर्थ की सेवा-भक्ति करो ! वह गौरवपूर्ण गढ़ गिरनार की महिमा अपरंपार है ! ऐसे वह गिरनार पर बिराजित भगवान श्रीनेमिनाथ प्रभु के जाप और ध्यान करने से तुम्हारे सर्व पापों का क्षय हो जाएगा !''

दया के सागर समान वह मुनि भगवंत के वचन सुनकर गोमेध के मन को बहुत ही शांति मिली । हृदय में श्रीरैवत महातीर्थ का ध्यान धरता हुआ और बाल ब्रह्मचारी श्रीनेमिनाथ प्रभु का स्मरण-रटन करता हुआ वह कोई भी पीड़ा के बगैर मृत्यु को प्राप्त करता है । वह गोमेध ब्राह्मण की गिरनार और श्रीनेमिनाथ प्रभु के गाने गाते हुए मृत्यु होती है इसीलिए वह ऋद्धिमान देवत्व को पाकर यक्षों का नायक बना ।

परमात्मा के गुणों की स्तुति करने के लिए वह तीन मुखोंवाला हुआ । शासन में अनेक कार्य करने के लिए उसे छह भुजाएं मिली । उसके बायें हाथ में शक्ति, शूल और नकुल है और दायें हाथ में चक्र, परशु और बिजौरा हैं । उस की छह भुजाओं की ताकत की तो बात ही क्या करें ! उसकी देह पर जनेऊ है और वाहन के तौर पर पुरुष है । शासन अधिष्ठात्री अम्बिका देवी की तरह वह भी देवविमान में बैठकर श्रीनेमिनाथ प्रभु के समवसरण में आया । वहाँ रैवतगिरि पर आकर परमात्मा को वंदन करता हैं । प्रभु के उपकारों का स्मरण करते हुए वह प्रभु की स्तुति करता है । उस वक्त इंद्र महाराजा भी उसे परमात्मा का परमभक्त जानकर श्रीनेमिनाथ प्रभु के शासन के अधिष्ठाता देव के तौर पर स्थापित करते है ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ गोमेध ब्राह्मण को इस जन्म में जीवहिंसा का क्या फल मिलता हैं ?

प्र. २ श्रीजिनेश्वर परमात्मा का जैनधर्म का मूल क्या है ?

प्र. ३ गोमेध यक्ष के शरीर का वर्णन कीजीए ?

पापी को भी पावन करते वो गिरनार गिरि को धन्य है ! जिसका नाम स्मरण-रटन भी सबको सुख-शांति और समाधि देता है ऐसे गिरनार की भक्ति से दूर क्यों रहें ? चलिए ! हम भी भक्ति करें ।

शासन रखवाली माँ अम्बिका देवी ६

सोरठ देश की शोभा समान रैवताचल पर्वत की दक्षिण दिशा में 'कुबेर' नाम का एक उत्तम नगर था । वहाँ दुश्मनों को आने से रोक लें ऐसा मजबूत किला था और पापों को रोक लें ऐसे भव्य मंदिर भी थे । नगरजनों की आँखों को आनंद दें ऐसे सुंदर और मनोहर उद्यान भी थे । प्रभु की भक्ति के प्रभाव से नगरजन सुख- शांति से अपना जीवन जी रहे थे । वहाँ सभी गुणों के भंडार स्वरूप यादव कुल के रत्न ''कृष्ण'' नाम के राजा राज्य करते थे ।

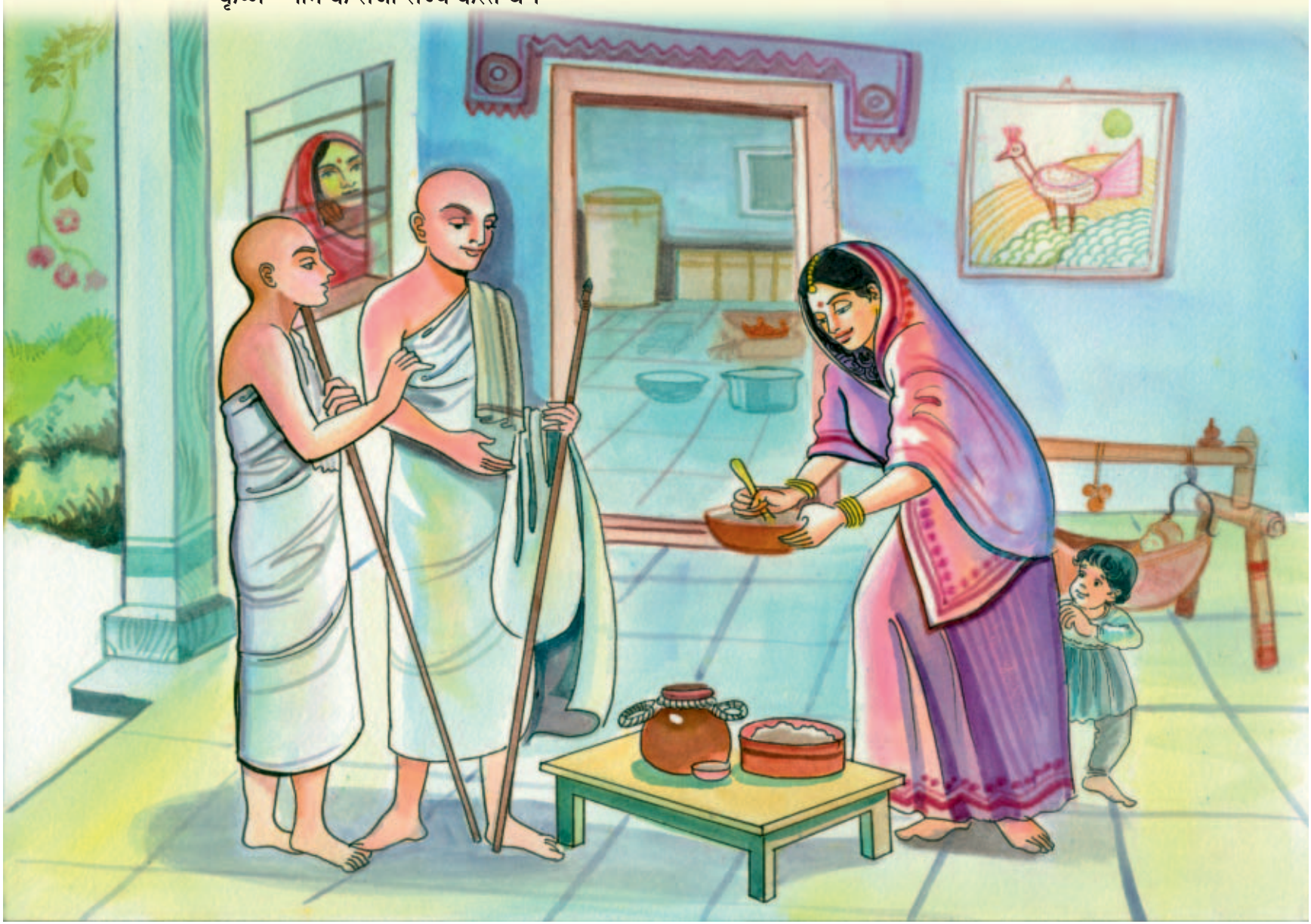

धर्म को अपने जीवन का आधार माननेवाला, मुनि भगवंतों की वाणी से सच्चा और सुंदर जीवन जीने वाला 'देवभट्ट' नाम का ब्राह्मण था । किंतु वह जैनधर्म का पालन करता था । उसे देवल नाम की धर्मपत्नी थी । उनको 'सोमभट्ट' नाम का पुत्र हुआ । जब वह सोमभट्ट बड़ा हुआ तब शीलवान और गुणवान 'अम्बिका' नाम की कन्या के साथ उसका विवाह हुआ । समय के चलते देवभट्ट ब्राह्मण की मृत्यु हो गई । उसकी मृत्यु के बाद घर से जैनधर्म भी दूर हुआ । उसके जाने के बाद उसके घर में श्राद्ध के दिनों में कौओं को अन्न देना, हररोज पीपल के वृक्ष की पूजा करना इत्यादि अंधश्रद्धा के कार्य होने लगे । किन्तु अम्बिका भद्र स्वभाववाली होने के कारण जैनधर्म को ही मानती थी ।

एक बार देवभट्ट ब्राह्मण के श्राद्ध का दिन था । इसलिए खीर वगैरह मीठी रसोई घर में तैयार की थी । अम्बिका घर में अकेली थी । उसकी आँखों के सामने उसके दो बच्चे शुभंकर-विभंकर खेल रहे थे । इतने में अच्छे भाग्य से दोपहर के समय पर समता की मूर्ति समान सुशोभित, महीने से उपवास करनेवाले दो मुनि भगवंत पधारे । अम्बिका का हृदय खुशी से नाच उठा । उसने बहुत ही भाव से जैन मुनि भगवंत को गोचरी(भिक्षा) का लाभ देने के लिए प्रार्थना की । मुनि भगवंत भी उसके भाव को देखकर उसके घर पधारे । तब आनंद से पागल हुई अम्बिका सोचती हैं, ''अहो ! आज तो पर्व के दिन पूरे विश्व को पावन करनेवाले मुनि भगवंतों ने हमारें घर को अपने चरण कमलों से पावन किया। मेरा कैसा पुण्योदय ! आज मेरी सास भी घर में नहीं है और पर्व का दिन होने से साधु भगवंतों के योग्य निर्दोष(सात्त्विक) भोजन भी तैयार है । इसलिए इन श्रमण भगवंत को सुपात्रदान करके अपने मनुष्य जन्म को सफल करूँ ।''

ऐसा सोचकर अम्बिका ने अपने घर में रहे शुद्ध अन्न-पान आदि भाव से बिनती करके उनको अर्पित किया । मुनि भगवंतों ने भी वह भिक्षा को ४२ दोषों से रहित मानकर उसे लाभान्वित किया । 'धर्मलाभ' कहकर उसे आशीर्वाद देकर वह वापिस लौटे । अम्बिका के मन में सुपात्रदान के आनंद की भावना घंट की आवाज की तरह बजती ही रहती है । सतत अपने आप को मिले लाभ की अनुमोदना करते हुए वह बहुत ही पुण्य कमाती है ।

अम्बिका के भाव बढ़ रहे थे । तब आसपास के पड़ोसियों ने ये सब देखा और वे लोग अम्बिका पर क्रोध की अगन बरसाने लगे, ''हे बहु ! तुम्हें धिक्कार है ! तुमने ये क्या किया ? आज इस पर्व के दिन अभी तो पितृ को दान नहीं किया हैं और देवताओंको भोग भी लगाया नहीं है और उसके पहले ही तुमने ये 'मुंडियों' को दान दिया ? तुमने सभी भोजन को जूठा कर दिया ! ये तुम्हारी सास घर में नहीं है इसीलिए तुम अपनी मनमानी कर रही हो ? ये तुमने बिल्कुल ही ठीक नहीं किया !''

इस तरह चिल्लाती हुई वह पड़ोसिन उसकी सास को बुला लाई और मिर्च मसाला डालकर अम्बिका ने कीये हुए दान की बातें उसकी सास को कहने लगी । उसकी सास को भी अम्बिका पर बहुत गुस्सा आया । तेजी से वह घर में आई और अम्बिका पर टूट पड़ी, ''दुष्टा ! ये तुमने क्या किया ? मुझे पूछे बगैर तुमने दान क्यूँ किया ? ये मीठा-भोजन मुंडियाओं के लिए नहीं बनाया था । इस घर में रहना हों तो तुम अपना जैनधर्म छोड़ दो ! वरना घर से निकल जाओ ! तुम अपना मुंह भी कभी ना दिखाना ।''

इस तरह सास और पड़ोसिन के कठोर वचन सुनकर अम्बिका अंदर से कांपने लगी । उस वक्त उसका पति सोमभट्ट भी वहाँ आया । माता से सब कुछ जानकर वह भी अम्बिका के उपर क्रोधित हुआ । वह अम्बिका को अपमानित करने लगा । तब अपनी कोई गलती न होने के बावजूद सब के कटुवचन सुनकर अम्बिका को मन में बहुत दुख हुआ । उसने मौनपूर्वक अपने दोनों पुत्रों को लेकर घर का त्याग किया । मार्ग में रोते हुए वह सोचती हैं कि, ''अहो ! मैंने मेरे सास-ससुर की सभी बातें मानी हैं । हमेशा मेरे पति की सेवा की है । किसी को पसंद न हो ऐसा कोई भी काम मैंने कभी भी किया नहीं है । अरे ! शरीर को दुख देकर भी घर के सारे काम करती रहती हूँ । फिर भी बिना कोई अपराध के, लोगों के सामने मुझे अपमानित करते हैं ! अरे ! आज पर्व के दिन साधु को, सुपात्र को दान करके मैंने शुभकार्य किया फिर भी अज्ञानता से अंध हुए वे मुझे परेशान करते हैं । अनंत पुण्य देनेवाले सुपात्र दान की निंदा करते है । मैं तो दान के फल की अनुमोदना करती हूँ । वे मुनि भगवंतों के शरण में जाती हूँ । अब मैं रैवतगिरि पर जाऊंगी । वहाँ जिनेश्वर परमात्मा का ध्यान करके मेरे अनंत जन्मो के अशुभ कर्मों का नाश करूँगी । ऐसा सोचकर वह स्वस्थ होती है । अपने एक बच्चे को कमर में उठाकर और दूसरे की उंगली पकड़कर वह श्री नेमिनाथ प्रभु का ध्यान करते हुए रैवताचल की ओर आगे बढ़ने लगी ।

अनेक दुखों से घिरी अम्बिका चलते-चलते नगर के बाहर थोड़ी दूर तक पहुँचती है । तब कमर में बैठा विभंकर नाम का नन्हा बच्चा रोने लगा । उसे प्यास लगने के कारण वह पानी के लिए जिद्द करने लगा। उसी वक्त हाथ पकड़कर चल रहा शुभंकर नाम का बच्चा भूख लगने से और सतत चलने से लगी थकान के कारण, ''हे माता ! मुझे खाना दें ! हे माता मुझे भूख लगी है !'' ऐसा कहने लगा । अपने नन्हे नन्हे सुकोमल बच्चों को रोते हुए देखकर अम्बिका को चिंता होने लगी ।

ग्रीष्म ऋतु के सूर्य के ताप से तप्त हुई पृथ्वी पर भूख-प्यास इत्यादि अनेक दुखों से दुखी हुई वह सोचती है, ''मुझे धिक्कार है ! मैं अपने बच्चों की भूख-प्यास को भी दूर नहीं कर सकती । हे प्रभु ! तुमने

मुझे केवल दुखों से भरी हुई क्यूँ बनाई ? मेरे पूर्व जन्मो के बूरे कर्मों का यह फल लगता है । इसीलिए भले ही मेरे ऊपर सभी दुख एक साथ टूट पड़ें ! जो होना हो वो हो ! मैं जिनेश्वर भगवान का ध्यान करूँगी और सब दु:खों को स्वीकार करती रहूंगी ।'' इस तरह सोचकर अम्बिका एक वृक्ष की छांव में बैठती है ।

इतने में उसने अपने आगे थोड़े दूर स्वच्छ शीतल जल से भरा सरोवर देखा । उसकी दोनों ओर पके हुए आम्र के वृक्ष देखे । अम्बिका ने तुरंत ही बच्चों को सरोवर का पानी पिलाया और आम्र फलों का भोजन करवाया । बच्चों की भूख अब भाग गई । प्यास मिट गई । मुनि दान का यह फल कैसे तुरंत ही प्राप्त हुआ ! ऐसा सोचकर गिरनार के गाने गाती और भगवान नेमिनाथ का ध्यान करती अम्बिका फिर से गिरनार की दिशा में चल पड़ी ।

इस ओर अम्बिका की सास देवल मुनिदान के कारण बचे हुए भोजन को जूठा मानकर नया भोजन बनाने के लिए बरतनों को देखती है । देखने के लिए ज्यों ही उसने बरतन खोले त्यों ही देखा कि जैसे पारसमणि के स्पर्श से पत्थर भी सोना बन जाता है वैसे सुपात्र दान के प्रभाव से वे सभी बरतन सुवर्ण के हो गए थे और भोजन से भरे हुए थे । तब अचंभित हुई देवल सोचती है, ''अरे ! बिना किसी अपराध साक्षात् लक्ष्मी जैसी बहु को मैंने घर से बाहर निकाल दिया ! मुझे धिक्कार है !'' उसी समय आकाश में से दिव्य आवाज आती है, ''अरे ! भाग्य विहीन ! अम्बिका के सुपात्रदान का अंश ही तुम्हें दिखाई दिया है । अतिशय पुण्यशाली अम्बिका तो सुपात्रदान के फल स्वरूप योग्य और उत्तम स्थान पाएगी ।'' ऐसी वाणी सुनकर देवल डर गई और अम्बिका को खोजकर वापिस ले आने के लिए सोमभट्ट को भेज दिया ।

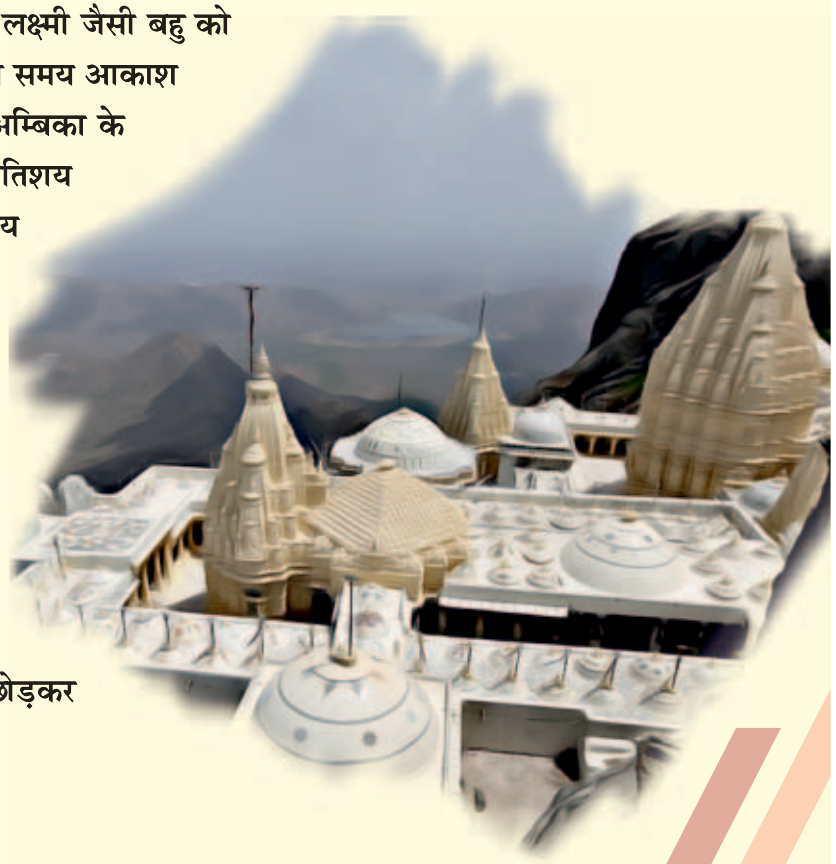

माता की बात सुनकर सोमभट्ट को भी अपनी भूल का पश्चाताप हुआ । उसे अम्बिका के लिए अत्यंत आदर भाव हुआ । खुद की निंदा करता वह जल्दी से नगर से बाहर निकलकर जंगल के मार्ग की ओर आगे बढ़ा । तब दूर से दो बच्चों को साथ लेकर सरोवर और आम्र वृक्षों को छोड़कर

आगे बढ़ रही अम्बिका को उसने देखा। खुश होकर सोमभट्ट ने आवाज लगाई ''ओ अम्बिका ! मेरी प्रिया ! तुम थोड़ी देर रुक जाओ ! मैं आ ही रहा हूँ ! जंगल के शांत वातावरण में किसी की आवाज सुनकर अम्बिका भयभीत हो जाती है । उसे लगा कि दूर दूर से कोई आदमी उसका पीछा करते हुए अपनी दोनों

मुट्ठियाँ बांधकर दौड़ा चला आ रहा है । उसने थोड़ा ठीक से देखा तो वह कांप गई :' रे ! ये तो मेरा पति सोमभट्ट ! सचमुच वो मुझे मारने के लिए ही आ रहा है । इस जंगल में मुझे कौन बचाएगा ? अब तो मृत्यु ही एक उपाय है'' इस तरह सोचकर पास में रहें कुँए की दीवार के पास आकर अंदर कूदने के लिए तैयार हुई अम्बिका बोलती है ।

''श्री अरिहंत भगवंतों का मुझे शरण प्राप्त हो !

श्री सिद्ध भगवंतों का मुझे शरण प्राप्त हो !

श्री साधु भगवंतों का मुझे शरण प्राप्त हो !

श्री जिनेश्वर भगवंत ने कहे हुए धर्म का मुझे शरण प्राप्त हो !

द्विज, दरिद्र, कृपण, कलंकी इत्यादि अधम कुल में मेरा जन्म न हों

साथमें जहाँ धर्म न हो ऐसे अनार्य देश में मेरा जन्म न हों !

यह मुनि भगवंत को किये हुए सुपात्रदान के प्रभाव से देव-गुरु-धर्म को जाननेवाले श्रेष्ठ परिवार में तथा आर्यदेश में मेरा जन्म हों !''

इस तरह इच्छा करके दोनों बच्चों के साथ ही अम्बिका कुँए में कूद पड़ती है । मरकर अनेक ऋद्धिवाले व्यंतर देवों द्वारा सेवा करने योग्य व्यंतर जाति में वह जन्म लेती है । जल्दी से उसके पीछे आ रहा सोमभट्ट, ''हे अम्बिका ! हे प्रिया तुम कुँए में गिरना नहीं !'' ऐसे चिल्लाता और हांफता हुआ कुँए के पास आता है इतने में अम्बिका और दोनों बच्चे को कुँए में पड़े और मृत्यु को प्राप्त हो चूके देखता है । अति दुखी होकर वह सोचता है, ''मुझ जैसे मूर्ख को धिक्कार हो ! मैं कितना बुरा हूँ कि मैंने अपनी पत्नी के अच्छे भावों को भी जाना नहीं । लक्ष्मी जैसी पत्नी और राजकुमार जैसे सुंदर दो पुत्रों को घर से निकाल दिया । इन तीनों के मृत्यु के बाद अब मुझे भी जीकर क्या काम है ? अब तो मुझे भी मृत्यु ही शरण हें ।'' ऐसा सोचकर सोमभट्ट भी अम्बिका का ध्यान धरता हुआ कुँए में गिरकर मर जाता है । अंतिम समय में अम्बिका का स्मरण करके कुँए में गिरा सोमभट्ट मरकर पुण्य से अम्बिका देवी के वाहन रूप सिंह रूपी देव होता है ।

अम्बिका देवी का देह सूर्य के समान सुवर्ण तेजवाला है । स्वर्ग की देवियों से भी अधिक सुंदर उनका रूप है । सिंह के वाहन पर वह बिराजित है । वह देवी सर्व अंगों से सुंदर है । बहुत ही मूल्यवान मणि-सुवर्ण-रत्न इत्यादि आभूषणों से वह अत्यंत सुशोभित हैं । अनेक देवी-देवताओं उनकी आराधना करते हैं ।

एक बच्चा गोद में और एक बच्चा पास में खड़ा है। ऐसे दो बच्चों वाली, चार भुजाओं वाली, उनके दाएं दोनों हाथ में पाश और बाएं दोनों हाथ में आम्र फल की लूम है। सुवर्ण जैसे रंग वाली, अत्यधिक प्रभाववाली अम्बिका देवी को देखकर उनके प्रतिहार दो देव उनको पूछते हैं, "हे देवी ! पूर्व जन्म में आपने ऐसे कौन से तप किए ? दान किया ? तीर्थभक्ति की ? अन्य कोई शुभ कार्य किये ? कि जिनके प्रभाव से आप हमारी स्वामिनी हुई ?"

वे प्रतिहार देवों के वचन सुनकर अम्बिका देवी ने अवधिज्ञान से अपने पूर्व जन्म को देखा और अपनी कथा कही। जैनधर्म के महा उपकार को याद किया। तत्पश्चात् देवों ने बनाये विमान में बैठकर अम्बिका देवी रैवतगिरि में सहसावन में पधारे। तब मयूर की मधुर आवाज से भरे सहसावन के उद्यान में 'वेतस' वृक्ष के नीचे अट्ठम तप करके कायोत्सर्ग में रहे श्रीनेमिनाथ प्रभु के सर्वघाती कर्म नाश हुए। आसो वद अमावस (गुजराती भाद्रपद वद अमावस) की रात को चित्रा नक्षत्र में श्रीनेमिनाथ प्रभु को केवलज्ञान की प्राप्ति हुई।

देवताओं ने समवसरण की रचना की। चैत्यवृक्ष के नीचे बने हुए सिंहासन पर प्रभु "नमो तित्थस्स" कहकर विराजमान हुए। दूसरी तीन दिशाओं में देवों ने प्रभु के तीन बिम्ब बनाये। समवसरण के रजत, सुवर्ण और रत्न के तीन गढ़ में सभी जीव परमात्मा को वंदन करके बैठे। अम्बिका देवी ने भी अपना स्थान लिया। सबलोग प्रभु का प्रवचन सुनने के लिए उत्सुक बने।

बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथ प्रभु ने अपनी प्रथम देशना (प्रवचन) शुरू की। "जगत में धर्म निःस्वार्थी भाई है। धर्म जगत वत्सल है। धर्म पीडाओं का नाश करने वाला है। इस भुवन में धर्म ही सब की सार संभाल रखने वाला है। इसलिए सब को अत्यंत भक्ति से धर्म का सेवन करना योग्य है। सम्यक्त्व (सच्चा ज्ञान) यह धर्म रूपी कल्पवृक्ष का बीज है। धर्म का पालन करने में अपनी शक्ति के मुताबिक प्रयास करना धर्म का तना है। सुपात्रदान, शील-सदाचार, तप और शुभ भाव यह धर्म की चार शाखा हैं। अनुकंपा इत्यादि धर्मवृक्ष के पत्ते हैं। स्वर्ग के सुख धर्मवृक्ष के पुष्प है और मोक्ष सुख यह वृक्ष का फल है। यह धर्म रूपी कल्पवृक्ष का जो जीव सेवन करेंगे वे जल्दी से मोक्ष-सुख पाएंगे।"

श्रीनेमिनाथ प्रभु की वैराग्य से भरी हुई देशना(प्रवचन) सुनकर सर्व जीव आनंदित हुए। प्रवचन के बाद पुण्यसार राजा ने अपने हजार सेवकों के साथ दीक्षा ली और प्रभु के पहले गणधर वरदत्त बने।

यक्षिणी नाम की राजकन्या प्रभु के पास दीक्षा लेकर प्रवर्तिनी पद को प्राप्त करती है । दशार्ह, भोज, कृष्ण, बलभद्र इत्यादि मुख्य श्रावक हुए । उनकी पत्नियां मुख्य श्राविका हुई ।

इस तरह धर्म के चार आधार दान-शील-तप-भाववाले चतुर्विध संघ की स्थापना श्रीनेमिनाथ प्रभु ने की । बाद में प्रभु के मुख से अम्बिका देवी के पूर्व जन्म के बारे में सुनकर इंद्र महाराजा ने अम्बिका देवी को श्रीनेमिनाथ परमात्मा के शासन की विघ्नों को नाश करनेवाली अधिष्ठात्री देवी के रूप में स्थापना की ।

लोगो की इच्छा पूरी करनेवाले गोमेध यक्ष को शासन के अधिष्ठाता देव के रुप में स्थापन किया ।

प्रश्न :

प्र. १ मुनि भगवंत कितने दोष रहित भिक्षा ग्रहण करते हैं ?

प्र. २ सुपात्रदान के महाप्रभाव से क्या हुआ ?

प्र. ३ धर्म के कितने प्रकार है ? उनके नाम दीजिए ।

प्र. ४ कुँए में गिरने से पहले अम्बिका किसका स्मरण करती है ?

जीवन में जिनेश्वर भगवान के शासन और शासन के साधु-साध्वीजी भगवंतों के प्रति बहुमानभाव और प्रतिपल श्रीनेमिनाथ परमात्मा का स्मरण करने से क्या नहीं मिलता ? सब कुछ मिलता हैं । हमारी श्रद्धा अटल होनी चाहिए । अम्बिका कहाँ से कहाँ पहुँच गई ! चलिए ! हम भी हर रोज कम से कम २७ बार नेमिनाथ भगवान के नाम स्मरण रूप जाप करें ।

ॐ ह्रीँ अर्हम् श्रीनेमिनाथाय नमः

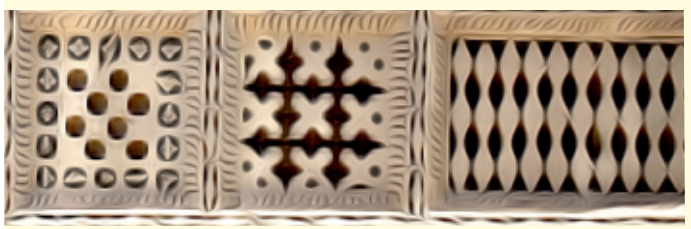

जादुई गजपद कुंड ७

''त्रण भुवननी सरितातणा, सुरभि प्रवाहने झीलतां,

जे जल फरसतां आधि-व्याधि, रोग सौना क्षय थतां,

जे जल थकी जिन अर्चता, अजरामरपद पामतां,

ए गिरनारने वंदता, पापो बधां दूरे जतां...''

पृथ्वी के शृंगार सम श्रीपुर नाम का सुंदर नगर था । उसमें बहादुरी और शौर्य से शोभायमान पृथु नामक क्षत्रिय रहता था । उसे चंद्र जैसे मुखवाली अत्यंत सुंदर पत्नी थी । मगर जैसे चंद्रमा में भी दाग होता है वैसे ही दुर्भाग्य से उसे अत्यंत दुर्गंध से भरी हुई 'दुर्गंधा' नामक पुत्री थी । कर्म की विचित्रताके कारण पृथु अपनी पुत्री के लिए निरंतर चिंतित रहता था । वह जगह-जगह अपनी पुत्री के लिए पति की खोज में भटकता रहता था । मगर कोई भी उसकी पुत्री को स्वीकारने के लिए तैयार नहीं था । थोड़े समय बाद सोमदेव नामक एक पुरुष के साथ उसने अपनी पुत्री का विवाह करवाया । किन्तु शरीर से बाहर आती निरंतर दुर्गन्ध(बदबू) से त्रस्त हुआ सोमदेव एक रात को बिल्कुल चुपके से उसे छोड़कर भाग गया ।

भाग्य से हारी हुई दुर्गंधा को पति ने छोड़ दिया और माता पिता या परिवारजनों ने स्वीकार नहीं किया। सब जगह दुर्गंधा तिरस्कृत हो गई । **'कर्म से ही अपमानित होने वाले को कौन सहारा देता है ?'** चारों ओर से अपमानित हुई दुर्गंधा बहुत त्रस्त हुई । वह अपने अशुभ कर्मों के नाश हेतु घर छोड़कर तीर्थधामों की यात्रा करने निकल पड़ी । अनेक हिन्दु तीर्थधामों की यात्रा करने पर भी उसका कर्म बोझ हल्का नहीं हुआ। ऐसी अपमान भरी जिंदगी जीने से मर जाना अच्छा वैसा सोचकर वह आत्महत्या करने के लिए जाती है तब जंगल के मार्ग में एक तापस मुनि को देखकर वह नमस्कार करती है । वह तापस मुनि दुर्गंधा के शरीर से निकलती दुर्गंध से परेशान होकर अरुची से अपना चेहरा फेर लेते हैं । तब दुर्गंधा तापस मुनि को कहती है कि, ''महात्मा ! आप जैसे राग को जीतने वाले भी मेरी ओर नहीं देखेंगे तो इस जगत में मेरी सहायता कौन करेगा ? मेरा यह पाप दूर कैसे होगा ?''

तब वह तापस मुनि कहते हैं कि ''हे बालिके ! इस वन में मेरे गुरु कुलपति है । उनके पास जाकर अपने दुख की बात करो । वह तुम्हारी यह मुश्किल का उपाय जरूर बतायेंगे । '' तापस मुनि के शब्द सुनकर खुश हुई दुर्गंधा कुछ आशा के साथ तापस मुनि के पीछे चलती हुई कुलपति के आश्रम में आई ।

कुलपति श्रीऋषभदेव परमात्मा के ध्यान में बैठे हुए थे । जटाधारी कुलपति के दर्शन होते ही दुर्गंधा उन्हें नमस्कार करती है तब कुलपति भी एक पल के लिए उसके शरीर से आती दुर्गंध के प्रति अरुचि के भाव दर्शाते हुए पूछते हैं कि, ''हे पुत्री ! तुम्हारे शरीर से इतनी बूरी गंध क्यों आती है ? इस जंगल में दुखी होकर अकेली क्यों भटक रही है ? तुम यहाँ क्यों आई हो ?''

कुलपति के प्रेम भरे वचन सुनकर आँखों से अश्रु पोंछती दुर्गंधा अपने जन्म से लेकर अब तक के सभी दुखों की कथा कहती हे । जीवन से थक चुकी, भाग्य विहीन दुर्गंधा ने अपने दुख दूर करने के लिए कुलपति को कोई उपाय बताने की बिनती की । तब कुलपति ने कहा कि, ''हे पुत्री ! मैं कोई केवलज्ञानी नहीं हूँ कि ज्ञान से तुम्हें तुम्हारे पूर्वजन्म के कौन से कर्म के कारण तुम यह दुख भुगत रही हो वह कह पाऊँ । फिर भी तुम यह शत्रुंजय महातीर्थ की यात्रा करके, श्री रैवतगिरितीर्थ की यात्रा करने जाओ ! केवलज्ञानी भगवंतों ने भी जिसकी महिमा गाई हे ऐसे श्री गिरनार पर रहे गजेंद्रपद कुंड के पवित्र जल से स्नान करो ! उस जल के स्पर्श से तुम्हारे बूरे कर्मों का नाश हो जाएगा ।''

आनंदित करनेवाले कुलपति के वचनों को सुनकर अत्यंत खुश हुई दुर्गंधा कुलपति के चरणों में नमस्कार करके श्री शत्रुंजय तीर्थ की ओर चलने लगी । श्री शत्रुंजय और श्री गिरनार महातीर्थ का स्मरण

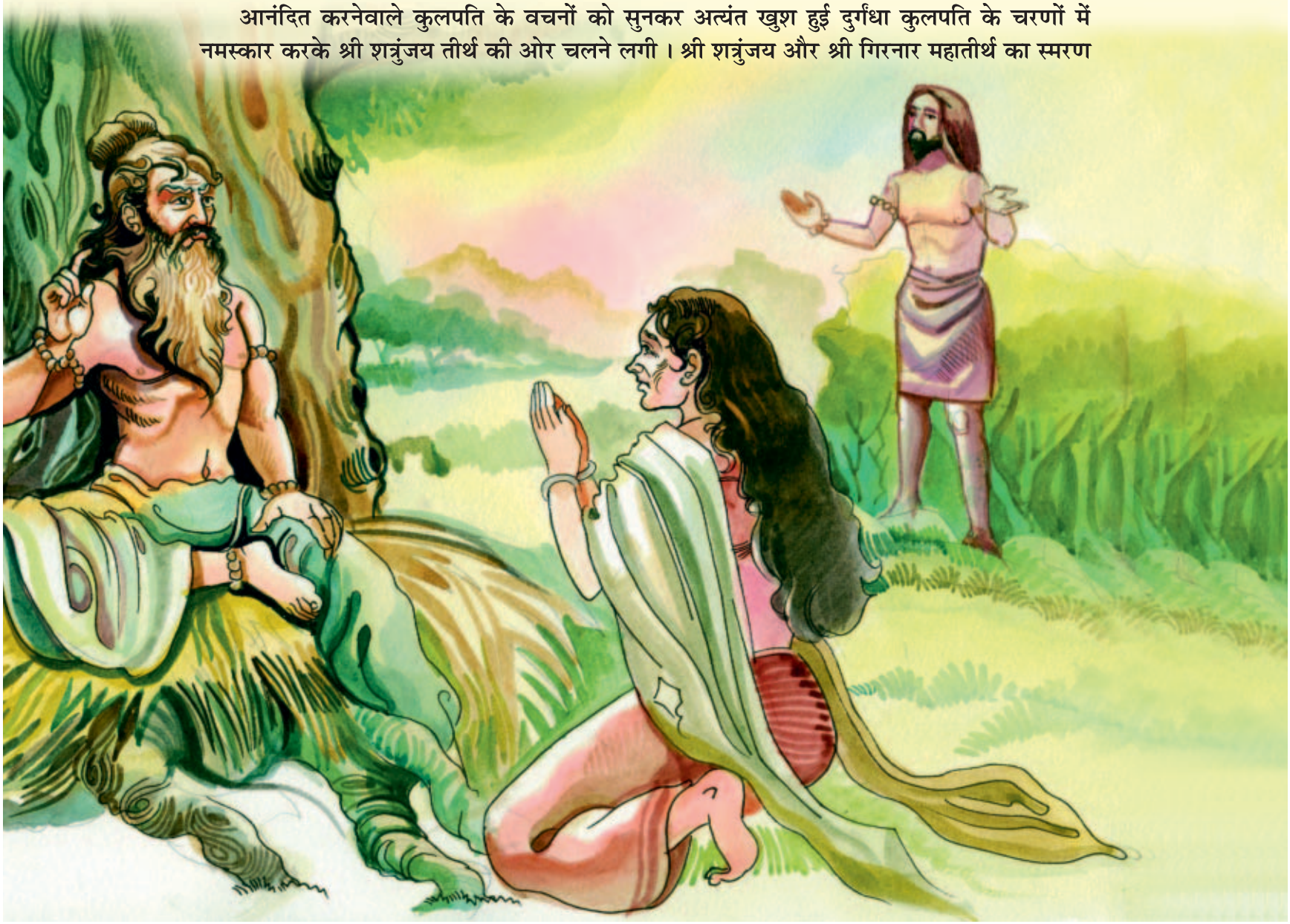

करते हुए वह शत्रुंजय पहुँची । गिरिराज की प्रदक्षिणा की । श्री ऋषभदेव परमात्मा की सेवा भक्ति की और फिर गिरनारजी की दिशा में चलने लगी । श्री रैवतगिरि की शीतल छांव में आकर उत्तर दिशा की ओर के मार्ग से यात्रा शुरू करती है । परंतु अभीभी कर्म बाकी होने के कारण उसे गजपद कुंड में स्नान करने के लिए और जिनभवन में प्रवेश लेने से रोक दिया गया । शरीर में से निकलती दुर्गंध के कारण उसे कहीं भी प्रवेश नहीं मिलता है । फिर भी वह गजपद कुंड से बाहर लाये पवित्र जल से हर रोज स्नान करती है । सातवें दिन उसकी सभी दुर्गंध दूर हुई, सुगंध को प्राप्त की हुई दुर्गंधा गजेंद्रपद कुंड में स्नान करके बहुत भक्तिभाव से जिनेश्वर परमात्मा की पूजा करने गई ।

रैवतगिरिमंडन श्रीनेमिनाथ प्रभु की पूजा करके दुर्गंधा आनंद से भावविभोर हो जाती है । बाहर निकलते ही दुर्गंधा को केवलज्ञानी भगवंत मिलते हैं । पूर्वजन्म को जानने के लिए उत्सुक हुई दुर्गंधा केवलज्ञानी भगवंत को अपने पूर्वजन्म की कथा पूछती है । तब केवली भगवंत कहते हैं कि, "हे भद्रे ! गत जन्म में तुम्हारा जन्म ब्राह्मण कुल में हुआ था । अपवित्रता-असभ्यता, गंदगी तुम्हें बिल्कुल पसंद नहीं थी । इसलिए तुमने श्वेतांबर जैन साधु भगवंतों का मजाक उड़ाया । "हा ! हा ! यह श्वेतांबर साधु तो वनों में भटकते हैं । स्नान भी नहीं करते हैं । इन साधुओं से तो कितनी गंदी बास आती है ! अपने सफ़ेद वस्त्रों को भी वे अपनी मैली देह से मैला करते हैं ।" ऐसे वचन बोल बोल कर तुमने साधु भगवंतों की बहुत निंदा की । इस पाप के उदित होने से तुम मरकर नरक में पैदा हुई । वहाँ से मुर्गी, चाण्डालिनी, गांव की भुण्डन इत्यादि बुरी गति में जन्म लेकर काफी समय तक भटकती रही । अंत में काफी कर्मों का नाश होते ही तुमने अति मूल्यवान ऐसा यह मानव जन्म पाया । परंतु पहले के कुछ शेष रह गए अशुभ कर्मों के कारण इस जन्म में भी तुम्हें दुर्गंध और दुर्भाग्य मिला । हे बालिका ! **इस जगत में सर्वोत्तम पुरुष, तीनों लोकों में पूजनीय ऐसे वीतरागी परमात्मा श्रेष्ठ है** और उनकी आज्ञा के अनुसार विचरण करते हुए साधु भगवंतों की निंदा करना उचित नहीं । समता के भंडार सम यह मुनि भगवंत पांच महाव्रत का सुंदर पालन करते हैं । संयम जीवन की उत्तम आराधना करते हुए मुनि भगवंत चारों दिशा में प्रभु के शासन का प्रचार-प्रसार करते हैं । अरे ! भूल से भी की गई साधु भगवंतों की निंदा या मजाक संसार

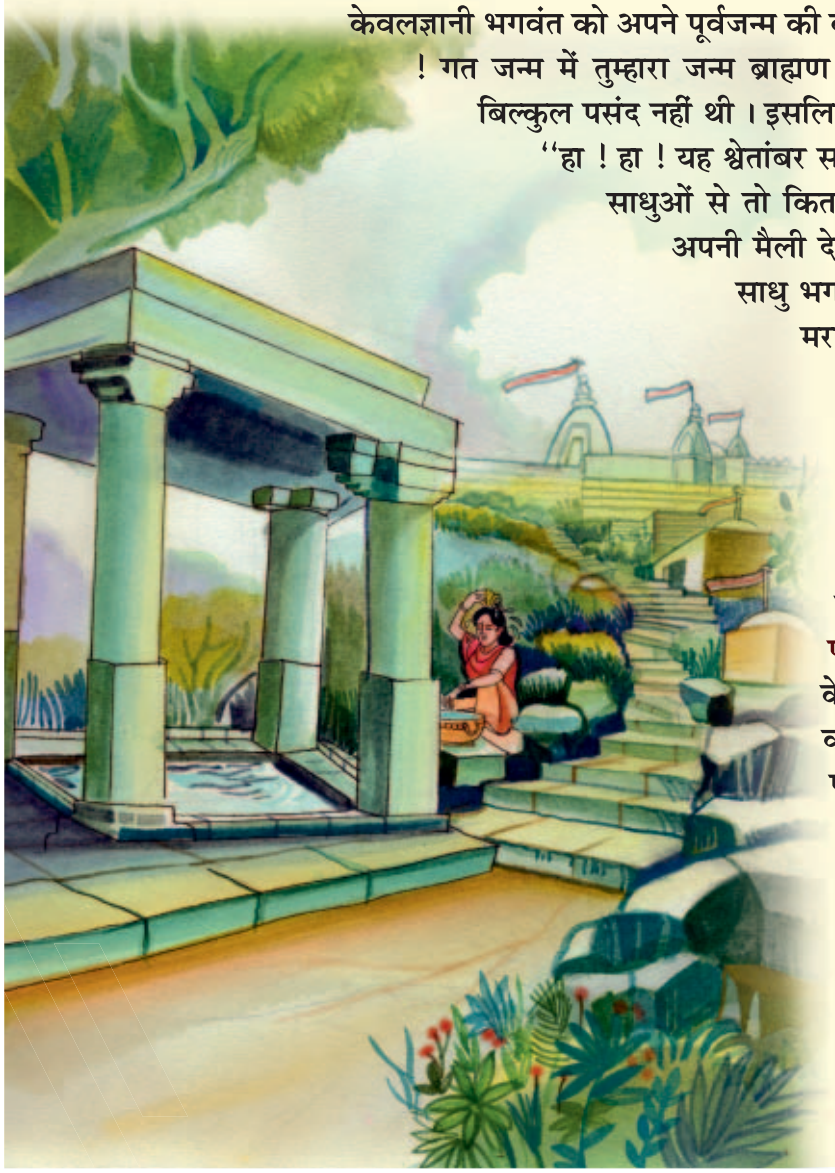

भ्रमण को बढ़ा देती है । कोई भी जीव को त्रास-दुख न हों इसके लिए निरंतर प्रयास करते रहते साधु भगवंत हमेशा पूजने योग्य है । निजी स्वार्थ के बगैर सब को दुर्गति में जाने से रोकनेवाले, ''धर्मलाभ'' शब्द से अनेक जीवों को सही मार्ग दिखानेवाले महात्मा की निंदा क्यूँ करें ?

हे दुर्गंधा ! इस तीर्थ के महाप्रभाव से आज तुम्हारे अनेक जन्मो के अशुभ कर्मों का नाश हुआ है । तुम्हें सम्यक् ज्ञान की प्राप्ति हुई है । बस अब इस तीर्थ की भक्ति करते हुए ही तुम्हारे अनंत संसार के भ्रमण का अंत आएगा और तुम मोक्ष के सुख को पाओगी ।

केवली भगवंत के अमृतवचन सुनकर दुर्गंधा का हृदय आनंद से झूम उठा और मुनिवर के चरणों में उसका मस्तक झुक गया ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ केवली भगवंतों ने कौन से कुंड की महिमा गाई है ? उसका प्रभाव क्या है ?

प्र.२ दुर्गंधा सुगंधवाली कैसे हुई ?

प्र.३ दुर्गंधा ने पूर्व जन्म में कौन सा पाप किया था ?

प्र.४ इस जगत में सर्वश्रेष्ठ कौन हैं ?

प्र. ५ किसकी निंदा- मजाक संसार को बढ़ाती है ?

जो भी गजपदकुंड के पवित्र जल से स्नान करके श्रीजिनेश्वर परमात्मा का प्रक्षालन करता है उनके शरीर के दोष तो दूर होते ही हैं साथ-साथ उनकी आत्मा पर लगे हुअे कर्मरूपी मल का भी नाश होता है । उनका शरीर निर्मल बनता है । साथ में उनकी आत्मा भी पवित्र बनती है । इस पानी को पीने से शरीर में रहे कई प्रकार के रोग भी अल्प समय में नष्ट होते हैं । तो बोलिए ! है न यह जादुई कुंड !!!

सिद्धिदायक रैवतगिरि ८

सोरठ देश (सौराष्ट्र) की पावन भूमि। सुग्रामपुर नाम का नगर । पूर्व जन्मो में किये बूरे कर्मों के उदय के कारण अनेक दोषों के भंडार सम एक क्षत्रिय वहाँ रहता था । किसी भी प्रकार के व्रत और नियम के बगैर वह अपनी इच्छानुसार जीवन व्यतीत कर रहा था । उसके हृदय में कोई भी जीव के लिए प्रेम न था और न किसी के लिए दयाभाव था । बहुत सारे जीवों को वह बूरे भाव से मारता था । सत्य के साथ जैसे उसे दुश्मनी हो वैसे झूठे और कपटी वचन बोलता था । काफी दोषोंवाला वह रास्ते में चलते लोगों को बहुत ही त्रास देता था और आनंदित होता था । इस तरह हत्या आदि महापाप करने के कारण उसके शरीर में सब जगह 'लून' नाम का रोग फैल गया। इस महारोग की भयंकर पीड़ा को सहते हुए वह गांव गांव और नगर-नगर दुखी बनकर भटक रहा था ।

पूर्व जन्मो में किये हुए कोई पुण्य कर्म की वजह से उसे एक जैन मुनि भगवंत का मिलन हुआ । क्षत्रिय ने उन्हें अपनी दुखभरी दास्ताँ सुनाई और इस दुख से मुक्ति पाने का उपाय बताने की प्रार्थना की । वह मुनिवर ने श्रीरैवतगिरि महातीर्थ के माहात्म्य का अद्भुत वर्णन किया । सर्व तीर्थों में उत्तम श्री गिरनार

महातीर्थ के दर्शन मात्र से जीवों के पाप नष्ट होते हैं, तो इसकी भक्ति और सेवा करने से कितने ही लाभ होंगे..! तीर्थ के प्रभाव को अनुभव करने के लिए वह श्रीरैवताचल महातीर्थ की यात्रा करने के लिए चल पड़ता है । थोड़े ही समय में वह रैवतगिरि पहुंच जाता है । यात्रा करके श्रीनेमिनाथ प्रभु के दर्शन से अपने नेत्रों को पावन करता है । बहुत उत्तम भाव से प्रभु की पूजा-भक्ति करके उज्जयन्ती नदी के पवित्र जल में स्नान करता है । उसके रोगों का सम्पूर्ण नाश होता है । अंत में वह समाधिपूर्वक मृत्यु को प्राप्त करके सूर्य जैसा तेजस्वी, दसों दिशाओं में प्रकाश फैलाता, अति सुंदर रूपवाला देव हुआ ।

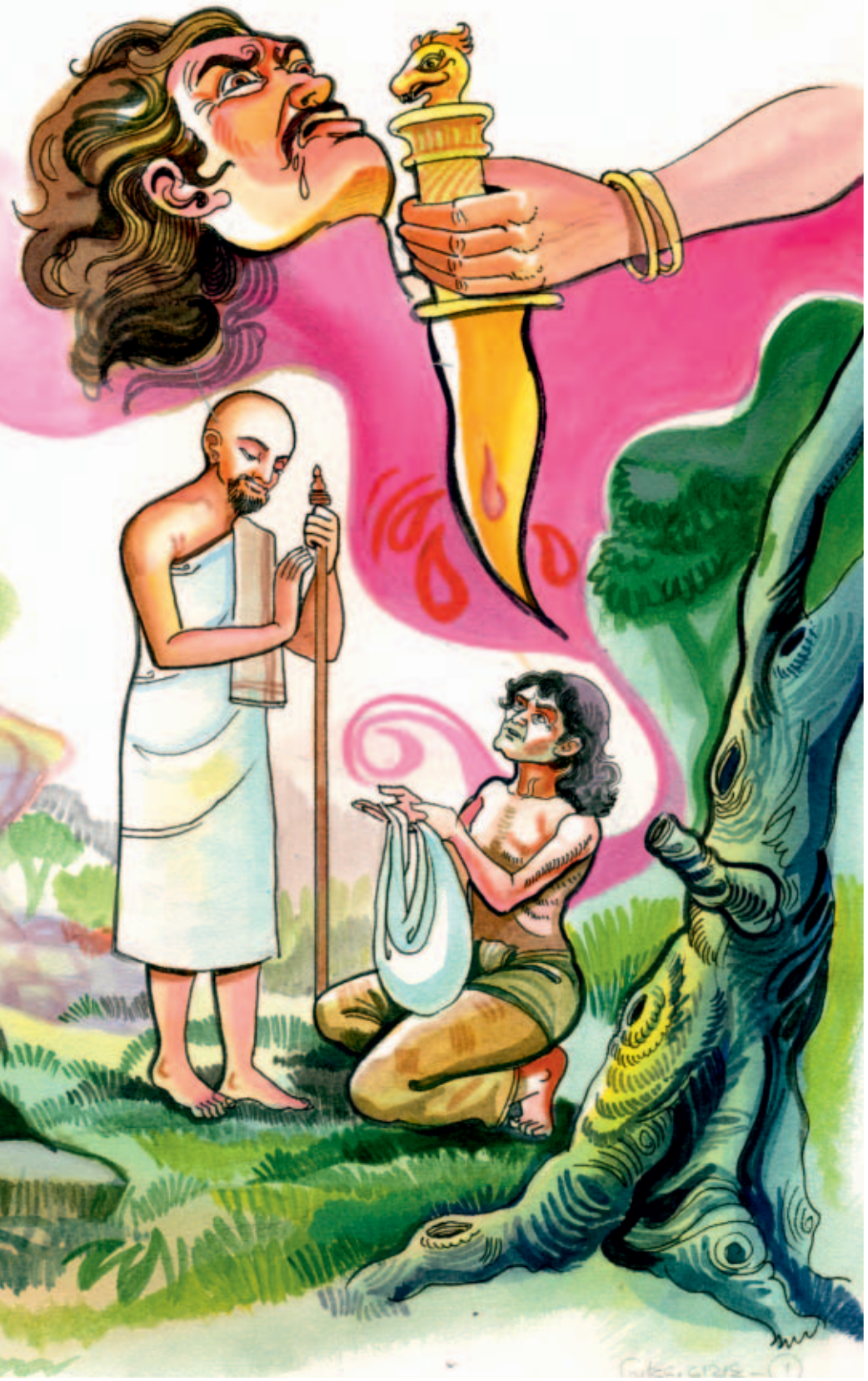

देवलोक के सुखों में मौज मस्ती करते हुए अचानक वह देव को परमात्मा और महातीर्थ के परम उपकार याद आये । पूर्व में भरत महाराजा ने बनाये हुए

श्रीनेमिनाथ प्रभु के जिनालय में पूजा भक्ति करने से उसके पापों का नाश हुआ था और रैवतगिरि महातीर्थ के प्रभाव से उसे देवत्व का सुख मिला था। उन उपकारों से थोडा ऋणमुक्त होने के लिए वह फिर से रैवतगिरि की यात्रा-भक्ति करने के लिए चला जाता है। वहाँ जाकर जिनालयों का निर्माण भी करता है। 'जिसके अद्भुत प्रभाव से मुझे यह दिव्य सुख मिले हैं उस तीर्थ की भक्ति न करूँ तो, उसके उपकारों को याद न रखूँ तो उस पाप के परिणाम स्वरूप दुर्गति में ही जाना पडेगा। तदुपरांत यह तीर्थ की भक्ति से भविष्य के जन्मो में मुझे आनंद दायक केवलज्ञान और मोक्ष का सुख मिलेगा। इसलिए यह तीर्थ को ही मेरा आश्रय स्थान बना लूँ'। ऐसा सोचकर वह रैवतगिरि तीर्थ में 'सिद्धि विनायक' नाम का अधिष्ठाता बना। वह श्रीनेमिनाथ परमात्मा के भक्तों के सभी इच्छित कार्यों को पूर्ण करने में सहाय करता है।

❋

प्रश्न :

प्र. १ क्षत्रिय किसके प्रभाव से देवत्व को प्राप्त करता है ?

प्र.२ उपकार करनेवालों के उपकार याद न रखने से क्या होता है ?

प्र.३ सिद्धि विनायक देव कहाँ बसते हैं ? और क्या करते हैं ?

पुण्य के ढेर समान श्रीगिरनार महातीर्थ की भक्ति करने से महापाप करनेवाले और महादुष्ट रोगोंवाले जीव भी सुख पाते है। यह तीर्थ की सेवा से पुण्यशालि इसी जन्म में सुख-शांति-संपत्ति और अगले जन्म में सद्गति को प्राप्त करते हैं।

राजर्षि भीमसेन ९

यह जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में एक श्रेष्ठ नगरी थी । उसका नाम श्रावस्ति । वहाँ पर सर्व गुणों से सुशोभित 'वज्रसेन' नाम का राजा न्यायपूर्वक राज्य करता था । वह श्रीजिनेश्वर भगवान का परम भक्त था । उसकी अत्यंत सुंदर 'सुभद्रा' नाम की पत्नी थी । उनको भीमसेन नाम का पुत्र था । यह भीमसेन बहुत ही बूरे स्वभाववाला था । चोरी, जूआ इत्यादि सात व्यसनों में वह डूबा रहता । जिसका कोई अपराध भी न हो ऐसे जीवों को भी वह हैरान परेशान करता था । ऐसे स्वभाव के कारण माता-पिता और गुरुजन् कोई भी उसे मान नहीं देते थे । हमेशा ही उसका तिरस्कार करते ।

राजा वज्रसेन ने भीमसेन को युवराज पद पर स्थापित किया । इसलिए वह कोई भी रोक-टोक के बिना पराई स्त्री को हैरान करता था । तथा अन्य लोगों के द्रव्यों की चोरी भी करता था । इस तरह वह भीमसेन प्रजाजनों को अत्यंत दुख देता है । प्रजाजन उसके त्रास से तंग आकर महाराजा के पास जाकर भीमसेन की फरियाद करते हैं । प्रजाजनों की फरियाद भरी बिनती सुनकर महाराजा भीमसेन को अकेले बुलाकर उसे हितवचन कहते हैं, "हे वत्स तुम यह बुराई का रास्ता छोड़कर न्यायपूर्वक सच्चाई के रास्ते पर चलो । प्रजा से ही राजा शोभित होता है । प्रजा बिना राजा केवल नाम का ही राजा बनता है । शास्त्रों में भी कहा है कि, "पराई स्त्री या दूसरे का द्रव्य लेना नहीं चाहिए, माता-पिता-गुरु और परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए । अन्याय का मार्ग त्यागकर न्याय का मार्ग ही स्वीकारने योग्य है । सात व्यसनों का त्याग करना ही महाराजा का श्रेष्ठ धर्म है । अपने वचनों का पालन करना और धैर्य रखना इनसे ही यश, कीर्ति, धन और स्वर्ग की प्राप्ति होती है" इस तरह बारबार हितवचन कहने पर भी भीमसेन सुधरता नहीं है । बल्कि और ज्यादा गलत कार्य करता रहता है । आखिर थककर राजा भीमसेन को कैद कर देते हैं । वहाँ रहने पर भी एक बार बूरे नौकर द्वारा वह जेल से भागकर अपने गलत मित्रों की बात में आकर गुस्से में अपने माता-पिता की हत्या कर देता है । पिता की मृत्यु के बाद वह खुद ही राजा बनकर बूरे संगियों की सोबत से व्यसनों में डुबकर प्रजाको ज्यादा परेशान करने लगा ।

भीमसेनके अत्याचारों से थके हुए प्रजाजनों और मंत्रियों ने चर्चा-विचार किया । वह पापी को राजगद्दी के लिए अयोग्य घोषित कर के जंगल में छोड़ आये । बाद में भीमसेन के छोटे भाई जयसेन को शुभमुहूर्त में राजगद्दी पर बिठाया ।

ईस ओर देश से बाहर निकाला गया भीमसेन दूसरे देशों में भटकता हुआ बूरे कर्मों को चालू ही रखता है । यहाँ-वहाँ चोरी करता है, थोड़े धन के लिए भी वह रास्ते पर आते-जाते लोगों को मार डालता है । ऐसे बूरे काम करते हुए और भटकते हुए वह मगध देश में पृथ्वीपुर नगर में आया । वहाँ कोई माली के

यहाँ सेवक बनकर रहा । वहाँ भी पत्ते, फूल और फल की चोरी करते हुए पकड़े जाने पर उसे निकाल दिया गया । फिर वह कोई श्रेष्ठी की दुकान में नौकरी में लगा, वहाँ भी पहले की तरह चोरी करने पर शेठ ने उसे निकाल दिया । श्रेष्ठी की दुकान से निकलकर भीमसेन 'ईश्वरदत्त' नाम के कोई व्यापारी के वहाँ नौकरी में लगा और वहाँ से व्यापार के लिए दूसरे देश में धन उपार्जन के लिए जाते हुए ईश्वरदत्त के साथ धन का लोभी भीमसेन भी जहाज में बैठकर अन्यत्र चला जाता है ।

एक माह तक समुद्रयात्रा के बाद किसी दुर्घटना में जहाज फंस गया । अनेक उपाय करने के बाद भी जहाज अपनी जगह से आगे चला नहीं । दिन गुजरते जहाज में रहा अन्न-जल भी खत्म हो गया । तब ईश्वरदत्त पंच परमेष्ठी नमस्कार का स्मरण करके समुद्र में कूदकर जान देने का विचार करता है । तब अचानक एक तोता वहाँ आकर कहने लगा कि, "हे श्रेष्ठी ! तुम्हें मरने की कोई जरूरत नहीं, मैं तुम्हें जीने का उपाय बताता हूँ । मैं सामने दिखनेवाले पहाड़ का अधिष्ठाता देव हूँ । तुम पर आई दया के कारण मैं यहाँ आया हूँ । तुम में से कोई एक मनुष्य मृत्यु की स्वीकार के साथ समुद्र में कूदकर और फिर तैरकर पर्वत पर रहे भारंड पंछी को उड़ाने का काम करेगा तो उसकी पंख के

पवन से तुम्हारा जहाज जहाँ फंसा है वहाँ से छूटकर तुरंत ही आगे चलने लगेगा और बाकी रहे सभी के प्राण बच जायेंगे'' । इस प्रकार की दैवी वाणी सुनकर कोई भी व्यक्ति इस कार्य करने के लिए तैयार हो ऐसी सूचना जाहिर की गई । सौ दीनार की लालच से भीमसेन समुद्र में कूदने के लिए राजी हो गया । तोते के कहने के मुताबिक भारंड पंछी को उड़ाने पर उसकी पंखों के पवन से जहाज चलने लगा । भीमसेन वह पर्वत के नजदीक ही रह जाता है । वह अपने प्राण बचाने का उपाय तोते को ही पूछता है तब तोता कहता है कि, ''तुम धैर्य रखकर समंदर में कूद जाओ ! वहाँ बड़े मत्स्य तुम्हें निगलकर समुद्र के किनारे पर ले जाये तब इस दवाई को तुम उसके गले में डाल देना । दवाई के प्रभाव से उसके गले में बड़ा सा छिद्र होगा । उनमें से बाहर निकलकर किनारे पर तुम्हें जहाँ जाना हो वहाँ चले जाना ।''

तोते का उपाय सुनकर भीमसेन भी जीने की इच्छा से वो सब करता है । वह सिंहल तट पर पहुँचता है । वहाँ भूख-प्यास से व्याकुल वह वनों में भटकता, जल और फल इत्यादि लेकर वह कोई एक दिशा में प्रस्थान करता है । तब मार्ग में एक त्रिदंडी साधु को देखकर वह नमस्कार करता है । त्रिदंडी साधु भी उसे आशीर्वाद देकर पूछते है, ''है वत्स ! तुम कौन हो ? इस वन में क्यूँ घूम रहे हो ?'' भीमसेन अपने दुःखों से त्रस्त होकर अपने आप को भाग्य विहीन मानकर अपने दुखों की कथा वह तपस्वी महापुरुष को कहता है । ''ज्यादा तो क्या कहूँ ? मैं जहाँ भी जाता हूँ वहाँ सब जगह मुझे नुकसान ही होता है, मेरा कार्य होता ही नहीं । मैं बूरे नसीबवाला होने से मेरे जाते ही वृक्ष पर से फल, नदियों में से पानी और रोहनगिरि में से रत्न भी गायब हो जाते हैं । मुझे भाई-बहन, माँ-बाप या पत्नी इत्यादि न होने के बावजूद मैं अपना पेट नहीं पाल सकता हूँ ।''

भीमसेन की दुख भरी कथा सुनकर लुच्चाई में पंडित वैसा वह त्रिदंडी आँखों में से अश्रु गिराकर कहने लगा, ''हे वत्स ! तुम दुखी न हों ! तुम अपने अच्छे पुण्य से मेरे पास आये हो । अब समझ लो कि तुम्हारी गरीबी दूर हुई है ! तुम

मेरे साथ सिंहल द्वीप चलो ! वहाँ रत्नों की खान में जाकर रत्न पाकर तुम्हारे दुख का नाश हो जाएगा ।'' त्रिदंडी मुनि के लुच्चाई भरे वचन पर विश्वास करके भीमसेन उनके साथ रत्नों की खान की ओर जाने को निकला । थोड़े दिन बाद वे दोनों रत्नों की खान तक पहुँचे । भीमसेन को कृष्णपक्ष की चौदस तिथि की अंधेरी रात में त्रिदंडी मुनि खान में उतारते हैं । रत्न निकालकर भीमसेन वह त्रिदंडी मुनि को देता है । वह त्रिदंडी रत्नों को लेकर कपट से रस्सी काटकर तुरंत वहाँ से गायब हो जाता है ।

भीमसेन खान में इधर उधर देखता, अत्यंत दुखी, कमजोर हुए देहवाले एक पुरुष को देखता है । वह पुरुष भी भीमसेन को देखकर कहता है, ''हे भद्र ! तुम भी रत्नों के लोभ में आकर उस दुष्ट त्रिदंडी तापस से इस खान में फेंके गए हो ऐसा लगता है ।'' भीमसेन ने भी इस बात का स्वीकार करके इस खान से बाहर निकलने का रास्ता पूछा तब वह कहता है, ''कल सुबह इस खान के अधिष्ठाता 'रत्नचंद्र' नाम के देव की पूजा के लिए देव-देवियाँ आएगी । उस वक्त गीत-नृत्य देखने में देवता व्यस्त होंगे तब उनके सेवकों के साथ तुम बाहर निकल सकते हो । यह बात सुनकर भीमसेन बहुत ही खुश होता है । दूसरे दिन चतुराई से वह बाहर निकल जाता है ।

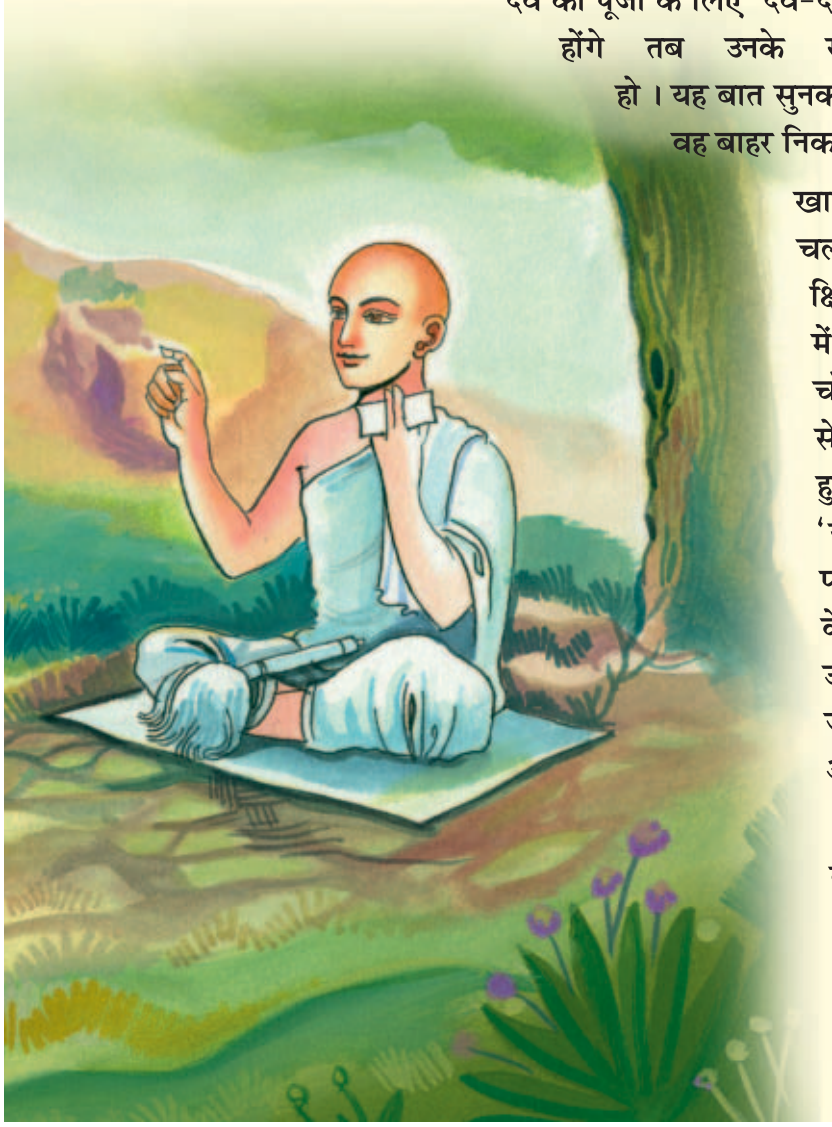

खान में से बाहर निकल कर भीमसेन धीरे-धीरे रास्ते पर चलते हुए काफी दिनों के बाद सिंहल द्वीप के मुख्य नगर क्षितिमंडनपुर में आता है । वहाँ कोई श्रेष्ठी के यहाँ गोदाम में सेवक बनकर काम करने लगा है । मगर बचपन से चोरी करने के बूरे संस्कार के कारण भीमसेन गोदाम में से भी चोरी करता है । एक बार रक्षकों द्वारा चोरी करते हुए भीमसेन पकड़ा जाता है । उसको बांधकर नगर में 'यह चोर है' ऐसे जाहिर करते हुए उसे गलियों में घुमाकर फाँसी देने के लिए ले जाया जाता है । उसी समय व्यापार के लिए गांव में आये ईश्वरदत्त श्रेष्ठी वहाँ से गुजरते हैं । उनकी नजर भीमसेन पर जाती है । समुद्र में फंसे हुए जहाज को छुड़ानेवाले भीमसेन के उपकार याद आते है और वह राजा से भीमसेन को छुड़ाते है ।

बाद में ईश्वरदत्त भीमसेन को अपने साथ जहाज में लेकर पृथ्वीपुर नगर में आते हैं । एकबार किसी परदेशी

को देखकर बातों बातों में भीमसेन अपने दुखों की कथा कहता है। तब वह पुरुष उसको कहता हैं कि, "तुम दुखी न हो ! मेरे साथ चलो ! हम रोहनाचल में रत्नों की खोज के लिए जाते हैं।" दोनों साथ में रोहनाचल की ओर चलने लगते हैं। तब बीच मार्ग में एक तापस के आश्रम में जाते हैं। वहाँ 'जटिल' नामक वृद्ध तापस को देखकर नमस्कार करते हैं। उस दौरान उस तापस का कोई 'जांगल' नाम का शिष्य आकाशमार्ग से वहाँ आता है। नीचे उतरकर वह गुरु जटिल तापस को विधिवत् नमस्कार करते हुए उनके चरण में बैठ जाता है। बहुत दिनों के बाद आये हुए अपने शिष्य को देखकर जटिल तापस उनको पूछते हैं, "हे वत्स ! हाल तुम कहाँ से आ रहे हो ? इतने दिनों से कहाँ थे ?" जांगल कहता है, "स्वामी ! हाल सोरठ देश के श्री शत्रुंजय और श्री गिरनार महातीर्थ की यात्रा करके यहाँ आया हूँ। वह दोनों तीर्थों की सम्पूर्ण महिमा का वर्णन कोई कर सकता नहीं है। केवली भगवंत केवलज्ञान से उसकी महिमा जान सकते हैं। किंतु वे भी उसका वर्णन नहीं कर पाते। उसमें भी रैवतगिरि की महिमा तो मैंने सुनी भी है और साक्षात् देखी भी है। इस महातीर्थ की सेवा से जीवों को सुख-संपत्ति, रिद्धि-सिद्धि भी सरलता से प्राप्त होती है और थोड़े ही समय में जीव मुक्ति पद को भी पा लेता है।"

ईस तरह रैवतगिरि की महिमा सुनकर सभी तापस, भीमसेन और वह परदेशी आश्चर्यचकित हुए। महिमा सुनकर आनंदित हुआ भीमसेन पहले रोहनाचल जाकर बाद में रैवतगिरि की यात्रा पर जाने की सोचता है। मार्ग में काफी गाँव-नगर-वन इत्यादि से गुजरकर वे दोनो रोहनाचल पर्वत के पास आ पहुँचे विधिपूर्वक पर्वत के अधिष्ठाता देव की पूजा करके खान से दो महाकींमती रत्न प्राप्त किये। एक रत्न परदेशी को दिया और दूसरा रत्न अपने साथ लेकर भीमसेन जहाज में बैठकर अन्य स्थल के लिए रवाना हुआ। समुद्रयात्रा के दौरान पूर्णिमा के दिन सोलह कलाओं से खिले हुए चंद्र के दर्शन करते हुए चंद्रमा का तेज ज्यादा है या मेरे रत्न का ऐसा विचार करते हुए भीमसेन ने अपना रत्न बाहर निकाला।

परंतु अभी भी उसकी बूरे कर्मो की परंपरा चालू ही हो वैसे उसका रत्न समुद्र में गिर गया। कहा जाता है न कि, "नसीब से ज्यादा किसी को मिलता नहीं और अगर नसीब में हो तो कहीं जाता नहीं।" ऐसी घटना घटते ही भीमसेन तुरंत ही बेहोश हो गया। थोड़े समय के बाद शीतल जल छिड़कने से भीमसेन फिर से होश में आकर जोर से रोने लगा और

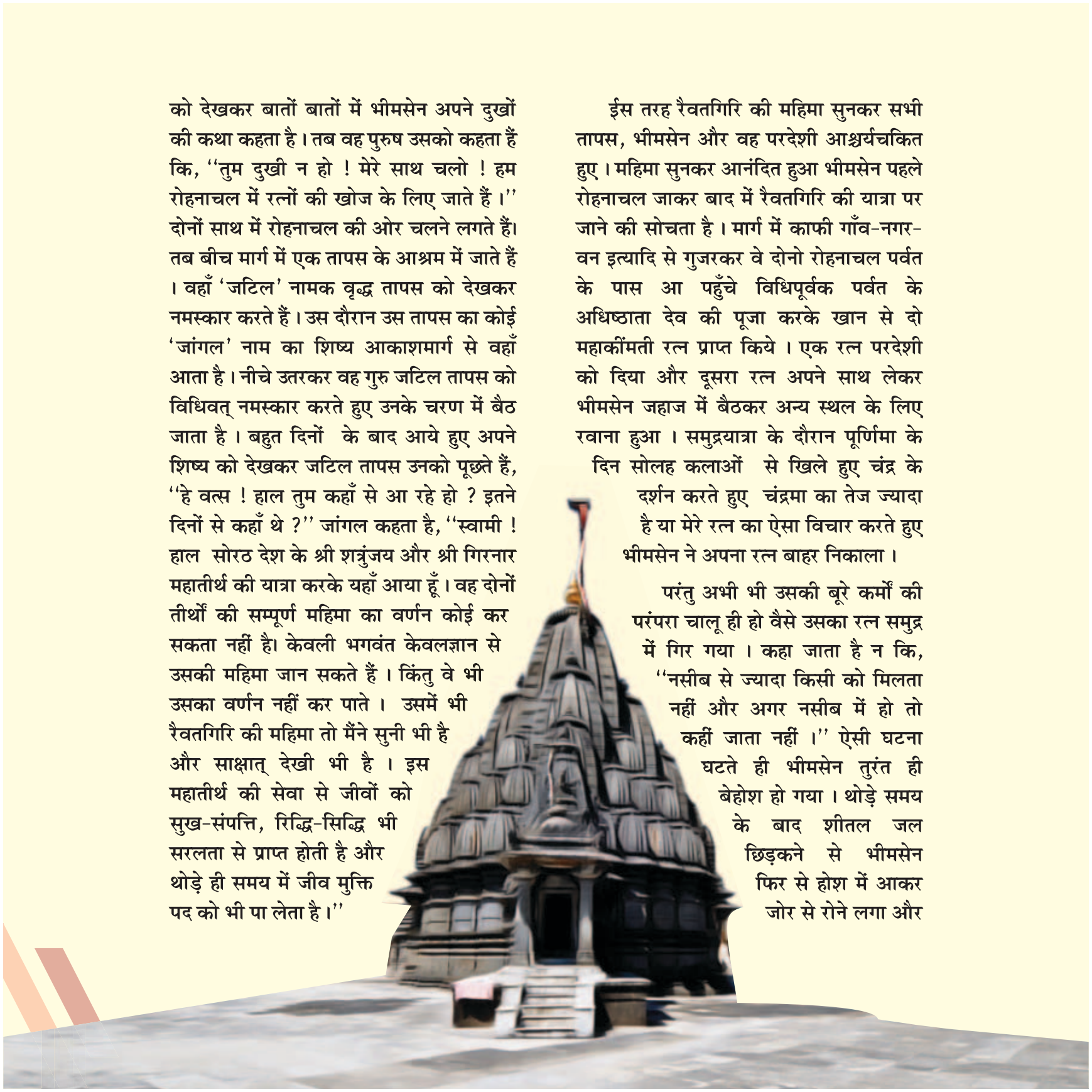

कहने लगा कि "मेरा रत्न समुद्र में गिर गया ! मेरा रत्न समुद्र में गिर गया !, मैं लूट गया !" उसके ऐसे दुख भरे वचन सुनकर वह मित्र बना परदेशी उसको धैर्य रखने को समझाता हैं और कहता है कि, "यदि हम जिंदा रहेंगे तो मैं तुम्हें और ज्यादा रत्न ला दूंगा । तुम निराश न हों ! फिलहाल तो गरीबी के दुख को दूर करनेवाले और महाप्रभावक श्री रैवताचल की ओर जाना ही ठीक है । वहाँ तुम्हारी इच्छापूर्ति हो जाएगी अथवा तो तुम मेरा रत्न रख लो" ऐसे आश्वासन युक्त वचनों से भीमसेन शांत हुआ ।

धीरे धीरे समुद्रमार्ग से गुजरते हुए वे दोनों श्रीरैवतगिरि महातीर्थ की ओर आगे बढ़े । अपने बूरे कर्मों के साथ मार्ग में आगे बढ़ते हुए वे चोरों के हाथों लूट गये । वस्त्र-भोजन इत्यादि सबकुछ गंवाकर साधु बन गए, वे दोनों अनेक दुख सहन करते हुए आगे बढ़ रहे थे । वहाँ मार्ग में उन्हें एक मुनि भगवंत मिलते हैं । महात्मा के दर्शन होते ही दोनों के हृदय में खुशी होती है । महात्मा को नमस्कार करके अपने सभी दुखो का वर्णन करते हुए भीमसेन कहता है, "स्वामी ! हमारे अशुभ कर्मों को नाश करने के लिए कोई उपाय बताने की कृपा करें अथवा पर्वत पर से कूद कर मृत्यु का शरण करना ही सब से अच्छा उपाय हमें दिखाई देता है" ।

करुणा के सागर, दया के भंडार वैसे मुनिवर भी उनकी बात सुनकर उन्हें सांत्वना देते हुए कहते है कि, "हे युवाओं आपने पूर्व जन्म में कोई धर्म की आराधना की नहीं हैं । इसलिए इतने दुखी दिखाई देते हो । शास्त्रों में कहा है कि" जीवोंको अच्छे कुल में जन्म, अच्छा स्वास्थ्य, अच्छा नसीब, अत्यंत सुख, धन, लंबा आयु, यश, विद्या, लाखों लोगों के द्वारा सेवा, विजय एवं इंद्र पद इत्यादि सब धर्म से ही मिलता है ।"

इसीलिए हे भीमसेन ! तू अब बूरे विचारों को दूर कर ! तुमने गत जन्म में अठारह घड़ी तक मुनि को पीड़ा पहुँचाई थी । सज्जन पुरुषों को मुनि भगवंतों की बहुत आदर के साथ सेवा भक्ति द्वारा आराधना करनी चाहिए । आराधना करने से दुखो का नाश होता है और उन्हें दुख देने से हमें दुख मिलता है । उसके फल स्वरूप तू इतने साल तक दुखी हुआ । अब श्रीरैवतगिरि महातीर्थ की सेवा-भक्ति करने से तुम्हारे सभी कर्मों का नाश होने से तू सर्व संपत्ति का स्वामी बनेगा और मोक्ष को पायेगा । इसलिए तू अब दुख का त्याग करके श्रीरैवतगिरि जाने की तैयारी कर !" मुनि भगवंत के ऐसे प्रेमपूर्ण वचन सुनकर उत्साह के साथ भीमसेन रैवतगिरि महातीर्थ की ओर जाने को निकलता है । वहाँ पहुँचकर कठिन तपस्या करके शरीर के प्रति ममत्व को छोड़ देता है । रैवतगिरि के प्रभाव का अनुभव करता है । तब एक बार भीमसेन संघ के साथ आये हुए अपने छोटे भाई जयसेन राजा को जिनालय में प्रदक्षिणा करते हुए देखता है । महाराजा, राजमंत्री, राज्य के लोग भी उसे पहचान लेते है । प्रदक्षिणा देने के बाद जयसेन राजा आनंद से उस के गले मीलते है ।

जयसेन राजा आनंदाश्रु के साथ नम्रता से भीमसेन को कहते है, "हे बड़े भैया ! ऐसा कोई स्थान बाकी नहीं था कि जहाँ मैंने आपको ढूंढा नहीं हो । बड़े भैया आप इतने सालों से कहाँ रहे थे ? पधारिए ! अब अपने राज्य का स्वीकार कीजिए !" छोटे भाई का आग्रह देख भीमसेन भी राज्य के स्वीकार के लिए राजी हो जाता है । महाराजा भीमसेन, जयसेन, मंत्रीगण और सब लोगों ने इस तीर्थ की पूजा, स्नात्र, इत्यादि विधि की और अपने राज्य की ओर निकल गये ।

जयसेन ने बहुत ही बड़े महोत्सव के साथ नूतन महाराजा भीमसेन का नगर में प्रवेश करवाया । समग्र नगरजनों के हृदय में आनंद था। नगर के मार्गों पर रंगोली, नृत्य-गान आदि अनेक प्रकार से उत्सव हो रहे थे । महाराजा भीमसेन भी पहले के व्यसनों को छोड़कर प्रेम और न्यायपूर्वक अपनी प्रजा का ध्यान रखते हुए राज्य का पालन करता है । उनके राज्य में प्रजा को चोर वगैरह का भय न था । अतीत में गुस्से में आकर की हुई माता-पिता की हत्या का पाप उसे बहुत ही कचोटता था । उस पाप से मुक्ति के लिए उसने गाँव-गाँव में जिनेश्वर परमात्मा के जिनालयों का निर्माण करवाया । देव-गुरु की सेवा, साधार्मिक भक्ति, गरीब लोगों पर दया इत्यादि परोपकार करते हुए भीमसेन राज्य का सुंदर तरीके से पालन करता था ।

समय बीतने पर एक दिन जिनेश्वर परमात्मा की भक्ति में एकाग्र एक विद्याधर को वह अपने बगीचे में देखता है । भीमसेन उनको पूछता है कि, "हे भद्र पुरुष ! आप कहाँ से आये हैं ?" विद्याधर ने कहा, "महाराज ! श्री शत्रुंजय महातीर्थ और श्रीरैवतगिरि की यात्रा करके मैं यहाँ जिनेश्वर परमात्मा की भक्ति करने के लिए आया हूँ ।" विद्याधर के वचन सुनकर महाराजा भीमसेन सोचने लगे कि, "अहो ! धिक्कार है मुझे ! जिस रैवतगिरि महातीर्थ के प्रभाव से मैं आज इतने सुख का स्वामी बना हूँ उसे मैं याद तक नहीं करता ! और फिर से वह महातीर्थ की यात्रा-भक्ति करने का विचार भी नहीं करता ।"

उपकारी के उपकारों को भूला हुआ महाराजा भीमसेन बहुत दुखी हुआ । दीक्षा लेने की इच्छा से राज्य का सभी भार छोटे भाई जयसेन को सौंप देता है । उसके बाद थोड़े सेवकों के साथ रैवताचल आने को निकलता है । पहले श्रीसिध्धगिरि महातीर्थ पर श्रीआदिनाथ दादा की पूजा-भक्ति वगैरह का आठ दिन का महोत्सव करता है । फिर वह रैवतगिरि तीर्थ पर जाते है । वहाँ कपूर, केसर, श्रेष्ठ चंदन, विविध फूलों से

श्रीनेमिनाथ परमात्मा की पूजा करते हैं। बहुत ही उत्सवपूर्वक परमात्मा की भक्ति करते हैं। दान-शील-तप और भावरूप चतुर्विध धर्म की उत्तम आराधना करते हैं।

अवसर से ज्ञानचंद्र मुनि वहाँ पधारे हैं। उन की मीठी-मधुर वाणी सुनकर संसार के प्रति वैराग हो जाता हैं। भीमसेन उनके पास दीक्षा लेता हैं। संयमधर्म की साधना में लीन होकर राजर्षि भीमसेन ज्ञानशिला में अत्यंत कठिन तप की आराधना करते है। पूर्व में खुद ने किये महापाप कर्मो को तप रूपी अग्नि से जलाकर वह यह रैवतगिरि महातीर्थ के अत्यंत प्रभाव से आठवें दिन केवलज्ञान को प्राप्त करते हैं। और अवसर से आयु पूर्ण करके मोक्ष गति को प्राप्त करते है।

❋

प्रश्न :

प्र. १ सज्जन पुरुषों को किसकी भक्ति करनी चाहिए ? उससे क्या मिलता है ?

प्र. २ धर्म से जीव को क्या प्राप्त होता है ?

प्र. ३ भीमसेन कीसके पास दीक्षा लेता है ?

यह तीर्थ के प्रभाव से महापापी, महा रोगोंवाले भी मोक्ष सुख के स्वामी बनते है। इस तीर्थ में किया हुआ थोड़ा सा दान मोक्ष सुख की प्राप्ति करवाता है। इस तरह यह तीर्थ पर से बहुत ही पापी, दुष्ट आत्माएं भी अपने अशुभ कर्मों का नाश करके मुक्ति सुख को पाये हैं।

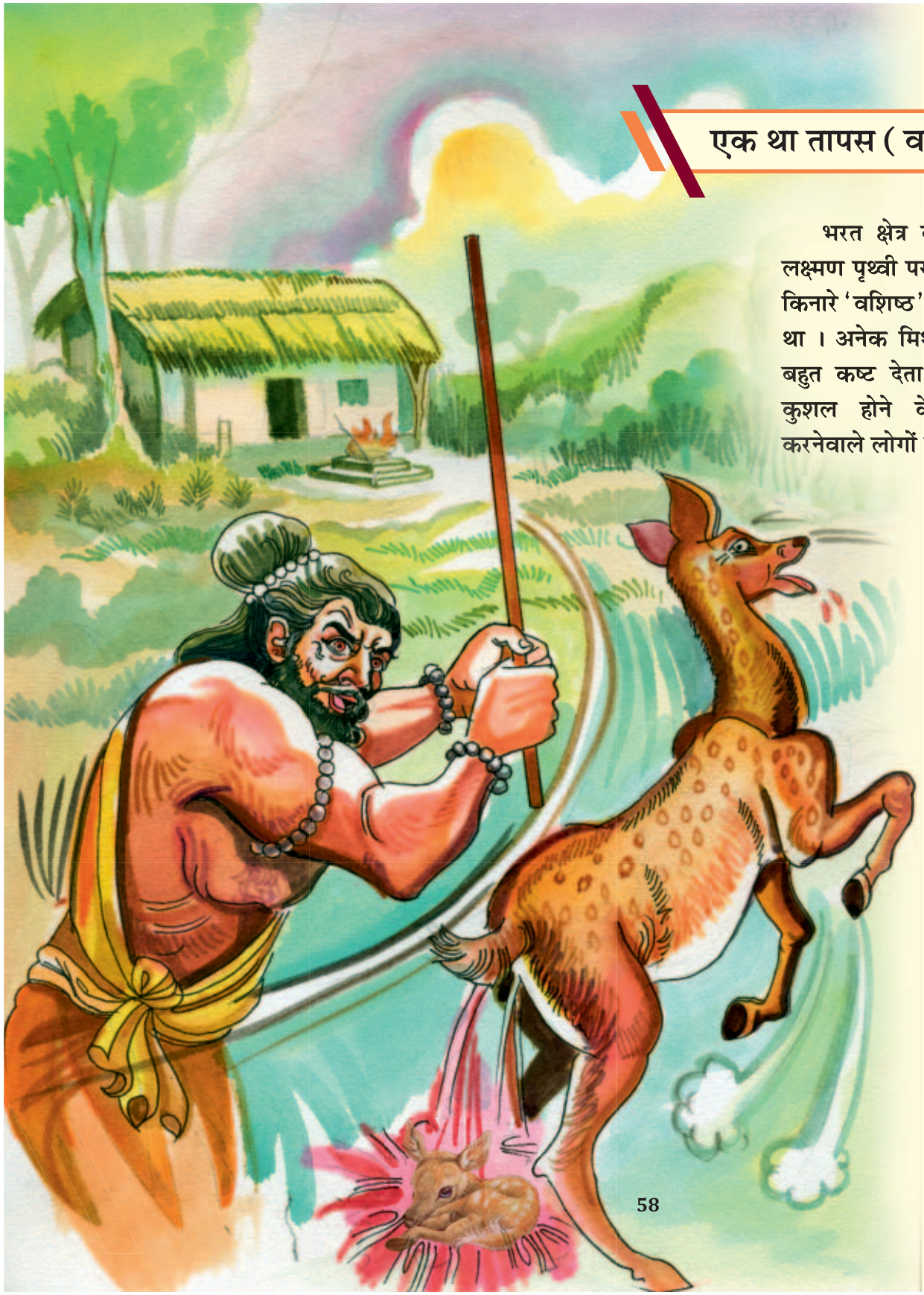

एक था तापस (वशिष्ठ मुनि) १०

भरत क्षेत्र की भूमि पर आठवें वासुदेव लक्ष्मण पृथ्वी पर राज्य करते थे । एक नदी के किनारे 'वशिष्ठ' नाम का एक तापस मुनि रहता था । अनेक मिथ्या तप करके वह शरीर को बहुत कष्ट देता था । वह मंत्र-तंत्र में बहुत कुशल होने के कारण मिथ्या आचरण करनेवाले लोगों में बहुत माननीय था ।

वह तापस पत्तो से बनी पर्णकुटी में रहता था । कंदमूल और फल का आहार और शुद्ध पानी से जीवन जीता था । एक बार पर्णकुटी के आंगन में उगे धान्य को खाने के लिए एक गर्भ धारण की हुई हिरनी वहाँ आ पहुँची । हिंसक स्वभाववाला वशिष्ठ मुनि दबे पाँव हिरनी के पीछे गया और उसके शरीर पर लाठी से जोर से मार मारा । हिरनी के पेट पर हुए भयंकर प्रहार के कारण उसका पेट फट गया । फटे हुए पेट से हिरनी का अपूर्ण विकासवाला

बच्चा बाहर निकल गया । मार की भयंकर पीड़ा से हिरनी वहाँ पर ही मर गई । साथ में उसका बच्चा भी मर गया ।

हिरनी और उसके बच्चे की मृत्यु के दृश्य को देखकर हिंसक हृदयवाले वशिष्ठ तापस के हृदय में दया और वात्सल्य उत्पन्न हुआ । एक ओर उसे अपने गलत कार्य करने पर पछतावा होता है और दूसरी ओर उसकी चारों ओर के लोग उसका अपमान करते है । वह सब जगह तिरस्कृत हो जाता है । उसका मुंह देखना भी किसी को पसंद नहीं है । बच्चे और स्त्री को मारने वाले उस को सब द्वेष दृष्टि से देखने लगे । खुद किये पाप कर्मों का नाश करने के लिए और पुण्य अर्जित करने के लिए वह अपना गांव छोड़कर अनेक तीर्थों की यात्रा पर निकल पड़ता है ।

पाप से डरता हुआ वह वशिष्ठ एक तीर्थ से दूसरे तीर्थ में अकेला घूम रहा है । नदियाँ, द्रह, पहाड़ों, गांवों, जंगलों और समुद्र तटों में घूमता है । महीनों तक तीर्थयात्रा करते हुए उसकी अड़सठ तीर्थों की यात्रा पूर्ण होती है। अपनी आत्मा को शुद्ध हुई मानकर वह फिर से अपनी पुरानी पर्णकुटी में वापस लौट आया । वक्त के चलते एक बार गांवों में विहार करते एक ज्ञानी जैन महात्मा उसके आश्रम के पास आत्मसाधना के लिए कायोत्सर्ग ध्यान में लीन हो गए थे । आसपास के गांवों से अनेक भक्त वह महात्मा के दर्शन के लिए आते थे । वहाँ आकर वह लोग उन महात्मा को वंदन करके अपना पूर्वजन्म पूछते थे । पूर्वजन्मो का कथन करते हुए वह मुनिवर की बातें सुनकर वशिष्ठ तापस उस महात्मा को अपनी शंका पूछता है । ''हे भगवंत मेरी अड़सठ तीर्थ की यात्रा से मैंने किये हुए सभी पाप कर्मों की शुद्धि हो गई होगी कि नहीं ?''

तब महात्मा कहते है कि, ''पवित्र क्षेत्र और तप के बगैर केवल नदी, पर्वत, वन, गिराओ में घूमने मात्र से कर्म का नाश होकर पाप की शुद्धि नहीं होती है । मिथ्या तीर्थों में घूमने से शरीर को केवल कष्ट पहुँचता है । कर्मों के नाश के बजाय उलटे ज्यादा कर्म बंधने लगते हैं ।

यदि तुम्हें सही में ही अपने कर्मों का नाश करना हो तो मन की शुद्धिपूर्वक क्षमा-दया-सत्य-संतोष इत्यादि भावों से

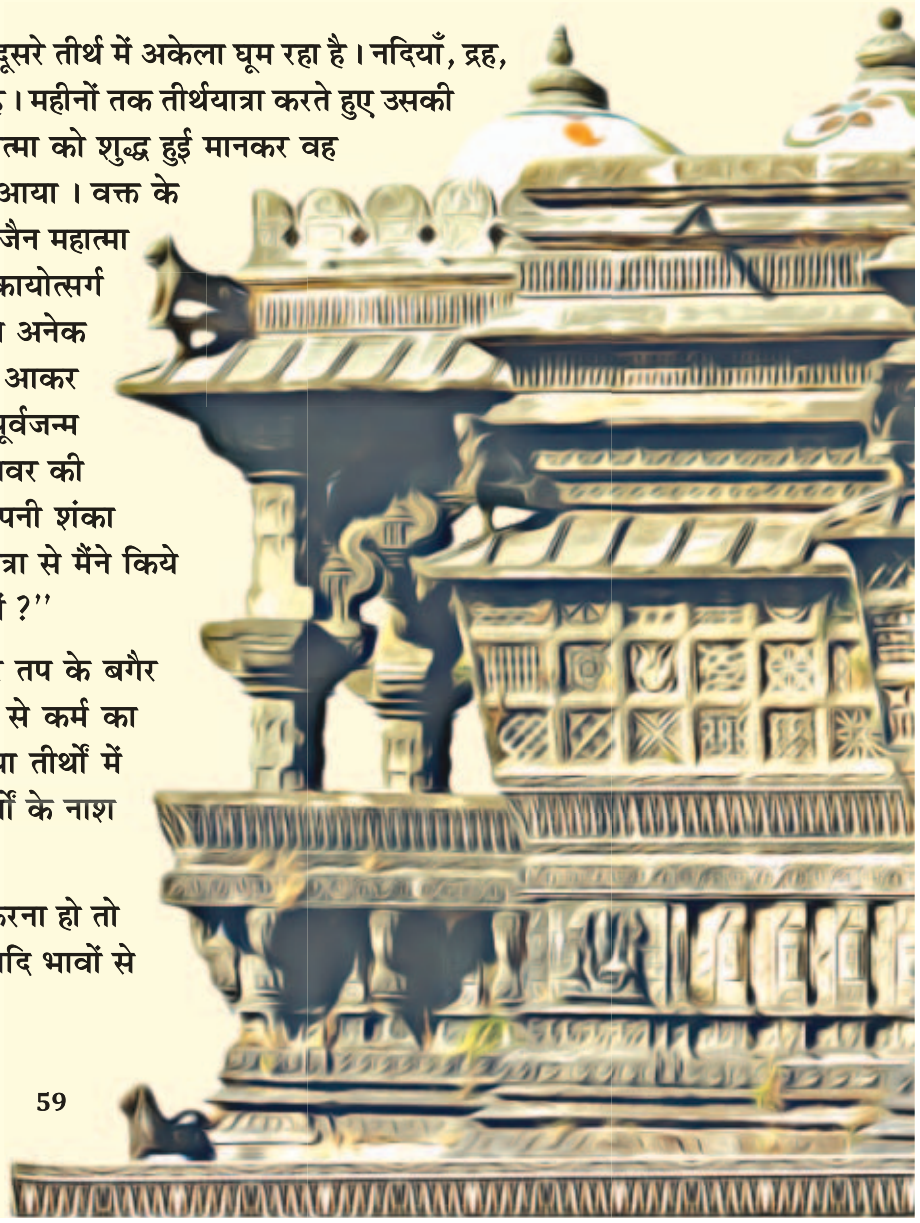

विभूषित श्रीवीतराग परमात्मा का ध्यान करने से एवं श्रीरैवतगिरि महातीर्थ में जाकर तप-आराधना करने से तुम्हारे पापों का नाश होगा ।''

वशिष्ठ पूछता है, ''हे भगवंत ! आप दयालु जिस महातीर्थ की बात कर रहे हों वह कहाँ पर स्थित है ?'' ज्ञानी भगवंत कहते है, ''रैवतगिरि महातीर्थ सोरठ देश में बाल ब्रह्मचारी श्रीनेमिनाथ परमात्मा के पावन चरणों से पवित्र हुआ उत्तम तीर्थ है । पांचों इंद्रियों को काबू में करके श्रीअरिष्टनेमि प्रभु का शुभभाव से ध्यान करना वही उत्तम प्रकार का तप है । यदि तुम्हें पाप कर्मों का नाश करके पुण्य की प्राप्ति करनी हो तो सद्गति देनेवाले श्रीरैवतगिरि महातीर्थ की भक्ति करो ।''

ज्ञानी भगवंत के वचन को हृदय में धारण करके श्रीनेमिनाथ प्रभु का स्मरण करता हुआ आनंदित हृदयवाला वशिष्ठ तापस श्रीरैवताचल पहुँच गया । वहाँ पर्वत की प्रदक्षिणा करके वह उत्तर दिशा के मार्ग से यात्रा करता है । प्रभु नेमिनाथ के ध्यान में एकाग्र बन जाता है और फिर स्नान करने जाता है । स्नान करके जैसे ही अम्बा कुंड से

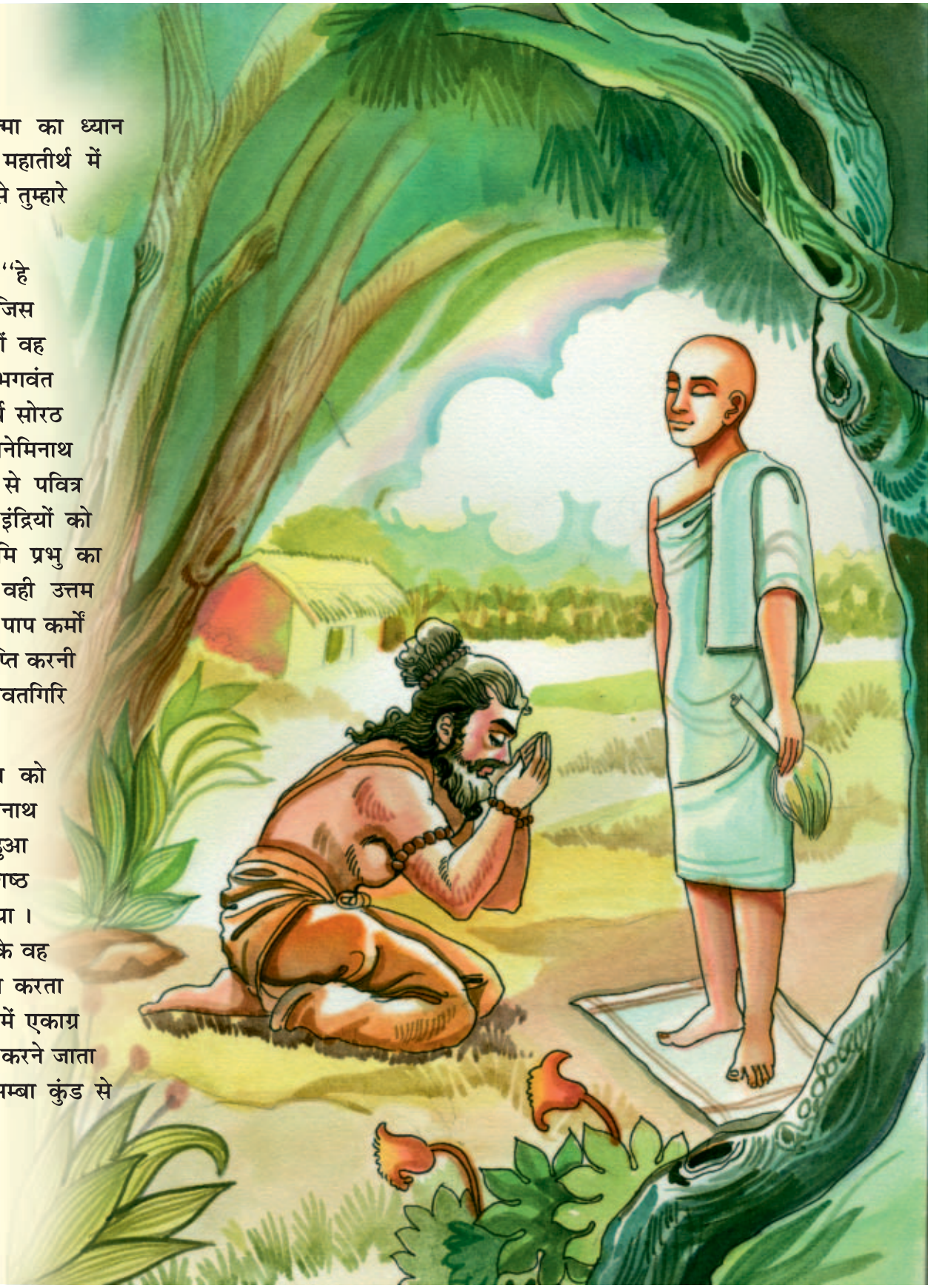

बाहर आता है कि उसी समय आकाश में से दिव्य आवाज आती है, "हे तापस मुनि ! महाघोर हत्या के पाप से मुक्त होकर तुम शुद्ध हुए हो । अम्बा कुंड के पवित्र जल से स्नान करने से तथा शुभध्यान के प्रभाव से तुम्हारे अशुभ कर्म क्षीण हुए हैं । इसलिए अब तुम श्रीनेमिनाथ प्रभु के शरण में जाओ !"

वशिष्ठ मुनि आकाशवाणी के दिव्य वचनों को सुनकर अचंभित होते है । बहुत ही प्रसन्नता के साथ वह तुरंत ही श्रीनेमिनाथ भगवान के मंदिर में जाते है । प्रभु को नमस्कार करते हैं । बहुत ही भाव से स्तुति इत्यादि भक्ति करते हैं । समाधि से ध्यान करते और कठिन तप करते हुए उन्हें अवधिज्ञान होता है । जिनेश्वर भगवंत के ध्यान में एकरूप हुए वह मृत्यु के बाद ऋद्धिवाले देव बनते हैं । उनके हत्या के दोषों का नाश होने से वो 'अम्बा कुंड' अब 'वशिष्ठ कुंड' के नाम से पहचाना जाता है । उसके जल के स्पर्श से अनेक दर्द-पीड़ाएँ-रोग और बूरे पाप भी नाश होते हैं ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ ज्ञानी भगवंत ने वशिष्ठ मुनि को कहाँ जाने को कहा ? वो स्थान कहाँ पर स्थित है ?

प्र. २ किसके बगैर पापों की शुद्धि नहीं होती ?

प्र. ३ वशिष्ठ कुंड का प्रभाव क्या है ?

जैसे वशिष्ठ तापस अपने पापों को धोने के लिए गिरनार आया, वैसे ही अगर हमें अपने दोषों को दूर करना हो तो श्रीगिरनार महातीर्थ में आकर श्रीनेमिनाथ परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए ।

रंक बना राजा (अशोकचंद्र) ११

जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में चम्पापुरी नाम की अति सुंदर नगरी थी। उस नगरी में अशोकचंद्र नाम का क्षत्रिय रहता था । वह अत्यंत गरीब और दुखी होने के कारण घर का त्याग करके एक स्थान से दूसरे स्थान पर भटक रहा था । भटकते हुए मार्ग में एक बार मुनि भगवंत से भेंट हुई । महात्मा के दर्शन होते ही उसके हृदय में अत्यंत अहोभाव उदित हुआ । नम्रता के साथ दोनों हाथ जोड़कर महात्मा को पूछने लगा कि "महात्मा ! मेरे जीवन से गरीबी का नाश हो और मुझे सुख मिले ऐसा कोई उपाय हो तो कृपया आप मुझे बताइए ।" तब महात्मा कहने लगे कि "हे वत्स ! हमारी आत्मा बहुत ही शक्तिशाली है । फिर भी पूर्वजन्मो में किये हुए कर्मों के कारण हम सुख-दुख का अनुभव करते है । तुमने पूर्व जन्मो में किये हुए बूरे कर्मोंके फलस्वरूप ही तुम गरीब हुए हो । तुम शुभभाव से रैवतगिरि महातीर्थ की सेवा-भक्ति करो ! थोड़े ही समय में तुम्हारे जन्मो जन्म के बूरे कर्मों का नाश हो जाएगा ।"

महात्मा की वाणी से अशोकचंद्र अत्यंत आनंदित हो जाता है । रैवतगिरि का नाम जपते हुए वह रैवतगिरि की दिशा में चलने लगा । पद पद पर अशुभ कर्मों का नाश करते हुए वह श्री रैवतगिरि की तलहटी में आया है ।

"रैवतगिरि समरू सदा, सोरठ देश मोझार,
मानवभव पामी करी, ध्यावुं वारंवार.."
"आ तीरथ पर जे भावथी, अल्प पण धर्म करे,
आ लोक थी परलोक वळी, परमलोक ने ते वरे,
जे तीर्थनी सेवा थकी, फेरा जन्मोना टले,
ए गिरनार ने वंदता, पापो बधा दूरे जतां..!"

महातीर्थ के प्रभाव को मुनिवर के मुख से सुनकर अशोकचंद्र रैवतगिरि के उच्च शिखर पर जाकर मन को स्थिर करता है । तप धर्म की अति कठिन साधना करता है । उसके तप से श्री गिरनार महातीर्थ के अधिष्ठात्री अम्बिका देवी प्रसन्न हुए । अम्बिका देवी अशोकचंद्र को उसकी गरीबी दूर करने के लिए जिसके स्पर्श मात्र से लोहा भी स्वर्ण बन जाये वैसा 'पारसमणि' देते है ।

पारसमणि के प्रभाव से अशोकचंद्र धनिक बन गया । अशोकचंद्र ने धन से काफी सैनिक, हाथी, घोड़े इत्यादि खरीदकर अपना बलवान सैन्य बनाया । सैन्यबल के प्रभाव से वह राजा बना । राज्य संपत्ति

से मिले भोगविलास के सुखों में डूबा हुआ अशोकचंद्र एक बार सोचने लगा कि "श्री रैवतगिरि महातीर्थ और शासन की अधिष्ठात्री अम्बिका देवी के प्रभाव से आज मुझे यह राज्य सुख मिला है। मौज-शोख में डूबा हुआ मैं उन उपकार करनेवाली अम्बिका देवी का स्मरण भी नहीं कर रहा हूँ। धिक्कार है मुझे ! मैं कितना पापी हूँ !"

अशोकचंद्र मन ही मन बहुत पश्चाताप करता है। महातीर्थ की याद आते ही अपनी धन संपत्ति के साथ उत्साहपूर्वक संघ और परिजनों के साथ यात्रा के लिए निकल पड़ता है। मार्ग में अनेक गाँवों में सेवा भक्ति, अनुकंपा, स्वामी वात्सल्य, पुराने जिनालयों को नया बनाना इत्यादि अच्छे कार्य करते हुए वह पहले श्री शत्रुंजय महातीर्थ की यात्रा करके फिर अनंते तीर्थंकरों की सिद्धभूमि जैसे रैवतगिरि महातीर्थ की यात्रा

करता है । गिरनार गिरि चढकर महाप्रभावक वैसे गजपद इत्यादि कुंड के पवित्र जल से नेमिनाथ प्रभु का स्नात्र महोत्सव करके बहुत भाव से भक्ति करता है । फिर सुगंधित पुष्पों से शासन अधिष्ठात्री अम्बिका देवी की पूजा करता है । अशोकचंद्र अब संसार से ऊब चूका है । वह सोचता है कि 'अरे ! यह रैवतगिरि महातीर्थ के प्रभाव से पिछले ३०० साल से मुझे अनेक सुख-वैभव मिले मगर अब मैं थक चूका हूँ । अब तो मुझे कभी भी नाश न हों वैसा मोक्ष का सुख ही चाहिए ।' वह श्रीनेमिनाथ भगवान का शरण लेकर रैवतगिरि पर संयम की साधना में लग जाता है।

अनेकप्रकार की आराधना करके तपरूप अग्नि से जन्मो जन्म के कर्म का नाश करता है और रैवतगिरि की पावनभूमि पर मोक्षपद की प्राप्ति करता है ।

❋

प्रश्न :

प्र.१ पूर्वजन्म के अशुभ कर्मों का नाश कैसे होता है ?

प्र.२ अशोकचंद्र को पारस मणि कौन देते हैं ?

प्र. ३ श्री रैवतगिरि महातीर्थ की भक्ति करने से मनुष्य क्या पाते है ?

श्रीरैवतगिरि महातीर्थ की सेवा-भक्ति करने से अशोकचंद्र की तरह मनुष्य यह जन्म में तो अनेकसुख पाते है, उपरांत दूसरे जन्म में भी अच्छी गति को प्राप्त करके अंत में मोक्ष सुख को पाते है । अरे ! पापी से पापी जीव भी इस तीर्थ के प्रभाव से पाप मुक्त होते है । इस तीर्थ की महिमा अपार है । इसीलिए ही कहा है कि,

"आ तीर्थभूमिए पक्षीओनी, छाया पण आवी पडे,
भवभ्रमण केरा दुर्गतिना, बंधनो तेना टळे,
महादुष्टने वळी कुष्ठरोगी, सर्वसुख भाजन बने,
ए गिरनारने वंदता, पापो बधां दूरे जतां..."

सौभाग्य मंजरी १२

भरतक्षेत्र के दक्षिण में कर्नाटक नाम का देश था । वहाँ अनेक प्रकार के राज वैभव से समृद्ध चक्रपाणि नाम का राजा राज्य करता था । उसे सबको प्रिय, अति सुंदर, अनेक गुणों से शोभायमान प्रियंगुमंजरी नाम की पत्नी थी । गुजरते वक्त के साथ प्रियंगुमंजरी रानी की कुक्षि से एक पुत्री का जन्म हुआ । राजकुमारी का नाम 'सौभाग्यमंजरी' रखा गया । राजकुमारी के शरीर के प्रत्येक अंग अति सुंदर थे । मगर कुछ अशुभ कर्मों

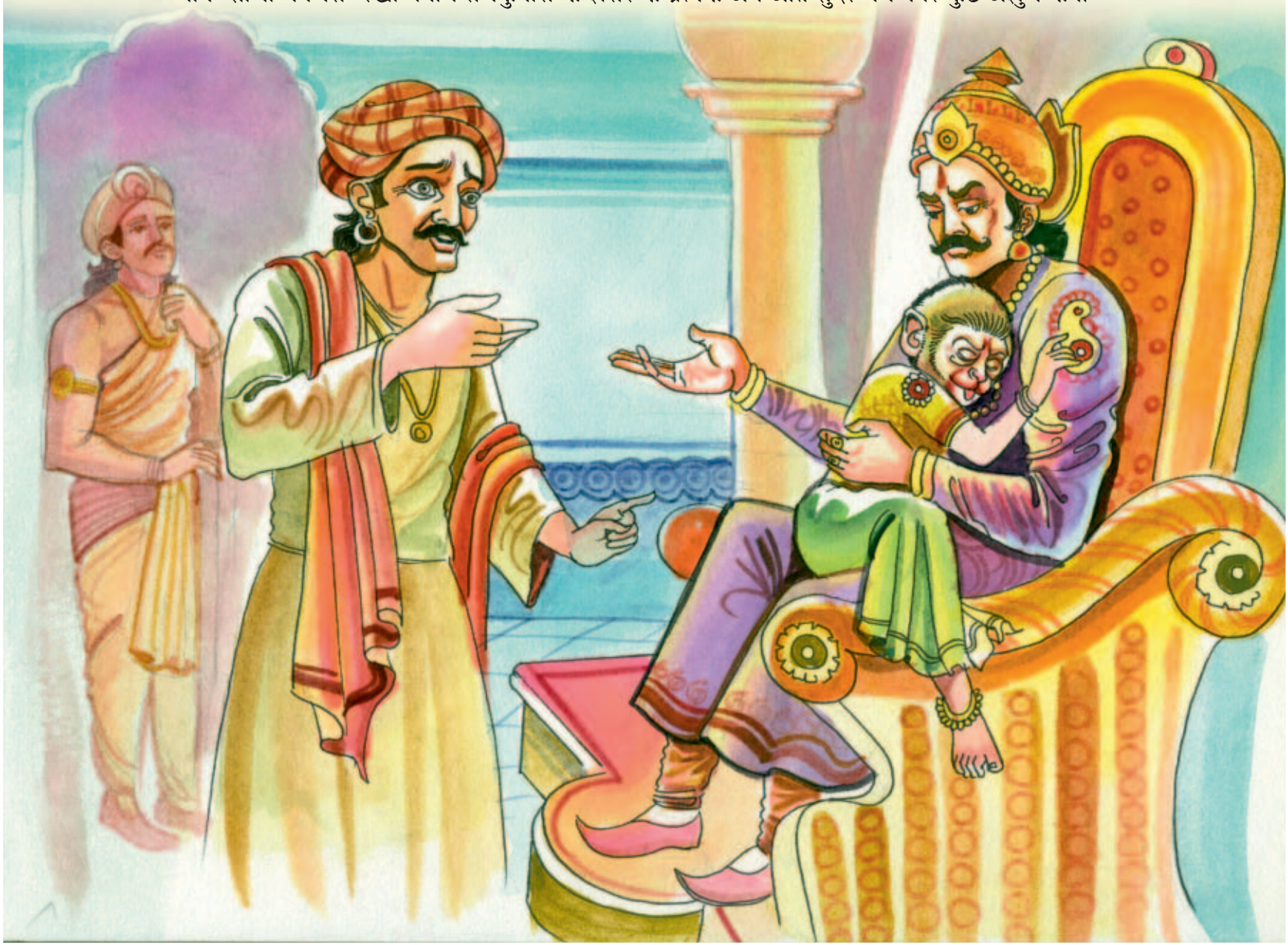

के प्रभाव से उसका चेहरा बहुत कुरूप था, काला था, दोनों आँखें बंदरिया जैसी थी । उसका शरीर देखे बिगर केवल उसका मुख ही देखें तो वह बंदरिया ही लगती थी । राजा भी इसके कारण बहुत दुखी था । राजा ने सौभाग्यमंजरी का चेहरा ठीक हो जाये इसके लिए काफी पूजा-अर्चना करवाई । भविष्यवेत्ता को बुलाकर पूछा । बहुत दान दिया मगर राजकुमारी का चेहरा बंदरिया जैसा ही रहा ।

गुजरते वक्त के साथ राजकुमारी चौंसठ कलाओं में पारंगत हुई । अब वह युवा हो गई थी इसलिए राजा-रानी को बहुत फिकर होती थी । क्योंकि राजकुमारी संग विवाह करेगा कौन ? राजकुमारी के पास सब कुछ था मगर चेहरा अच्छा न था । इसीलिए कोई भी विवाह करने के लिए राजी नहीं था । एक बार वह राज दरबार में महाराजा के पास में बैठी थी तब कोई परदेशी पुरुष राजसभा में आया । उस पुरुष ने महाराजा को तीर्थाधिराज श्रीशत्रुंजयगिरि की महिमा बताकर पुण्य को बढ़ानेवाला और संसार को घटाने वाले रैवतगिरि महातीर्थ का वर्णन करते हुए कहा कि, "महाराजा ! इस पृथ्वी पर पुण्य देनेवाले और दुख-गरीबी का नाश करनेवाले श्रीरैवताचल पर्वत की जय हो ! इस तीर्थ की भक्ति करने से इस जन्म या दूसरे जन्मो में भी गरीबी का भय रहता नहीं है । यह पर्वत के श्रेष्ठ पवित्र शिखर, नदियाँ, झरने, धातुएँ और पेड सब जीवों को सुख प्रदान करने वाले हैं । श्रीनेमिनाथ परमात्मा की सेवा के लिए आकर आनंद प्राप्त किये हुए देव तो स्वर्ग में मिलते महान सुखों को भी घास के समान हल्का मानते हैं" इस प्रकार रैवत महातीर्थ की अनेक बातें सुनकर महाराजा के पास में बैठी हुई राजकुमारी को अपना पूर्व जन्म याद आते ही वह बेहोश हो गई ।

सौभाग्यमंजरी पर शीतल जल का छिड़काव करने से वह उठ गई और प्रसन्नतापूर्वक अपने पिताजी को बताने लगी कि, "पिताजी ! आज का दिन मेरे लिए बहुत ही मंगल है । उसका कारण आप ध्यान से सुनिए ! गत जन्म में इस परदेशी ने वर्णित किये हुए रैवताचल पर मैं बंदरिया थी । स्वभाव से मैं बहुत शरारती थी । इधर उधर भागाभाग किया करती थी । पल में कूदती तो पल में ही डालियों पर लटककर डालियों को तोड़ देती थी । तो कभी रास्ते पर जा रहे यात्रियों के हाथ से खाने-पीने की वस्तुऐं छीन लेती थी । उन गिरिशिखरों की पश्चिम दिशा में अमलकीर्ति नाम की एक नदी है । विविध प्रकार के, विशिष्ट प्रभाववाले अनेक द्रव्यों से भरी हुई वह नदी श्रीनेमिनाथ परमात्मा की कृपादृष्टि से पवित्र होकर सुशोभित हुई है । एक बार आदतवश कूदती हुई मैं नदी के पास आई । परंतु संयोगवश यहाँ से वहाँ कूदने के कारण आम्र वृक्ष की डालियों में वैसे फँसी की मेरी गरदन कट गई और मैं वहाँ पर ही मर गई ।

इस रैवतगिरि महातीर्थ में बसने के प्रभाव से मैं वहाँ से मरकर, तिर्यंच जन्म का त्याग करके सीधी आपकी पुत्री के रूप में यहाँ पैदा हुई । अति सुंदर शरीर होने के बावजूद मुझे बंदरिया का मुख मिलने का कारण सुनिए ! वह आम्र वृक्ष की डालियों में फंसा मेरा शरीर धीरे धीरे डालियों के झुकने से अमलकीर्ति

नदी में गिरा इसी कारण मेरा शरीर अति सुंदर रूपवाला हुआ । किन्तु मेरा मुख डालियों में फंसा ही रहने के कारण उसे नदी के जल का स्पर्श नहीं हो सका । इसीलिए अभी भी मेरा मुख बंदरिया जैसा ही रहा है । हे पिताजी ! अब आप जल्दी से बचे हुए वह बंदरिया के मुख को नदी के पावन जल में गिरा दीजिए । जिससे मेरा मुख भी परी जैसा सुंदर हो जायेगा । इस परदेशी पुरुष ने कहे हुए महातीर्थ के माहात्म्य को सुनकर मुझे मेरे पूर्व जन्म का जो ज्ञान हुआ वह जातिस्मरण ज्ञान से मैंने यह सब कहा है !''

राजकुमारी के ऐसे वचन सुनकर सब आश्चर्यचकित हुए । राजा चक्रपाणि ने तो जल्दी से सेवकों को गिरनार पर्वत पर भेज दिया और वहाँ जाकर सेवकों ने बंदरिया के सूखकर कंकाल हुए मुंह को पानी में डाल दिया । जैसे ही बंदरिया का मुंह नदी में गिरा उसके साथ ही राजकुमारी का पूरा चेहरा बदल गया । वह कोई आकाश में उड़नेवाली परी जैसी सुंदर दिखने लगी । राजा तो इस प्रकार के आश्चर्य से पागल हो गया और तीर्थ की महिमा देखकर खुश हो गया । कोई अज्ञानी पुरुष ही होगा जो इस तरह के

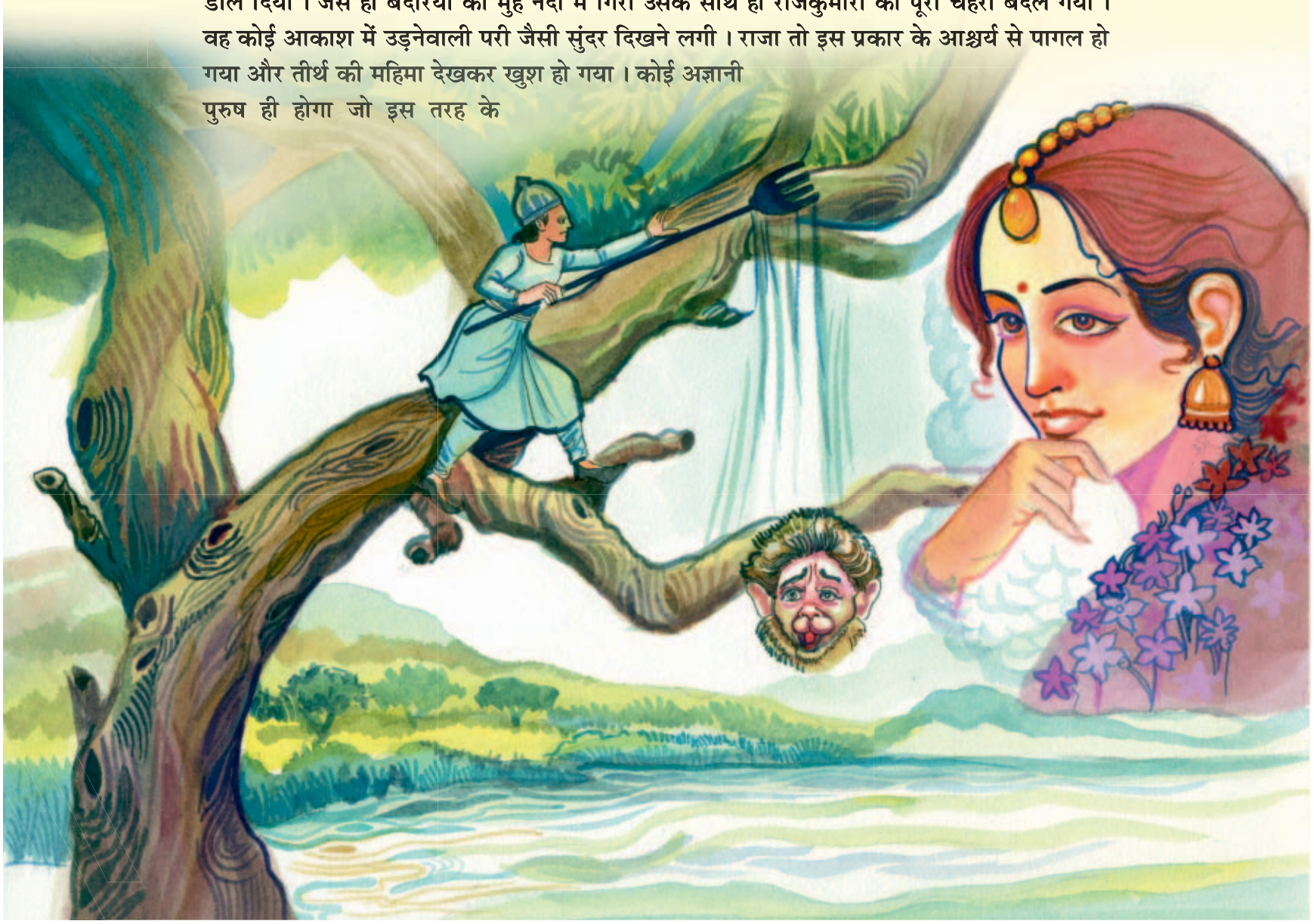

प्रसंग पर विश्वास नहीं कर सकेगा ! क्योंकि मंत्र, दवाई, मणि और तीर्थ की महिमा अद्भुत होती है । समझदार लोगों को ही उनमें श्रद्धा होती है ।

अब तो राजकुमारी अप्सरा जैसी दिखने लगी इसलिए बहुत सारे राजकुमार उसके साथ विवाह करने के लिए तैयार हो गये । मगर राजकुमारी ने सब को 'मना' कर दिया और कहा : "अब मैं विवाह नहीं करूँगी क्योंकि अब मैं गिरनार तीर्थ की यात्रा करूँगी और सदा के लिए वहाँ पर ही बस जाऊंगी । क्योंकि गिरनार तीर्थ को केवल याद करने से ही मेरा चेहरा बंदरिया से परी जैसा हो गया है तो वह गिरनार का प्रभाव कैसा होगा ?" ऐसा बताकर राजकुमारी साधना करने के लिए रैवतगिरि महातीर्थ में रहने आती है । हररोज श्रीनेमिनाथ भगवान का जाप-पूजा-ध्यान करने लगी । रैवताचल की पावन छांव में शीतलता का अनुभव करती है । वह बहुत कठिन तप से अपने अनेक जन्मो के कर्मों का नाश करती है । ऐसे ही आराधना करते हुए वह मृत्यु को प्राप्त करके अधिष्ठात्री देवी बनी है । वह महादेवी श्री संघ के बहुत सारे विघ्नों का नाश करती है ।

❋

प्रश्न :

प्र.१ श्रीनेमिनाथ भगवान की भक्ति करते देवता अपने सुख को कैसा मानते हैं ?

प्र.२ गिरिशिखर की पश्चिम दिशा में कौनसी नदी है ? वह कैसी है ?

प्र.३ किसका प्रभाव अद्भुत होता है ?

श्री गिरनार तीर्थ का ध्यान करने से कोई तिर्यंच में से मनुष्य बन जाता हो तो यह गिरनार तीर्थ का प्रभाव कितना शक्तिशाली होगा ? ऐसे प्रभावशाली गिरनार तीर्थ को रोज भाव से वंदन करें ।

"रैवतगिरि समरू सदा, सोरठ देश मोझार,
मानवभव पामी करी, ध्यावुं वारंवार.."

जीवंत और जाग्रत देव १३

भारत देश की धन्य धरती पर उस समय मुगल राज्य करते थे । जैन धर्म से द्वेषवाले अनेक मुगल बादशाहों ने श्री जिनेश्वर परमात्मा के शासन को बहुत ही नुकसान किया था । कितने ही बादशाहों ने जिनालयों और जिन प्रतिमाओं को तोड़ डाला थी । दूसरी ओर अनेक मुगल बादशाह श्री जिनेश्वर परमात्मा के सिद्धान्तों और साधु भगवंतों के जीवन को देखकर बहुत ही प्रभावित हुए थे जिनके प्रसंग भी इतिहास में पढ़ने को मिलते हैं ।

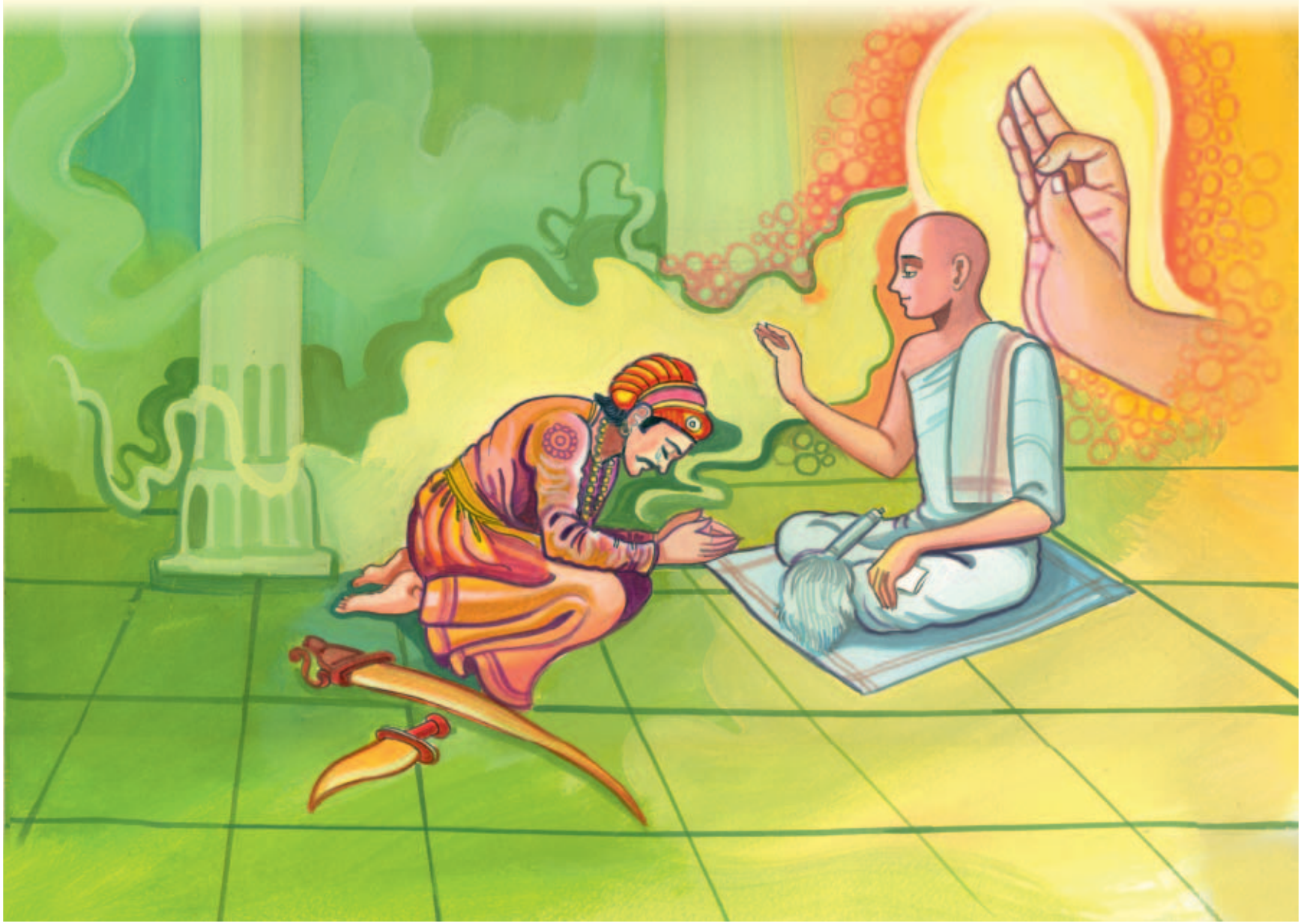

जिनधर्म के श्रेष्ठ आचार्य श्री जिनप्रभसूरिजी प्रभु के शासन की शोभा बढ़ा रहे थे । आचार्य भगवंत भव्यजीवों को धर्म और कर्म की बातें अपनी मधुर वाणी से समझा रहे थे । सूरिजी की मधुर वाणी से बादशाह 'सुरत्राण' बहुत ही प्रभावित हुए । बादशाह को सूरिजी पर बहुत ही मान था। समय समय पर सूरीश्वर और बादशाह के बीच धर्म की सुंदर बातें चलती रहती। एक बार अचानक बादशाह सूरिवर को पूछते हैं, ''गुरुवर ! आप के मुख से अनेक बार गिरनार गिरिवर कि प्रशंसा सुनी हैं तो क्या वाकई इस गिरनार गिरिवर का कोई प्रभाव हैं ?''

बादशाह की शंका का समाधान करते हुए सूरिवर कहते हैं, ''हाँ बादशाह ! गिरनार तीर्थ की महिमा की बातें ही अनूठी हैं । अरे ! केवल जैनधर्म ही नहीं पर अन्य धर्मों में भी गिरनार को एक पवित्र तीर्थ माना है । वह भूमि का सौंदर्य भी बहुत ही अनुपम हैं । वहाँ हमारे बाईसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ भगवान का विशाल जैनमंदिर है । उनके दीक्षा, केवलज्ञान और मोक्ष ऐसे तीन तीन महान कल्याणकों से वह धरती धन्य बनी हैं ।'' बादशाह कहते हैं, ''आपके यह पत्थर की प्रतिमाओं का और मंदिरों का कोई प्रभाव दिखाई देता है क्या ?'' सूरिजी ने कहा, ''प्रभाव ? प्रभाव तो ऐसा है कि उनके दर्शन मात्र से हृदय में शीतलता का अनुभव होता है । कोई अस्त्र या शस्त्र इस प्रतिमा से कंकर भी न तोड़ सकें ! किसी से भी यह प्रतिमा को नुकसान पहुँचाया जाये फिर भी यह प्रतिमा टूटती नहीं हैं, अग्नि में जलती नहीं है । बहुत ही मजबूत ऐसी यह वज्र समान प्रतिमा की रक्षा देव करते हैं !'', ''ऐसा ! इतनी अधिक महिमा ?'' बादशाह ने आश्चर्य से पूछा और मन ही मन बड़बड़ाया ये सब तो कल्पना की कथाएँ हैं ! पत्थर से बनी प्रतिमा की ताकत ही क्या जो लोहे के मार के सामने टिक सकें ? असंभव, बिल्कुल ही गलत बात ! प्रतिमा की परीक्षा करनी चाहिए।

थोड़े समय के बाद एकबार श्री जिनप्रभसूरिजी के साथ बादशाह सुरत्राण राज वैभव के साथ श्री गिरनार महातीर्थ की यात्रा करने के लिए जाते हैं । सूरिजी के मन में श्रद्धा थी और बादशाह के मन में शंका थी। देखते ही देखते वे गिरनार की नजदीक पहुँचे । बादलों से बातें करतें शिखरों को देखकर बादशाह का मन बहुत ही खुश हो गया। चारों ओर जैसे हरियाली चादर बिछाई हों ऐसी वन की हरियाली ने बादशाह का मन जीत लिया । प्रकृति को देखते हुए सुरत्राण भगवान नेमिनाथ के मंदिर में आया । प्रतिमा को देखते ही बादशाह की सब थकान मिट गई । श्री नेमिनाथ प्रभु की श्याम प्रतिमा को देखते ही बादशाह ठंडा पड़ गया । क्या यह प्रतिमा है ? कि साक्षात् भगवान ? उसे लगा कि इसकी परीक्षा कैसे हो सकती है ? आसपास का वातावरण जैसे उसे कह रहा था कि परीक्षा करने की बात छोड़ दें ! ये मूर्ति ही नहीं, परंतु इस मंदिर की तो ईंटें भी देवों की उपस्थिति से सुरक्षित है ! परंतु उसकी बुद्धि उसे परीक्षा लेने का आग्रह करती थी। आखिर में उसने बहुत ही सोच विचार करने के बाद परीक्षा करना तय किया।

श्री जिनप्रभुसूरिजी ध्यान में एकाग्र होकर बैठे थे उस वक्त बादशाह ने एक के बाद एक अस्त्र शस्त्र फेंकना शुरू किया। ख.. ण.. ण..! ख.. ण.. ण..! खण.. ण..! सुरत्राण ने भगवान की उस प्रतिमा पर तीन तीन घात लगाए फिर भी उसका एक कंकर भी न गिरा । अपनी हार होते ही बादशाह क्रोधित हो गया । उसने फिर से एक घात जोर से लगाया ! मगर ! ये क्या ! उसकी आँखें चकराने लगी । शस्त्र के टकराने से जिनबिंब से अग्नि के कण उड़ने लगे ! लगा कि जैसे बिजली के टुकड़े हों ! अग्नि कणों के तेज से बादशाह के होश उड़ गए । वह डर गया । उसे लगा यह चिंगारियां मेरे शरीर को जला देगी तो नहीं ! उसी भय से उसने अपने शस्त्र जमीन पर फेंक दिये ।

बादशाह डरकर आचार्य भगवंत के चरण में झुक गया । सूरिजी ने अपना ध्यान पूर्ण किया। वह दृश्य देखकर वो बहुत आनंदित हुए और बादशाह के मस्तक पर हाथ रखा और उसे सही ज्ञान दिया । कोई डरा हुआ बच्चा दौड़कर माँ की गोद में जा बैठता है ठीक उसी तरह बादशाह भी दौड़कर प्रभु श्री नेमिनाथ की गोद में मस्तक झुकाकर छोटे बच्चे की तरह रोने लगते हैं और अपनी भूल की माफी मांगते हैं ।

''हे खुदा ! मेरे कुसूर को माफी बख्श दो ! मैंने आपके प्रभाव पर शक किया ! मुझे माफ करना !'' थोड़ी देर बाद बादशाह स्वस्थ हुआ। उसे अपना शरीर हल्का फूल जैसा लग रहा था । प्रभु के चरण में सुवर्ण धरकर बादशाह ने विदाय ली ।

बादशाह परमात्मा की प्रतिमा का प्रभाव का अनुभव करता है, उसी रात को उनके मुस्लिम धर्म को माननेवाले साथी गुस्सा हुए । बादशाह ने अनुभव किया हुआ प्रभाव गलत साबित करने के लिए उन्होंने एक नई योजना बनाई । उन्होंने गिरनार पर्वत पर जितनी भी श्याम रंग की प्रतिमाएं थी उन्हें एक जगह इकट्ठा करके बंद कर दिया । उसके बाद जैन श्रावकों को बताया कि, ''यदि ये सब काले भूत रात को कोई चमत्कार दिखाएंगे तो ही हम इन प्रतिमाओं को आपको देंगे। वरना सुबह में आप सब के बीच इन प्रतिमाओं का चूरा बना देंगे।''

सभी श्रावक चिंतित हो गये। रात हुई ! मध्यरात्रि हुई ! और सुबह भी हुई ! मुस्लिम लोगों की खुशी का ठिकाना न रहा । क्योंकि एक भी मूर्ति ने चमत्कार दिखाया न था । अपनी जय होते

ही उन लोगों ने श्रावकों को कहा, "ये तुम्हारे पत्थर के पुतले पूरी रात पत्थर की ही तरह स्थिर रहे थे । न तो उनके मुख से कोई शब्द निकला था कि न तो कोई हिल चाल हमने देखी ! अब तो इन प्रतिमाओं का चूरा बना देना हमारे हाथ की बात है !"

श्रावकों में भय और शोक फैल गया । अब क्या होगा ? श्रावक तो सीधे सूरिजी के पास गए । वहाँ जाकर बिनती करने लगें, "अब तो आपही हमारे आधार हों ! गुरुदेव ! कुछ भी करके आप उन प्रतिमाओं को चूरा बनने से रोक लें !" सूरिवर यह घटना को जानकर गंभीर हो गए । तुरंत ही बादशाह को सभी जानकारी दी । बादशाह को इस बात की जानकारी नहीं थी । परंतु यह हकीकत को जानकर बादशाह को गत रात्रि में आये हुए स्वप्न की खोई हुई कड़ियां जुड़ती हों ऐसा लगा । सैनिकों को उन अनार्य लोगों को अपने पास लाने का हुक्म दिया ।

बादशाह का हुक्म सुनकर वह मुसलमान लोग आए । रात के दौरान हुई बात बादशाह को बताई । वे बादशाह को कहने लगे, "ये मूर्ति वगैरह के प्रभाव की बातें बकवास हैं । महाराजा कल तो आप उल्लू बन गए हों ! ये काले भूत तो पूरी रात मौन ही रहे थे !" ये सुनकर बादशाह अत्यंत गंभीर हो गये और कहने लगे, "ये प्रभाव वगैरह का अनुभव तो किस्मत में हों तो ही होता है ! अरे ! आज रात को मुझे स्वप्न में...." "क्या आपको स्वप्न में कोई चमत्कार दिखाई दिया ?" उन अनार्यों ने पूछा। बादशाह ने कहा, "हाँ! आज रात को ये सभी भूतों ने मुझे चेतावनी देकर कहा है कि जो तुम्हारे धर्म में माननेवाले जुनूनी जिन प्रतिमाओं को थोड़ा भी नुकसान करेंगे तो तुम तुम्हारे खुदा को याद कर लेना क्योंकि मृत्यु के बाद नरक में भी तुम्हें तुम्हारा खुदा मिलेगा नहीं।"

बादशाह की इन गंभीर बातों को सुनकर अनार्य डर गये । उनके होश उड़ गए । "अब तक तो मुझे स्वप्न में भूतों की बात समझ में नहीं आती थी । क्या मूर्तियां और क्या खंडन ! किन्तु इस वक्त यह सब जाना ।" बादशाह की आँखें क्रोध से लाल हो गई । बादशाह की बात सुनकर सब अनार्य भय से कांपने लगे । बादशाह ने उनको कहा, "यह जिन प्रतिमाओं को बकवास कहनेवाले तुम कौन ? यह खुदा तो जीवंत और जाग्रत देव हैं । ऐसे खुदा की प्रतिमाओं का नाश करने का अधिकार तुमको किसने दिया ? जाइए ! तुम सभी को फांसी पर लटका देने का हुक्म दिया जाता है ! सैनिकों ले जाओ इन बदमाशों को !"

बादशाह ने गुस्से में हाथ पटके । उनका क्रोध बहुत ही बढ़ गया था इन सब को फांसी की आज्ञा कर दी फिर भी उनका मन शांत न हुआ ! सब उनका यह निर्णय सुनकर कांप गए । सब के हृदय में करुणा का भाव उमड़ा । नगर जनों और श्रावकों ने बादशाह को ऐसी सजा न करने की बिनती की । बादशाह अपने निर्णय से टस से मस न हुआ । आखिर में श्रावक सूरिजी के पास जाकर उन लोगों को बचाने के लिए कहते हैं ।

क्षमा वीरस्य भूषणम्

अहिंसा के संदेश को विश्व में पहुँचाने वाले जिनशासन के यह सूरिजी हिंसा को कैसे सह सकते थे ? वे तुरंत ही बादशाह के पास पहुँचे। बादशाह को समझाया कि जिनशासन की नींव में ही जीव दया है । अरे ! छोटे से छोटे जीव की भी जब चिंता करनी होती है तब ऐसे जीते जागते मनुष्यों को फांसी होने कैसे दे सकते हैं ? ये तो प्रभु महावीर का शासन हैं और अपराधी को सजा करने के बदले क्षमा देना ही शूरवीरता का चिन्ह है । ''क्षमा वीरस्य भूषणम्''

महाराजा ने सूरिजी के वचनों को मानकर उन अनार्यों को कैद से मुक्त किया। तब ''जैनं जयति शासनम्'' के नाद से सारा वातावरण गूंज उठा ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ अनेक मुगल बादशाह क्या देखकर जैन धर्म से प्रभावित हुए ?

प्र. २ बादशाह सुरत्राण ने अपने पापों का पश्चाताप कैसे किया ?

प्र. ३ बादशाह सुरत्राण को स्वप्न में क्या अनुभव हुआ ?

भगवान की प्रतिमा कोई पत्थर का टुकड़ा नहीं, किन्तु जैसे साक्षात् भगवान ही हो इस तरह प्रभु की प्रतिमा की भक्ति करनी चाहिए । भगवान के प्रभाव से दुख, दारिद्र्य, दुर्भाग्य इत्यादि सब दूर होते है । प्रभुजी की प्रतिमाजी के आलंबन से तो अनंत आत्मा का कल्याण हुआ है, हो रहा है और होगा। इसलिए प्रभु के प्रभाव में कभी शक नहीं करना ।

बुद्धि के बेताज बादशाह (वस्तुपाल) १४

गौरवपूर्ण गुजरात देश के धोलका राज्य में राजा 'वीर धवल' राज्य करते थे । स्वभाव से शांत, कार्य करने में होशियार, राजनीति में बुद्धिमान ऐसे वस्तुपाल और तेजपाल उस वक्त गुजरात के महामंत्री और सेनाधिपति थे । वस्तुपाल और तेजपाल को प्रत्येक व्यक्ति जानती है । यदि प्रश्न पूछा जाए कि देलवाड़ा के

जैनमंदिर किसने बनवायें ? तो हम तुरंत ही बोल उठेंगे: ''वस्तुपाल और तेजपाल ने'' इसीलिए वस्तुपाल और तेजपाल पूरे जैनजगत में प्रसिद्ध हैं ।

ऐसे दोनों भाई अपने शौर्य और अति तीक्ष्ण बुद्धि से राजा और प्रजा के हृदय में बस गये थे । बड़े बड़े शहरो में भी उनका नाम और छोटे छोटे गांवों में भी उनका नाम ! राज्य का कारोबार चलाने के साथ साथ जिनेश्वर परमात्मा की आज्ञा का भी पालन वे दोनों पुण्यशाली भाई करते थे । पंचमी, अष्टमी और चौदस को तप के साथ सामायिक, प्रतिक्रमण, परमात्मा भक्ति, अनुकंपा दान इत्यादि धर्मकार्य भी बहुत ही उल्लास और आनंद से करते थे ।

एक समय की बात है । बहुत सारे आचार्य भगवंतों की निश्रा में महामंत्री वस्तुपाल ने अनंते तीर्थंकरों के कल्याणकों से पावन हुए श्रीगिरनार महातीर्थ का संघ निकाला । बहुत खुशी और बहुत उत्साह से यात्री इस महासंघ में जुड़े । दोसौ-पांचसौ यात्री नहीं मगर हजारों यात्री इस संघ में जुड़े । पदयात्रा करना, एकासणा करना और प्रवचन सुनना । रोज सुबह उदित होते सूरज को देखना, हजारों ऊंटगाड़ी, बैलगाड़ी, हाथी और प्रभु के रथ को देखने का आनंद मनाना । साथ साथ कुदरती दृश्यों को भी देखना । कभी जंगल में डर लगे ऐसे रास्तों से संघ गुजरता तो कभी गड्ढे, टीले, पथरीले रास्तों पर से संघ गुजरता । श्रीनेमिनाथ प्रभु का स्मरण करते हुए और श्रीगिरनार की धुन (भजन) के साथ यात्री आगे बढ़ते चले । कितने ही दिनों बाद श्रीसंघ श्रीगिरनार महातीर्थ की तलहटी में पहुंचा ।

दूसरी ओर गांवों से कठिन विहार करके बाल ब्रह्मचारी श्रीनेमिनाथ प्रभु के दर्शन करने के लिए मुनि भगवंत गिरनार गिरिवर की तलहटी में आयें । अनंते तीर्थंकरों के कल्याणकों की भूमि को स्पर्श करने के लिए वे गिरनार पधारे थे । गिरनार की तलहटी में पहुँचते ही उनके हृदय में आनंद की सीमा न रही । मुनियों के मन में गिरनार के गीत चल रहे थे । कितने ही दिनों बाद श्रीनेमिनाथ प्रभु के दर्शन करने की इच्छा आज पूर्ण होनेवाली थी । वे सब गजब की मस्ती के साथ आगे बढ़ रहे थे । मगर उनकी यह मस्ती ज्यादा न टिकी !

जैसे ही मुनि भगवंतों ने चढ़ना शुरू किया तब वहीं पर ही उन्हें रोक दिया गया । मुनि भगवंतों को आश्चर्य हुआ, ''हम तो भगवान के दर्शन करने के लिए जा रहे है तब इस में रुकावट क्यों है ?'' तब एक आदमी ने उनको कहा, ''क्यों ! जानते नहीं हो ? कि गिरनार ऊपर चढ़ने के लिए पहले 'मुंडकवेरा'

कुहाडी
गाँव

(यात्रीकर) भरना पड़ेगा वरना आगे नहीं जाने देंगे ।'' मुनि भगवंतों ने कहा, ''अरे भाई ! क्या प्रभु के पास जाने के लिए पैसे भरने होंगे ? हमने तो पैसा, घर सब त्याग दिया है । हमारे पास पैसे कहाँ से होंगे ?।'' वह आदमी ने कहा, ''महाराज बेकार बातें न करें ! यात्रा क्या ऐसे मुफ्त में होंगी ? कींमत चुकाकर पाई गई वस्तु का महत्व अधिक होता है । पहले मुंडकवेरा(यात्रीकर) की रकम दे दीजिए बाद में ही आगे बढ़ सकेंगे'' उस वक्त हरेक यात्री से पांच द्रम्म का मुंडकवेरा लिया जाता था । ये कर चूकते किये बिना कोई आगे बढ़ सकता नहीं था ।

महात्माओं ने कहा, ''इतने दूर से हम पदयात्रा करके आये हैं इस का मूल्य कम है क्या ?'' किन्तु वह आदमी किसी भी तरह से मानेगा ऐसा लगता नहीं था । वे सोचते हैं, ये भी कैसी विचित्रता ! अपने प्रभु को मिलने में भी ऐसी रुकावट ? ये तो हरगिज चलेगी नहीं ! उस दिन तो मुनि भगवंत लौट आए मगर उनके मन में एक विचार बैठ गया कि किसी भी कींमत पर यह मुंडकवेरा हटाना है !

मुनिवर हार माननेवाले नहीं थे । दूसरे दिन फिर से यात्रा के लिए गए । आज भी कल की तरह उन्हे रोक दिया गया । ''मुंडकवेरा भरे बिना यात्रा नहीं'' यही शब्द दुबारा उन्हें सुनने पड़े । मुनिवर अपने उपाश्रय की ओर चल पड़े । लौटते वक्त उन्होंने सुना कि, गुजरात के गौरव समान महामंत्री श्रीवस्तुपाल संघ के साथ कल यहाँ आने वाले हैं । मुनियों को अपनी आशा पूर्ण होगी ऐसा लगने लगा । उनको लगा : यह मुंडकवेरा (यात्रीकर) महामंत्रीश्वर जरूर हटा पाएंगे !

तीसरे दिन महामंत्री वस्तुपाल अपने संघ सहित श्री गिरनार तीर्थ की तलहटी में आ पहुँचे । महामंत्री श्रीवस्तुपाल को यह मुंडकवेरा की बात का पता था । परिस्थिति देखकर उनको लगा कि यह मामला बल से नहीं बुद्धि से सुलझाना होगा उसी समय वे महात्मा भी गिरिवर चढ़ने के लिए आगे बढ़ रहे थे । उन मुनि भगवंतों को मंत्रीश्वर ने थोड़े समय रुककर संघ के साथ ही यात्रा करने की बिनती की । मुंडकवेरा (यात्रीकर)की वर्तमान स्थिति भी बतलाई ।

महात्मा प्रभु के मिलन में बाधा रूप यह मुंडकवेरा(यात्रीकर) किसी भी प्रकार से दूर करने के लिए प्रयास करने को कहने के लिए मंत्रीश्वर को मिले । उन्होंने कहा,

''मंत्रीश्वर ! आप जैसे बुद्धिमान जीवित हों तब भक्तों को परमात्मा के दर्शन-पूजन, तीर्थ के स्पर्श करने के लिए पैसे चूकाने पड़े ये कितनी शर्म की बात है ! आज तो आप हमें यह संघ के साथ यात्रा करवा देंगे परंतु अन्य भक्तों का क्या ? भविष्य में इस तीर्थ की स्पर्शना करने दूर-दूर से आनेवाले महात्माओं का क्या ? पहले यात्रियों की आवाज से गुंजायमान गिरनार आज कितना सूना-सूना लग रहा है ?'' मुनियों ने पूरे जोश के साथ कहे हुए वाक्यों ने मंत्रीश्वर के मन में मुंडकवेरा (यात्रीकर) हटाने की इच्छा को मजबूत किया ।

मंत्रीश्वर ने कहा, ''महात्मा ! आप की बात सही है ! काफी प्रयास किये मगर आज भी मुंडकवेरा (यात्रीकर)तो चल ही रहा है !''

तब महात्माओं ने कहा, ''मंत्रीश्वर ! हम दो दिनों से हर रोज यात्रा करने के लिए आते हैं मगर अभी भी हमारी लंबी यात्रा की सफलता हमें मिली नहीं । हमने तय किया है कि, यह मुंडकवेरा (यात्रीकर) हटाना ही है! आप जैसे शासन के प्रति अनुरागवाले वीर पुरुष यदि हमें साथ दें तो यह मुंडकवेरा (यात्रीकर) बंद हो सकता है !''

मंत्रीश्वर ने कहा, ''मेरा साथ ? महात्मा आप आज्ञा कीजिए । यह सेवक तैयार है ! प्रभु के शासन के लिए कुछ भी करने के लिए हम तैयार है ! यह मेरे जीवन की सुवर्ण पल बन जाएगी !'' महात्माओं और मंत्रीश्वर ने उपाय के लिए चर्चा-विचार किया ।

बाद में मुनिवर ने गिरिवर पर चढ़ने के लिए सीढ़ियों पर कदम रखे । उसी वक्त पीछे से रुक जाने का आदेश हुआ । मुनिवर दृढ़ निश्चय के साथ धीमी गति से आगे बढ़ रहे थे । तब फिर से जोर से आवाज आई, ''सुनते हो कि बहरे हो ? रोज-रोज ऐसे मुफ्त में चले आते हो ! कुछ शर्म है कि नहीं ? कितनी बार कहा कि मुंडकवेरा (यात्रीकर) का पांच द्रम्म नहीं भरेंगे तब तक एक भी सीढ़ी चढ़नी नहीं है !''

उस आवाज में क्रोध था साथ में झुंझलाहट भी थी । मुनिवर भी थोड़े गुस्से में आये । ''हमारे देवाधिदेव के दर्शन के लिए मूल्य क्यूँ चूकाना ? दादा का दरबार तो सभी के लिए हमेशा खुला ही होता है ! और हम तो साधु हैं हमारे पास संपत्ति कहाँ है ? देखिए, ये सिर पर बाल भी नहीं है, हम तो मुंड है ! बाल थे वो भी हमने त्याग दिये। अब आपको हम क्या दें ? हम जैसे मुंडो को ये मुंडकवेरा क्यों भरना ?''

मुनिवर के जोश और जुनून को देखकर वे आदमी जैसे तैसे भी बोलने लगे । आखिर मुंडकवेरा का वह नियम तोड़कर मुनिवर आगे बढ़ गए । दो दिन के बाद गिरनार के उन प्रेमियों ने आनंद और उल्लास के साथ दादा की यात्रा की ।

मुनिवर चले गए, इसलिए मुंडकवेरा का भुगतान करने वाले अधिकारीओं का क्रोध बढ़ गया । रे ! एक तो मुंडकवेरा (यात्रीकर) चूकाया नहीं और ऊपर से कुछ भी बोलकर चले गए ! अपनी हार सहन नहीं होने से न्याय पाने की इच्छा से वे सब महामंत्री के पास आये । अधिकारीओने महामंत्री के पास अपनी शिकायत दर्ज की । मंत्रीश्वर ने उनके प्रति सहानुभूति का भाव जताया इसीलिए अधिकारीओ को भी मन से थोड़ी राहत मिली । थोड़ी देर में मंत्रीश्वर ने मुनिवर को संदेश भेजकर बुलवाया । मुनि भगवंत जब पधारे तब मंत्रीश्वर ने बहुत ही मान से उनका स्वागत किया ।

अधिकारीओने फरियाद करते हुए कहा, ''मंत्रीश्वर इन महात्माओं ने सालों से चलती हमारी मुंडकवेरा की परंपरा तोड़कर, कल गिरिवर की यात्रा की है । इस बात का उचित न्याय मांगने हम यहाँ आये है !'' मुनि भगवंतों को मंत्रीश्वर ने पूछा, ''मुनिवरजी इस शिकायत के 'सच-झूठ' के लिए आप को कुछ कहना है ?''

मुनिवर ने दृढ़ता से कहा, ''हाँ मंत्रीश्वर ! उनकी बात बिल्कुल सही है कि हम मुंडकवेरा भरे बगैर ही यात्रा करके परमात्मा का दर्शन कर आये हैं । मगर मंत्रीश्वर ! आप ही बताएं हम जैसे गंजों को फिर मुंडकवेरा कैसा ? हम तो त्यागी हैं, हमारे पास पैसे कहाँ से होंगे ? आज हमको यहाँ आये चौथा दिन

है ! तीन-तीन उपवास हुए और फिर भगवान के दर्शन हुए । पहले दिन गए और इन लोगों ने हमें कहा कि पांच द्रम्म दीजिए ! हम यात्रा किये बिना ही लौट गए ! दूसरे दिन भी वही हालत हुई । हमने सोचा, अब कल तो यात्रा करनी ही है ! जिस गिरनार के लिए हम दूर-दूर से आये उसके दर्शन किये बिना कैसे लौट जाते ! अन्तमें कल हमने यात्रा की । नियम को तोड़ा । झगड़ा भी हुआ । मंत्रीश्वर ! अनंते तीर्थंकर के कल्याणको की पावनभूमि की यात्रा करने के लिए पैसे भरने होंगे ? ये तो राज्य और महाराजा दोनों के लिए शर्म की बात है ! आप जैसे बुद्धिमान को उचित न्याय करके ये मुंडकवेरा (यात्रीकर) की परंपरा को दूर कर देनी चाहिए ।''

मंत्रीश्वर मुनिवर की बातें सुनते ही रहे । उसके बाद मंत्री ने फरियादी को पूछा, ''महात्मा की इन बातों के लिए आप को क्या कहना है ?''

''मंत्रीश्वर ! महात्मा की सभी बातें सही हैं मगर सालों से यह मुंडकवेरा (यात्रीकर) पाना हमारा अधिकार है । हर एक यात्री से हमें पांच द्रम्म मिलते हैं और मिलना ही चाहिए !'' अधिकारीओने अपने हृदय की बात कही ।

मंत्रीश्वर थोड़े समय के लिए सोचने लगे । बाद में तुरंत ही गंभीरता से अधिकारीओको कहा, ''इसमें मुझे किसका पक्ष लेना चाहिए ? एक ओर मेरे पूज्य महात्मा है, दूसरी ओर आप मेरे प्यारे प्रजाजन हो ! इसमें एक बीच का रास्ता ही पसंद करना उचित है । यह मुंडकवेरा (यात्रीकर) की बात पर ताला लगाना ही ठीक है । भविष्य में भी इस बात पर झगड़े होने की संभावना है । इसलिए मुंडकवेरा (यात्रीकर) के बदले में आप कुछ और मांग लीजिए !''

यह बीच का रास्ता फरियादीओ को अच्छा लगा क्योंकि यात्रियों से पांच -पांच द्रम्म लेने में उनको तकलीफ होती थी कितनी ही झंझट के बाद आखिर में मुंडकवेरा मिलता था मगर इसके बदले में मांगे क्या ? सब सोच में पड़ गए । मंत्रीश्वर को अब देर हो रही थी इसलिए उन्होंने थोड़ी ऊंची आवाज में कहा,

''कितनी देर ? इसके बदले कुछ और मांग लो ! आप यदि निर्णय नहीं कर सकते हैं तो यह बात मुझे सौंप दीजिए ! मुझ पर तो विश्वास है न ?''

''अरे ! मंत्रीश्वर ! आप पर तो पूरा भरोसा है । आप का निर्णय हम मस्तक पर चढ़ाएंगे । आप चिंता किये बगैर अपना अभिप्राय बताएं ।'' सब ने मंत्रीश्वर को करबद्ध बिनती की । बुद्धिमान मंत्रीश्वर ने सब का विश्वास संपादन करके जाहिर किया कि, ''देवाधिदेव बाईसवें(तीर्थंकर)श्रीनेमिनाथ प्रभु के तीन-तीन कल्याणकों से पावन हुई यह गिरनार गिरिवर की भूमि पर से आज से मुंडकवेरा (यात्रीकर) हटा दिया जाता है और भूल से भी कोई पैसे लेगा तो कड़ी से कड़ी सजा की जाएगी और मुंडकवेरा के बदले में यह गिरनार गिरिवर की तलहटी में रहा 'कुहाड़ी' गांव आपको दिया जाता है । यह कुहाड़ी गांव की सभी आय पर आज से आप सभी का अधिकार रहेगा । आज से आप सब इस गांव के मालिक बनते है ! अब तो आप सब खुश हो न ?''

मंत्रीश्वर के वचन सुनकर सब आनंद से झूम उठे । 'कुहाड़ी' गांव की सम्पूर्ण आय के अधिकार का दस्तावेज मिलते ही सब की चिंता दूर हुई । वातावरण में चारों दिशाओं में तीनों लोक के नाथ श्रीनेमिनाथ प्रभु का और बुद्धिशाली मंत्रीश्वर वस्तुपाल का जयजयकार हुआ ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ मुनि भगवंतों को श्रीगिरनार तीर्थ की यात्रा करने जाते हुए क्यों रोका गया था ?

प्र. २ वस्तुपाल और तेजपाल को राजा वीर धवल कौन सा पद देते हैं ?

प्र. ३ मुंडकवेरा (यात्रीकर) हटाकर वस्तुपाल उसके अधिकारीओको बदले में क्या देते हैं ?

मंत्रीश्वर वस्तुपाल की तरह जीवन में जो करो वह तुरंत करो, अच्छा करो, खुद ही करो और सोचकर करो तो हर क्षेत्र में सफलता ही सफलता हैं ।

तीर्थ भक्ति के लिए त्याग (पेथड मंत्री) १५

''यात्रा पुण्य के समूह की दान शाला है । वह पाप के नाश करने का कारण है । जन्म, धन, वचन, मन, शरीर को सफल करनेवाली है और तीर्थंकर नाम कर्म की प्राप्ति कराने वाली है ।''

तीर्थयात्रा की ऐसी विशिष्ट महिमा जानकर सुवर्ण सिद्धि प्राप्त करनेवाले, यश-कीर्ति से शोभित मंत्रीश्वर पृथ्वीधर अर्थात् मंत्री पेथड संघ सहित सिद्धाचल महातीर्थ की यात्रा के लिए पधारे । बहुत ही उल्लास से उन्होंने यात्रा की । सिद्धाचल के शिखर पर बिराजित श्री आदिनाथ भगवान की भक्ति-पूजन करके अत्यंत आनंदित हुए । मंत्रीश्वर ने २५ धड़ी सुवर्ण से युगादि देव के जिनालय को सुशोभित किया ।

अनंत आत्माओं ने जहाँ सिद्ध पद को प्राप्त किया है ऐसे सिद्धगिरि के स्पर्श-वंदन और पूजन करके संघ ने श्री रैवताचल महातीर्थ की ओर प्रस्थान किया । अनंत तीर्थंकरों के कल्याणकों से पावन हुए श्री गिरनार गिरिवर की भव्यभूमि की स्पर्शना करनेकी इच्छा के साथ संघ के एक के बाद एक दिन बीत रहे हैं। वर्तमान चौबीसी के बाईसवें तीर्थंकर बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथ भगवान तथा गत चौबीसी के आठ तीर्थंकर के दीक्षा- केवल ज्ञान और मोक्ष कल्याणक और दूसरे दो तीर्थंकर के मात्र मोक्ष कल्याणक, आने वाली चौबीसी के चौबीसों चौबीस तीर्थंकर के मोक्ष कल्याणक से पावन यह रैवतगिरि तीर्थ की पवित्र भूमि का स्पर्श करके सब अपने जीवन को धन्य करने की चाह रखते थे । दूर-दूर से रैवतगिरि के शिखरों को देखते ही सब आनंद से झूम उठे ।

एक शुभ दिन पेथड मंत्री के संघ ने रैवतगिरि की तलहटी में प्रवेश किया । उसी वक्त योगिनीपुर-दिल्ली से अग्रवाल कुल के पूर्ण श्रेष्ठी ठाठ के साथ संघ लेकर गिरनार की तलहटी में तंबू लगा रहे थे । वह श्रेष्ठी दिगम्बर विचारधारा के परम अनुयायी थे । उनके पास लक्ष्मी भी थी और रूप भी था । बादशाह अलाउद्दीन की कृपादृष्टि उन्होंने पाई थी ।

गिरनार की तलहटी ये दोनों संघ आने से पूरी भर गई थी । पहला संघ दिगम्बरों का आया और दूसरा संघ श्वेतांबरों का आया । जब सुबह शीतल वातावरण में दोनों संघों ने तीर्थयात्रा शुरू की उसी वक्त दिगम्बर संघ के रक्षकों ने श्वेतांबर संघ के यात्रियों को यात्रा करने से रोका । ''यह तीर्थ हमारा है, यहाँ हम पहले आये थे इसीलिए सबसे पहले यात्रा हम ही करेंगे ।'' दिगम्बरों के इस प्रकार के वचनों को सुने बगैर ही श्वेतांबर संघ आगे चलने लगा ।

तब क्रोधित हुए अभिमानी पूर्ण श्रेष्ठी अपने सैन्य के साथ आगे आये । गिरनार के पत्थर कांपने लगे इतनी जोर से उसने आवाझ लगाई, ''सावधान ! एक भी कदम आगे बढ़ें तो तुम्हारे सिर को शरीर से अलग करने में देर नहीं लगेगी ! तीर्थ हमारा है ! और पहले हम आये है और आप को आगे जाना है ? नहीं होगा ! यह कदापि मुमकिन नहीं होगा !'' पूर्ण श्रेष्ठी बलवान था । यह जानकर तीव्र बुद्धिवाले पेथड मंत्री ने बल से नहीं मगर कोई युक्ति से काम लेने का विचार किया । संघ रुक गया ।

पेथड शाह ने पूर्ण श्रेष्ठी के साथ टक्कर लेते हुए कहा, ''इस गिरनार में एक नहीं अनेक विवाद हुए हैं। मगर हर बार श्वेतांबरों की ही जय हुई है ! इतिहास में दिगम्बरों की हार के प्रसंग देखने को मिले हैं। इसलिए यह हमारा तीर्थ ही है और हम आगे जाएंगे ही !'' पेथडमंत्री ने बहुत प्रयास किये, मगर पूर्ण श्रेष्ठी किसी भी कीमत पर उनकी बात स्वीकारने के लिए तैयार नहीं हुआ। पेथड शाह की बातें सुनकर वह गुस्से में आग बबूला हो गया और बातों बातों में झगड़ा जम गया। दिगम्बरों का गुस्सा बढ़ने लगा।

इस झगड़े को शांत करने के लिए दोनों संघ के थोडे बुद्धिमान बुजुर्ग आगे आये। उन्होंने कहा, ''आप दोनों पुण्यशाली पुरुष पूर्व जन्म के काफी पुण्य के कारण यह महातीर्थ के संघपति बने हैं। जन्मो जन्म के कर्मों के नाश करनेवाली यह पावनभूमि का स्पर्श करके झगड़े का त्याग करो। अभी 'यह तीर्थ न तो दिगम्बरों का है न ही श्वेतांबरों का' ऐसा सोचकर दोनों संघ एक ही साथ में तीर्थ की यात्रा कीजिए। बाद में इन्द्रमाल पहनाने के वक्त पर जो भी बोली लगाने में ज्यादा धन बोलेगा उसका तीर्थ ! क्योंकि क्षत्रिय शस्त्र से युद्ध करते हैं ! पंडित शास्त्र से युद्ध करते हैं ! क्षुद्र हाथ से झगड़ा करते हैं ! पशु सींग से झगड़ते है ! स्त्री बूरे वचनों से लड़ती है ! और व्यापारी धन से युद्ध करते हैं !''

इस तरह बुजुर्गों के हितकारी वचनों को दोनों संघों ने प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया। दोनों संघ के सभी यात्रियों ने उल्लास से गिरिवर की यात्रा की। श्रीनेमिनाथ प्रभु के दर्शन होते ही सब नाच उठे। बहुत भाव से परमात्मा को नमस्कार करके नृत्य-स्तुति-स्तवन इत्यादि अनेक प्रकार से भक्ति की। इन्द्रमाल चढ़ाने का समय हुआ। बाल ब्रह्मचारी श्रीनेमिनाथ प्रभु के रंगमंडप में अब सही में होड़ मची थी। यह तीर्थ किसका ? इस प्रश्न के जवाब के लिए दोनों संघ अपनी सभी धन संपत्ति प्रभु के चरणों में अर्पण करने के लिए तैयार हुए। भगवान श्रीनेमिनाथ की बायीं ओर पूर्ण श्रेष्ठी

खड़े हुए । पेथड शाह को भगवान की दायीं ओर स्थान मिलने से सबको उनकी जय निश्चित है ऐसा लग रहा था ।

गिरनार को अपना साबित करने की स्पर्धा शुरू हुई ! चढ़ावा पहले स्वर्ण मुद्राओं से शुरू हुआ बाद में सुवर्ण के शेर(करीबन ५०० ग्राम)से चढ़ावा शुरू हुआ । ये दोनों की आखिरी हद आ गई । इसीलिए सुवर्ण धड़ी से चढ़ावा शुरू हुआ । 'पांच धड़ी !' शुरुआत पेथड शाह ने की । 'छह धड़ी !', 'सात धड़ी !' आमने-सामने धड़ीयों का आंकड़ा बढ़ता गया । मंत्रीश्वर पेथड ने स्पर्धा को और जोरदार किया । 'सोलह धड़ी सुवर्ण !' दिगम्बर संघ और संघपति पूर्ण को दिन मे तारे दिखाई देने लगे । सब आश्चर्यचकित हो गए सोलह धड़ी सुवर्ण ! एक धड़ी बराबर २०० किलो सुवर्ण ! पेथड मंत्री ने आज मन में संकल्प कीया था कि कुछ भी करके चढ़ावा तो लेना ही है ! तीर्थ को जाने कैसे दें ?

उस वक्त तो पूर्ण श्रेष्ठी अत्यंत चिंतित हो गए । उन्होंने मंत्रीश्वर के पास आठ दिन का समय मांगा, ताकि वह तैयारी कर सकें ! उन्होंने शर्त रखी कि आठ दिन का समय तो मिलना ही चाहिए ! क्योंकि यह प्रश्न तीर्थ का है । इसका फैसला ऐसे एक ही दिन में तो नहीं आ सकता !'' पेथड शाह ने भी उनकी मांग का प्रसन्नता से स्वीकार किया और आठ के बदले दस दिन का समय दिया ।

पूर्ण श्रेष्ठी ने संघ में आये सभी यात्रियों के पास जितना सोना हो उतने सोने के दान की प्रेरणा की तब यह तीर्थ के लिए सभी ने अपने हाथों के कंगन, सुवर्ण मुद्राएं, गले का हार इत्यादि विविध आभूषणों का ढेर लगा दिया । तीर्थ का यह प्रश्न सभी ने अपना मानकर पूर्ण सेठ की झोली छलका दी । इकट्ठे हुए सुवर्ण का आंकड़ा अट्ठाईस धड़ी हो गया । दिल्ली से भी और सुवर्ण आ रहा था । अब पूर्ण श्रेष्ठी की हिम्मत बढ़ गई । तीर्थ अब उसे अपने हाथ में ही आ गया हों ऐसा लगा ! इसलिए पूरा दिगम्बर संघ आनंद से उछल रहा था ।

इस ओर पेथड मंत्री ने भी दिगम्बर संघ का उल्लास और तीर्थ के लिए प्रेम देखा, अपनी बुद्धि से उनको यह टक्कर पूरे जोरो की होगी एसा लगा । उन्होंने तुरंत ही २४ मिनिट में एक योजन चल सकें ऐसी उंटनिओं को सुवर्ण लाने के लिए मांडवगढ़ की ओर दौड़ाई ।

इन्द्रमाल के चढ़ावे के लिए दिया गया समय पूर्ण हुआ । फिर से स्पर्धा जम गई, अट्ठाईस धड़ी सोना ! पूर्ण श्रेष्ठी जैसे तीर्थ के प्रश्न का अंत कर रहे हों वैसे उत्साह से जोर से बोलें । उनका मानना था कि,

आंकड़ा इससे आगे बढ़ेगा नहीं मगर 'शेर के ऊपर सवा शेर' होता ही है वैसा वह भूल गए थे ! सामने से उनसे भी ज्यादा तेज आवाज आई, छप्पन धड़ी सोना !

गिरनार गिरिवर में जैसे सिंह गर्जना करता है ठीक वैसे ही पेथड मंत्री ने गर्जना करते हुए कहा, "छप्पन धड़ी सोना !" उनको अब एक दो अंक बढ़ाकर अपना समय बर्बाद नहीं करना था । उनके हृदय में तीर्थ रक्षा का एक ही मंत्र चल रहा था । इसीलिए उन्होंने अड्डाईस का सीधा छप्पन कर दिया !

एक-दो मिनिट के लिए समग्र सभा शांत हो गई, सब पूर्ण श्रेष्ठी के चेहरे को देख रहे थे । वह भान भूल गए थे । क्या करें ? क्या न करें ? वह सब भूल गए थे । थोड़ी देर में स्वस्थ हुए । तीर्थ को अपना बनाने के लिए वह दिगम्बर संघ को बिनती करने लगा । सभी ने कहा अब हमारी कोई हैसियत नहीं है, अगर आप के पास संपत्ति है तो आगे बढ़ें ! वास्तव में हम अपना सब कुछ बेच दें तो भी इतना सुवर्ण इकट्ठा कर सकेंगे नहीं ! और निर्धन होकर, अपना सब कुछ लुटाकर हमें गिरनार नहीं चाहिए ! गिरनार क्या हमारे साथ घर पर चलेगा ? वो तो यहीं का यहीं ही रहेगा ! तो फिर अपना घर जलाकर तीर्थ यात्रा करने से क्या फायदा ?

पूर्ण श्रेष्ठी अकेले रह गए, किसीने उनका साथ नहीं दिया । अत्यंत दुखी होकर उन्होंने अपनी पराजय स्वीकार की । दोनों हाथ जोड़कर पेथड मंत्री को कहा, "मंत्रीश्वर पेथड शाह ! अब यह इन्द्रमाल-संघ माल आप ही पहनिए !" गिरनार गिरिवर श्रीनेमिनाथ भगवान के जय-जयकार से गूंज उठा । इन्द्रमाल के साथ तीर्थ जय की विजयमाल भी मंत्रीश्वर के गले में आ पड़ी । तीर्थ जिनका था उनकोही वापस मिला ! समस्त वातावरण आनंदमय हो गया । आज पेथड शाह के आनंद की कोई सीमा नहीं थी । तीर्थरक्षा के अमूल्य लाभ को पाकर वह धन्य-धन्य हो गया ।

मंत्रीश्वर इन्द्रमाल पहनकर गिरिवर से नीचे उतरे । धर्म में रत ऐसे उनको शास्त्रों के वचन का स्मरण हुआ कि, देवद्रव्य भर देने में देरी करना शुभ नहीं है ।

'जो अज्ञानी पुरुष जिमंदिर के द्रव्य का विनाश करता है अथवा स्वीकार किया हुआ देवद्रव्य देता नहीं है वह जीव संसार में घूमता है । उसे नरक का आयुष्य मिलता है ।'

यह शास्त्र वचन का स्मरण होते ही मंत्रीश्वर ने प्रतिज्ञा की कि, ''जब तक गिरनार की इन्द्रमाल के चढ़ावे का छप्पन धड़ी सोना यहाँ पर न आ जाये और वह देवद्रव्य भगवान के चरण में समर्पित न हों तब तक मुझे आहार-पानी का त्याग रहेगा !'' संघ के सभी लोग आश्चर्य चकित हो गए ! उनका शौर्य देखकर सब नतमस्तक हो गए ! कहाँ यह गिरनार और कहाँ मांडवगढ़ ! और छप्पन धड़ी सोना एक दो दिन में यूँही केसे आयेगा ? फिर भी मंत्रीश्वर को प्रभु के वचनों में इतनी श्रद्धा थी कि, देवद्रव्य का ऋण सर पर रखकर एक कवल भी गले से नीचे कैसे उतारें ? उनके दिल और दिमाग में शासन बसा था और शासन के प्रति प्रेम उनके खून की बुंद बुंद में था ! मंत्रीश्वर पेथड शाह की शासन के प्रति वफादारी देखकर सब के मस्तक अहोभाव से झुक गए !

दूसरी ओर उटनियाँ पवन जैसी गति से मालव देश के मांडवगढ़ से जरूरी सुवर्ण इकट्ठा करके गिरनार की ओर आ रही थी । गिरनार का अधिकार श्वेतांबरों को मिल गया था फिर भी जब तक मूल्य चूकते न हों तब तक शांति से कैसे बैठा जा सकें ? पेथडमंत्री को कहीं भी चैन न था । सब की आँखें मांडवगढ़ के रास्ते पर थी । ग्रीष्म ऋतु में प्यासा चातकपंछी जैसे आकाश की ओर देखता रहता है उसी तरह सब की दृष्टि उटनियों को देखना चाहती थी ।

एक दिन बिता ! इन्द्रमाल के दिन का उपवास हुआ । दूसरे दिन का मध्याह्न का समय भी बीत गया ! शाम भी ढल गई मगर निराशा के अलावा कुछ भी हाथ नहीं लगा ! आखिर सब ने आशा छोड़ दी । दो घड़ी (४८ मिनिट) जितना ही दिन शेष था अब ! इतने में मांडवगढ़ की दिशा से उटनियों के पदचापकी आवाज सब के कानों को सुनाई दी ! पेथड मंत्री उटनियों के आगमन से आनंदित हो उठे । धूल का गुबार उड़ाती हुई उटनियाँ मांडवगढ़ से आकर गिरनार की तलहटी में खड़ी हो गई !

तुरंत ही उटनियों पर से सुवर्ण की बोरियाँ नीचे उतारी गई और छप्पन धड़ी सुवर्ण को तोला गया । मंत्रीश्वर ने वह सुवर्ण भगवान श्रीनेमिनाथ के चरणों में समर्पित किया । सब लोग मंत्रीश्वर को भोजन कराने के लिए इच्छुक थे मगर मंत्रीश्वर ने तो ना ही कही ! दो घड़ी पहले आहार-पानी कर लेने का उनका नियम था और सूरज तो दो घड़ी से ज्यादा आगे बढ़ गया था । इसलिए मंत्रीश्वर ने तो चोविहार उपवास का पच्चक्खान (प्रतिज्ञा) करके छट्ठ का तप किया ।

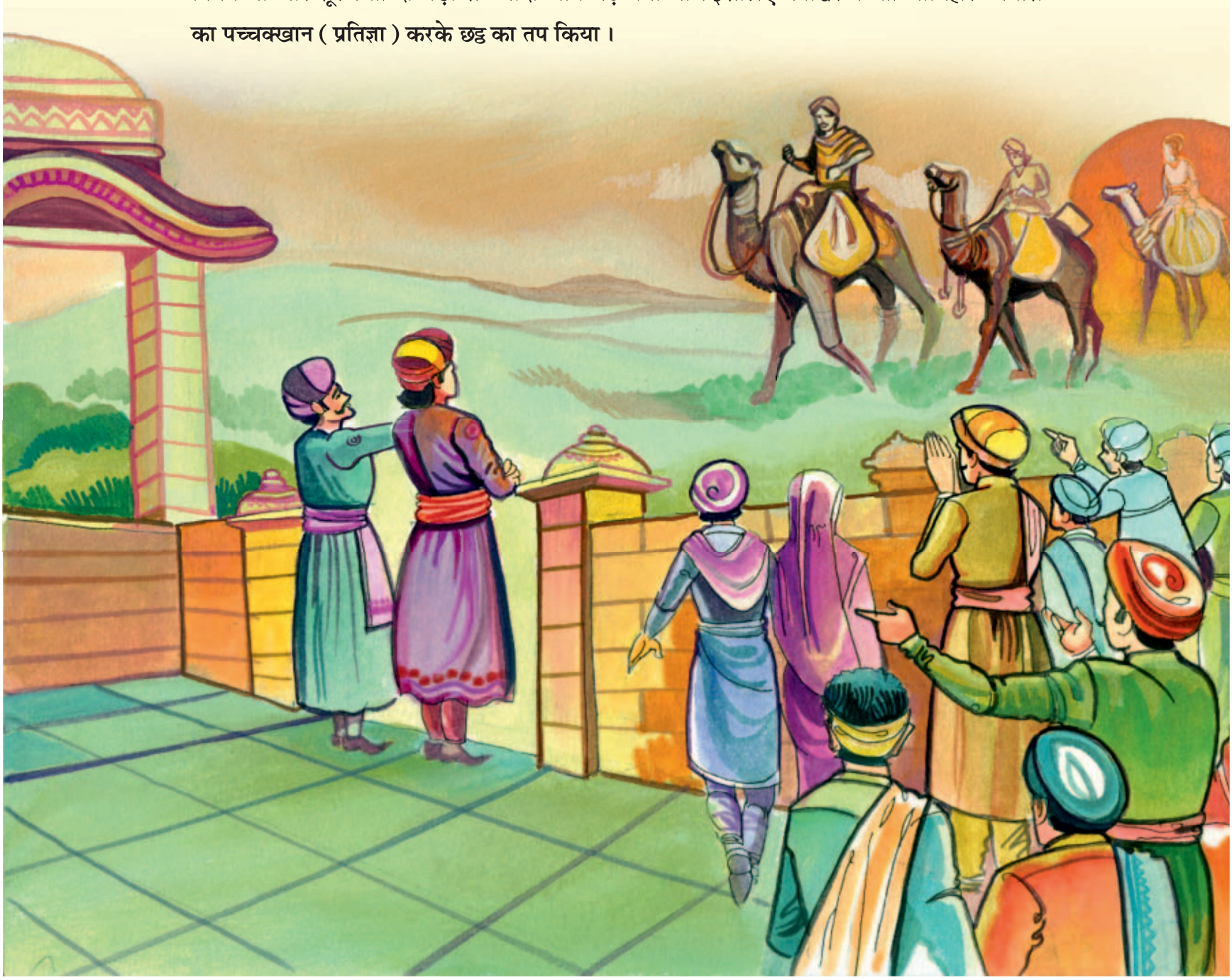

सूर्य को मंत्रीश्वर का पारणा(उपवास के बाद का भोजन) देखना था किन्तु ये देखने का उनका भाग्य नहीं था तो सूर्य को ऐसे ही चले जाना पड़ा ! नई सुबह साजिंदों के मंगल नाद के साथ चतुर्विध संघ के शीतल सानिध्य में मंत्रीश्वर पेथड के छट्ठ के तप की पूर्णाहुति हुई । उस दिन विशाल जनसंख्या के लिए संघस्वामी वात्सल्य का भोजन समारोह आयोजित हुआ । श्वेतांबर जैन संघ का एक सितारा चमक उठा ।

प्रश्न :

प्र. १ गत चौबीसी, वर्तमान चौबीसी और आने वाली चौबीसी के कितने परमात्मा के कौन कौन से कल्याणक श्री गिरनार जी पर हुए है, और होंगे ?

प्र. २ देवद्रव्य के लिए शास्त्रों में क्या बताया गया है ?

प्र. ३ मंत्रीश्वर पेथड कब चोविहार का पच्चक्खान (प्रतिज्ञा) करते थे ?

प्र. ४ यात्रा करने से क्या फल प्राप्त होता है ?

तीर्थ की रक्षा के लिए अपना सब कुछ देना पड़े तो उसमें कभी भी सोचना नहीं चाहिए ।

पेथडशा को तीर्थ के प्रति कैसा गजब का प्रेम ! उपरांत अपने व्रत-पालन में भी कितने अटल थे ।

अभी सूर्यास्त को देर होने के बावजूद नित्य शाम को सूर्यास्त की दो घड़ी (४८ मिनिट) पहले आहार-पानी के त्याग का नियम होने के कारण उस में कोई समझौता नहीं किया ।

हम भी ऐसे नियम लेकर उनका चुस्त पालन करेंगे न !

जीत तो हमेशा सत्य की ही होती है... १६

घामणउली नामक गाँव में एक धार नामक श्रीमंत श्रावक रहता था । वह जिनेश्वर परमात्मा के शासन का अडिग अनुरागी होने से उनके पांचों पुत्रों के हृदय में भी शासन के प्रति प्रेम था । धार सुश्रावक ने एक बार गिरनार की अचिंत्य महिमा सुनी तब उसने संघ के साथ गिरनार की यात्रा करने का निर्णय किया । पूरा गांव आनंदित हो गया । गांव की गली-गली में हरे पत्ते और फूलों की मालाएं झूलने लगी ।

शुभघडी और मंगल दिन में सुश्रावक धार के संघ का शुभारंभ हुआ । प्रत्येक गांव में शासन की प्रभावना करता हुआ संघ गिरनार की तलहटी में पहुँचा । तब श्वेतांबर जैन के कट्टर विरोधी दिगम्बर पक्ष के अनुयायियों ने संघ के लोगों को यात्रा करने से रोका । धार का संघ दृढ़ संकल्प के साथ आगे बढ़ रहा था तब सामने वाले पक्ष ने चिल्लाते हुए आवाज लगाई "खबरदार! यह गिरनार पर हमारा सम्पूर्ण अधिकार है, यहाँ पर यात्रा करने का आपको कोई अधिकार नहीं है ।" दोनों पक्षों के बीच तना तनी हुई मगर कोई निर्णय नहीं हुआ तो धार श्रावक के संघ के लोग न्याय के लिए राजा के पास गए । किंतु दिगम्बर पक्ष से प्रभावित राजा ने उनके पक्ष के प्रति भाव दिखाया नहीं इसीलिए धार के पुत्रों और संघजनों ने जान की बाजी लगाकर तीर्थ भक्ति के लिए लड़ने की तैयारी जताई । तीर्थ भूमि आज रणभूमि बन चुकी थी । धार श्रावक के एक के बाद एक पुत्र पूरे जुनून के साथ विरोधियों के सामने लड़ रहे थे परंतु विरोधियों की बड़ी संख्या के सामने एक के बाद एक ऐसे पांचों पुत्र तीर्थ भक्ति के लिए शहीद हो गए और मरकर पांचों पुत्र गिरनार क्षेत्र के १-कालमेघ, २-मेघनाद, ३-भैरव, ४-एकपद, ५-त्रैलोक्यपाद नामक पांच अधिपति हुए ।

तीर्थ भक्ति के उत्तम भाव वाले धार श्रावक को कहीं पर चैन नहीं आ रहा था । पांचों पुत्र रत्न तीर्थ के लिए शहीद होने के बाद वह घूमते हुए कान्यकुब्ज नगर में पहुँचा । अनजान स्थान में घूमते हुए जैन उपाश्रय में व्याख्यान चल रहा है ऐसा जानकर वह अंदर जाकर सभा जनों को बींधते हुए व्याख्यान दे रहे बप्पभट्टसूरी महाराज साहब के पास आकर बैठ गया। थोड़ी देर व्याख्यान सुनकर धार श्रावक सभा के बीच खड़े होकर सकल संघ की मौजूदगी में आचार्य भगवंत को कहने लगा,

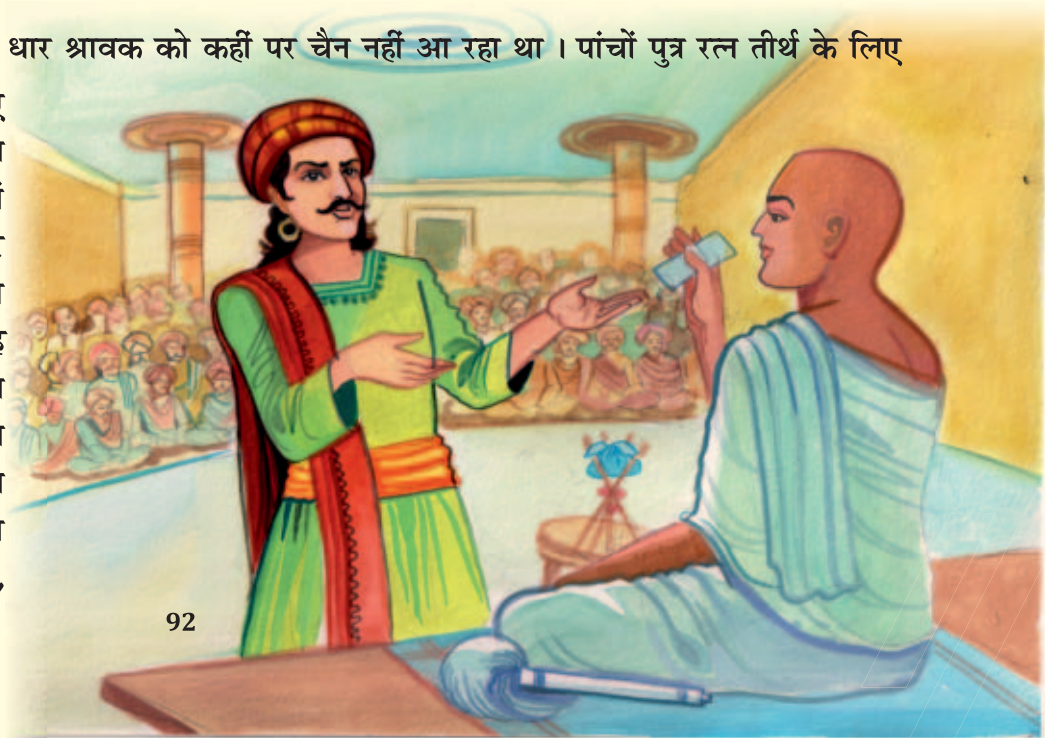

''आज जब गिरनार तीर्थ में हमारा कब्जा खतरे में है तब इस तरह 'पाट' पर बैठकर आप व्याख्यान करें ये कितनी शोभा देगा ? पहले तीर्थ का उद्धार करो ।''

आचार्य बप्पभट्टसूरी और आमराजाने गिरनार तीर्थ की परिस्थिति जानकर संघ के साथ गिरनार तीर्थ की यात्रा करने का निर्णय किया और आमराजा ने जब तक नेमिनाथ दादा के दर्शन न हों तब तक आहार-जल के त्याग की प्रतिज्ञा की ।

शुभ मुहूर्त में संघ ने प्रस्थान किया । गाँव-गाँव में जीव दया, अनुकम्पा, साधर्मिक भक्ति, आदि शासन प्रभावना के साथ संघ आगे बढ़ रहा था । कुछ दिन बाद संघ खंभात तीर्थ पहुंचा था । आहार पानी के त्याग के कारण आमराजा के शरीर की क्षीणता बढ़ती जा रही थी । आमराजा की प्रतिज्ञा की अडिगता को देखकर आचार्य भगवंत ने शासन देवी अम्बिका की आराधना की । अम्बिका देवी ने प्रकट होकर आमराजा को गिरनार के श्री नेमिनाथ भगवान की एक प्रतिमा लाकर दर्शन कराया और उसकी प्रतिज्ञा पूर्ण हुई है ऐसा बताकर भोजन कर लेने की बात कहकर वह अंतर्ध्यान हो गई ।

संघ शासन प्रभावना के साथ आगे बढ़ते हुए गिरनार की तलहटी में पहुंचा था । ११ विरोधी संघों के राजा वहाँ डेरा डालकर बैठे थे । आमराजा के संघ ने वहीं पर पड़ाव किया और दूसरे दिन यात्रा का आरंभ किया ही था कि सामने वाले पक्ष से आवाज आई, "खबरदार! यह तीर्थ पर हमारा अधिकार है, एक कदम भी आगे बढ़ाया तो तुम्हारे सिर धड़ से अलग कर दिए जाएंगे ।" यह सुनकर आमराजा युद्ध करने के लिए तैयार हो गए लेकिन आचार्य भगवंत बप्पभट्टसूरीजीने उनको शांत किया । उन्होंने कहा, "सर्व धर्म का मूल दया है इसीलिए धर्म के लिए ऐसी हिंसा क्यूँ हों ? हम शास्त्र चर्चा के द्वारा हार-जीत का फैसला करें ?" सब ने सहमति जताई । दोनों पक्षों के आचार्य भगवंत, राजा और श्रावक आमने-सामने बैठ गए । परस्पर अपने विचार रखने लगें और माता सरस्वती देवी की सहायता से आचार्य बप्पभट्टसूरीजी ने सामने वाले पक्ष के सभी अभिप्रायों का खंडन किया । इसीलिए श्वेतांबरों के विजय की घोषणा हुई ।

नम्रता मूर्ति आचार्य भगवंत ने अपने पक्ष की विजय होने के बावजूद दोनों पक्ष शासन देवी अम्बिका देवी की आराधना करके उन्हीं के पास निर्णय की मांग करें, और वो जो भी निर्णय करें उनका हम सब मान रखें ऐसा बताया, सामने वाले पक्ष को भी आशा की किरण दिखाई दी इसीलिए वे भी सहमत हुए । दोनों पक्ष में एक-एक बालिका को भेजे और दोनों बालिकाएं जो भी कहें उसका स्वीकार सब करेंगे ऐसा तय हुआ ।

मंगल घड़ी में आचार्य बप्पभट्टसूरीजीने एक कन्या को सामने वाले पक्ष में भेज दिया । उस पक्ष ने अनेक प्रयत्नों से उस कन्या को बोलने को कहा लेकिन वह कन्या बहरी और गूंगी हों ऐसे खामोश हो गई । सामने वाले पक्ष ने एक कन्या को आचार्य बप्पभट्टसूरीजी के पास भेजा । उन्होंने वह कन्या की ओर अमीद्रष्टि से देखा और उसके सिर पर हाथ रखते हों ऐसे आशीष दिए, कि तुरंत ही शासन देवी उसके मुख से स्पष्ट रूप में बोलने लगी कि-

इक्कोवि नमुक्कारो,
जिणवरवसहस्स वद्धमाणस्स;
संसारसागराओ,
तारेइ नरं व नारिं वा ॥ १ ॥

(श्री वर्धमान स्वामी को किया गया एक भी नमस्कार, पुरुष हों या स्त्री हों सभी को यह संसार सागर से तारता है ।)

उंज्जितसेलसिहरे
दिक्खा नाणं निसीहिआ जस्स;
तं धम्म चक्कवट्टीं
अरिट्ठनेमिं नमंसामि ॥ २ ॥

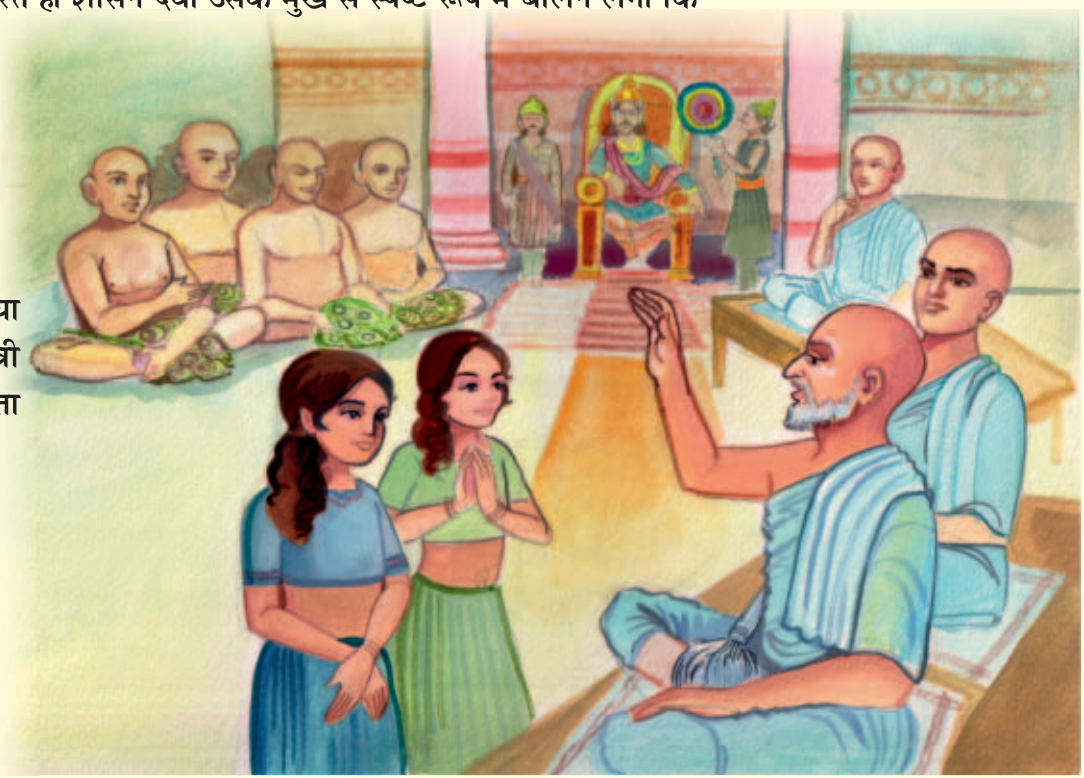

(उज्जयन्त पर्वत के शिखर पर दीक्षा, केवल ज्ञान, और मोक्षकल्याणक हुए है जिसके, उस धर्मचक्रवर्ति श्री अरिष्टनेमि भगवंत को मैं नमस्कार करता हूँ।)

यह श्लोक सुनकर आचार्य बप्पभट्टसूरीजीने बताया कि, हमारे श्वेताम्बरों की मान्यता के अनुसार स्त्री, पुरुष या नपुंसक हर कोई मोक्ष को पा सकता है, जब कि विरोध पक्ष वाले तो स्त्री की मुक्ति को मानते ही नहीं। इसीलिए कन्या के स्वरूप में आई हुई शासन देवी ने उच्चरित किये हुए श्लोक में स्पष्ट दर्शाया गया है कि, "वर्धमान स्वामी को किया गया एक भी नमस्कार नर-नारियों को तारता है। इस तीर्थ के अधिकार के लिए शासन देवी का श्वेताम्बरों के पक्ष में उच्चारण करने से अब गिरनार के हक का प्रश्न सहज ही सुलझ जाता है।" दोनों पक्षों के आचार्य भगवंतों, राजाओं तथा सभा जनों के द्वारा यह वचनों का स्वीकार होते ही श्वेताम्बरों के विजय की घोषणा के साथ जय तलहटी श्री नेमिनाथ परमात्मा के नाम के जयघोष से गूंज उठी।

❋

प्रश्न :

प्र. १ धार श्रावक कान्यकुब्ज नगर में कौन से महाराज साहब के पास पहुँच जाता है ?

प्र.२ अम्बिका देवी ने आमराजा को कौन से तीर्थ में नेमिनाथ भगवान के दर्शन करवाये थे ?

प्र.३ किसको किया हुआ एक भी नमस्कार नर-नारियों को तारता है ?

शासन और तीर्थ हेतु बलिदान देने के लिए हमेशा तैयारी रखनी चाहिए।
जो भी संकल्प करो उसका पालन करने के लिए हमेशा तत्पर रहना चाहिए।
जय गिरनार ! जय नेमिनाथ !

१७ मंत्र का प्रभाव

जूनागढ़ की गद्दी पर राजा रा'खेंगार शासन करता था । किसी बौद्ध भिक्षु के संपर्क में आने के कारण उसने बौद्धधर्म का स्वीकार किया था ।

विघ्नसंतोषी ऐसे कुछ धर्मांध बौद्धों द्वारा गरवे गिरनार के शिखर पर बिराजमान बाईसवें तीर्थंकर बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथ भगवान के जिनालय पर कब्जा जमा लिया गया था । राजा के सहयोग से और जबरदस्ती से बौद्धों द्वारा बौद्धों के अतिरिक्त किसी को भी गिरनार की यात्रा करने पर प्रतिबंध लगा दिया गया था ।

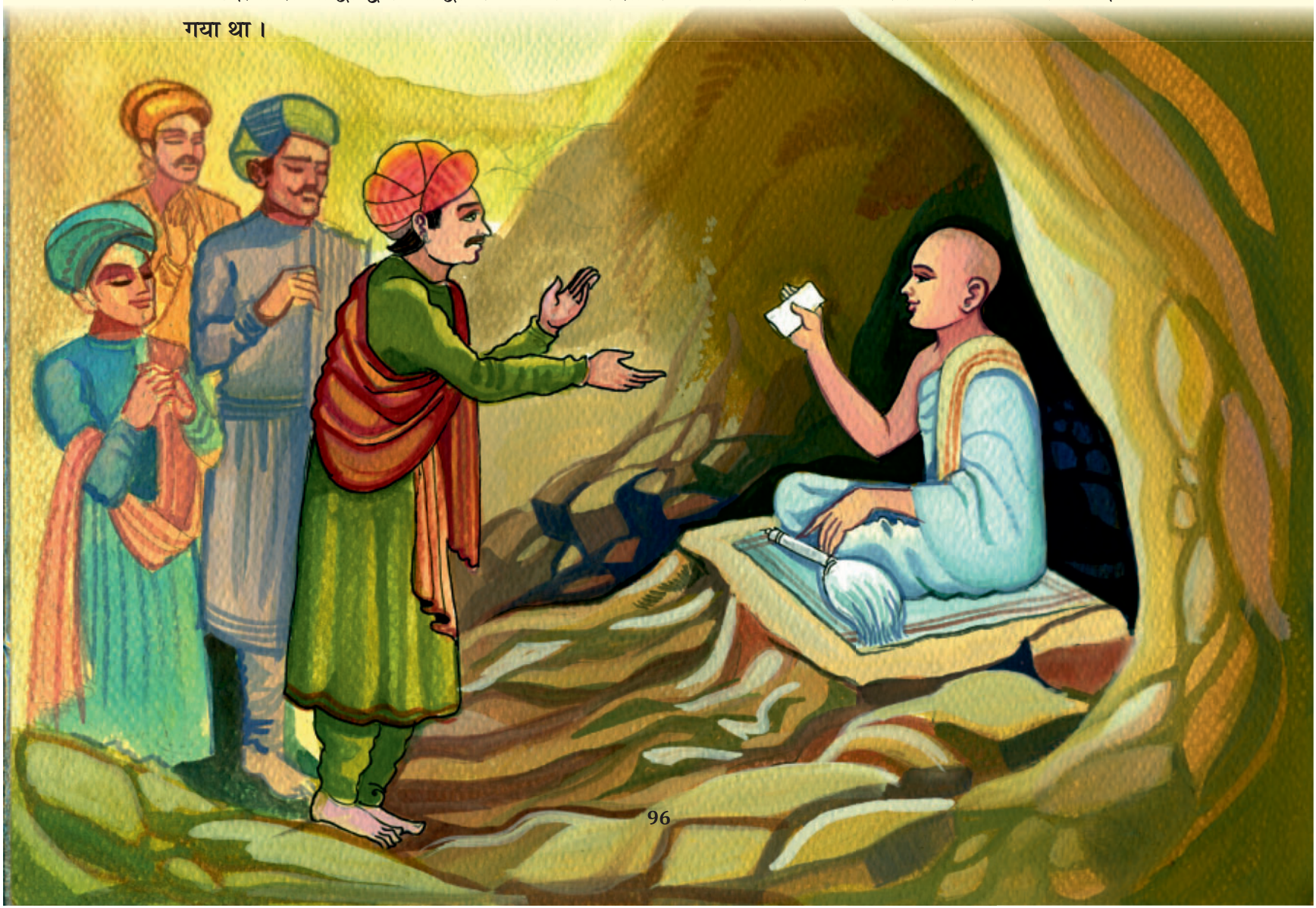

एक बार सिद्धाचल महातीर्थ की यात्रा कर के जैन श्वेताम्बर यात्रियों का एक बड़ा संघ गिरनार महातीर्थ के नेमिनाथ भगवान के दर्शन, स्पर्शन, पूजन आदि भक्ति के लिए तलहटी में आकर ठहरा हुआ था । उस वक्त कुछ धर्मांध बौद्धों ने श्री संघ को यात्रा करने से रोककर ''बुद्धं शरणं गच्छामि'' कहकर बौद्ध धर्म का स्वीकार करें तो ही गिरनार की यात्रा करने की अनुमति मिलेगी ऐसा आग्रह रखा था ।

समग्र भारतवर्ष के श्वेताम्बर संघ चिंतित हो गए । यह तीर्थ का प्रश्न हल करने के लिए संघ ने इकट्ठा होकर बौद्धों को समझाने के अनेकों प्रयास किए मगर उनकी ओर से अनुकूल प्रतिसाद नहीं मिलने के कारण सबने सोचा कि अब कोई दिव्य तत्त्व की सहायता से ही यह सवाल का हल मिले ये जरूरी है । दिव्यतत्त्व की सहायता हेतु सुयोग्य श्रावक की पसंदगी करके मंत्रजाप की आराधना द्वारा गिरनार महातीर्थ की अधिष्ठायिका और वर्तमान चौबीसी के बाईसवें तीर्थंकर बाल ब्रह्मचारी श्री नेमिनाथ भगवान के शासन की अधिष्ठायिका श्री अम्बिकादेवी प्रकट हुए । सालों से चल रहे यह विवाद का अंत लाने के उपाय के लिए अम्बिका देवी को पूछा तो उन्होंने बताया कि, ''यदि आचार्य यशोभद्रसूरि अथवा उनके शिष्य बलिभद्रमुनि यहाँ(गिरनार)आयें तो इस प्रश्न का निराकरण होते ही सब सुखपूर्वक यात्रा कर पाएंगे ।''

श्री संघ के लोगों ने उन महात्माओं के बारे में तपास की तो बलिभद्रमुनि किसी गुफा में साधना कर रहें हैं ऐसा जानने को मिला । संघ का संदेश लेकर चार लोग पर्वतों की दर्रो में घूमते हुए जहाँ पर बलिभद्रमुनि साधना कर रहे थे वहाँ पहुँचे । महात्माजी को वंदन करते हुए उन्होंने उनको जूनागढ़ पधारने का संघ का संदेश दिया । महात्मा ने हकीकत जानकर सबको कहा, ''आप लोग जूनागढ़ पहुँचिए मैं आता हूँ ।'' वे लोग खुश होकर जूनागढ़ वापिस आये ।

बलिभद्रमुनि तो आकाशगामिनी विद्या के प्रभाव से उड़कर जूनागढ़ की तलहटी में श्री संघ के काफिले के पास आ पहुंचे । श्री संघ के भाइयों के पास से घटना के बारे में जाना और मंत्रबल से काफिले के आसपास अग्नि का किला बनाकर उसके आसपास पानी की खाई बनाई । उसके बाद अभिमंत्रित उडद-चावल और कनेर की छड़ी लेकर संघ के भाइयों के साथ राजमहल में जाकर राजा को आशीर्वाद देकर बैठे तब राजा ने नमस्कार किया ।

बलिभद्रमुनि ने राजा को कहा, ''हे राजन ! राज्य तो उसे कहा जाता है जो न्याय से चले प्रजा का रक्षक ही जब भक्षक बन जाएं तो प्रजा कहाँ जाएं ? इस तरह हमारे तीर्थ पर कब्जा करना न्यायोचित नहीं है, अन्याय करने वाला राजा नर्क में जाता है ।''

महात्मा की ऐसी बातें सुनकर राजा क्रोध में आकर उन्हें कहने लगा, ''अरे मुंडा ! तुम मुझे पहचानते नहीं हो ? तुम क्या बोल रहे हो ? तुम्हे तीर्थ प्रिय है तो बौद्ध धर्म का स्वीकार करके तीर्थभक्ति क्यों नहीं करते ? अब तुम्हें तुम्हारी इस हरकत का फल दिखाता हूँ ।'' क्रोधित हुए मुनिने भी आवेश में आकर उडद-चावल के दाने मंत्री और रानी की ओर फेंके तथा कनेर की छड़ी को जमीन पर फटकारते ही रानी का पूरा शरीर दर्द करने लगा । रानी तो पलभर में बिना पानी की मीन की तरह तड़फने लगी । उसके पूरे बदन में अग्नि केजैसी जलन होने लगी और मुनि तो चले गए ।

राजा ने मंत्री को बताया, ''इस मुनिने खुद का अपमान होने के कारण रानी की हत्या का प्रयास किया है, अब उसको मेरे बल का चमत्कार दिखाए बिना नहीं रहूंगा । अब तो संघ के साथ उसको भी खत्म कर दूंगा, अब या तो रानी को ठीक करें या मरने के लिए तैयार हो जाएं !''

मंत्री ने कहा, ''महाराजा ! सबसे पहले तो हम हमारे बौद्धगुरु को बुलाकर रानी के दर्द का उपचार करवा लें उनसे यदि ठीक न हुआ तो हम संघ पर आक्रमण करेंगे ।''

मंत्री के वचन सुनकर राजा ने बौद्ध परिवारों द्वारा उनके धर्मगुरूओं को बुलाकर समग्र हकीकत बताकर रानी की विषम परिस्थिति की जानकारी दी । बौद्धगुरु ने निश्चिंत हो जाने को कहकर वे मुनि को हाजर करके रानी को पुनः स्वस्थता प्राप्त हों इसीलिए अपनी शक्ति के प्रयोग शुरू किये किंतु वे सब सम्पूर्ण रूपसे निष्फल हो गए । बारंबार प्रयास करने पर भी कुछ परिणाम नहीं निकलने से रानी ने राजा को कहा, ''इस गुरु से कुछ होने वाला नहीं !'' इसीलिए राजा ने तुरंत ही सेनापति को बुलाकर जैनो के संघ और मुनि पर आक्रमण करने के लिए सैन्य को तैयार किया ।

सैन्य सज्ज होकर काफिले के पास जाने के लिए प्रस्थान करता हैं कि काफिले के आसपास अग्नि का प्रकाशित किला दिखाई दिया । सैन्य के हाथी अग्नि की ज्वालाओं को देखकर आगे बढ़ने से रुक गए और घोड़े तो भीषण ज्वालाओं को देखकर मुर्गे की तरह इधरउधर दोड़ने लगे, राजा भी यह दृश्य देखकर चकित हो गया ।

मंत्री राजा को कहने लगा, ''स्वामी ! ये कोई साधारण पुरुष नहीं लगते । यदि आप की अनुमति हों तो उस महात्मा के पास जाकर मैं समाधान के प्रयास करुँ राजा की अनुमति मिलते ही मंत्री ने मन में संकल्प लिया कि, ''यदि मेरा मन शुद्ध हो तो यह अग्नि का किला मुझे रास्ता दें'' मंत्री की निष्ठा के प्रभाव से रास्ता खुल गया । मंत्री मुनिवर के पास जाकर करबद्ध नमस्कार करते हुए कहने लगा, ''आप राजा का विरोध न करें ! वो पृथ्वीपति है, उनके पास बड़ा लश्कर है ।''

मुनिवर मंत्री की बात सुनकर मंद मुस्कान के साथ प्रत्युत्तर देने लगे, "ये मेरा बल देखिए !" ऐसा कहकर छड़ी उठाकर लंबी करके मंत्र के प्रभाव से सभी वृक्षों को झुकाकर नीचे गिरा दिए और मुनिवर कहने लगे, "इसी तरह आपके राजा का सैन्य धरती को नमस्कार करते हुए धूल चाटने लगेगा, इसीलिए आपके राजा को संदेश दीजिएगा कि, यदि आपकी रानी और सैन्य की कुशलता चाहते हो तो हमारा तीर्थ हमे सौंप दो !" यह दृश्य देखकर मंत्री तो अचम्भित हो गया, महात्मा की परीक्षा करने केलिए उसने कहा, "अरे ! ढक्कन तो चूहा भी गिरा दें ! आप में यदि ताकत हो तो यह वृक्षो को फिर से खड़ा कर दीजिए तो हम आपको सच मानेंगे !"

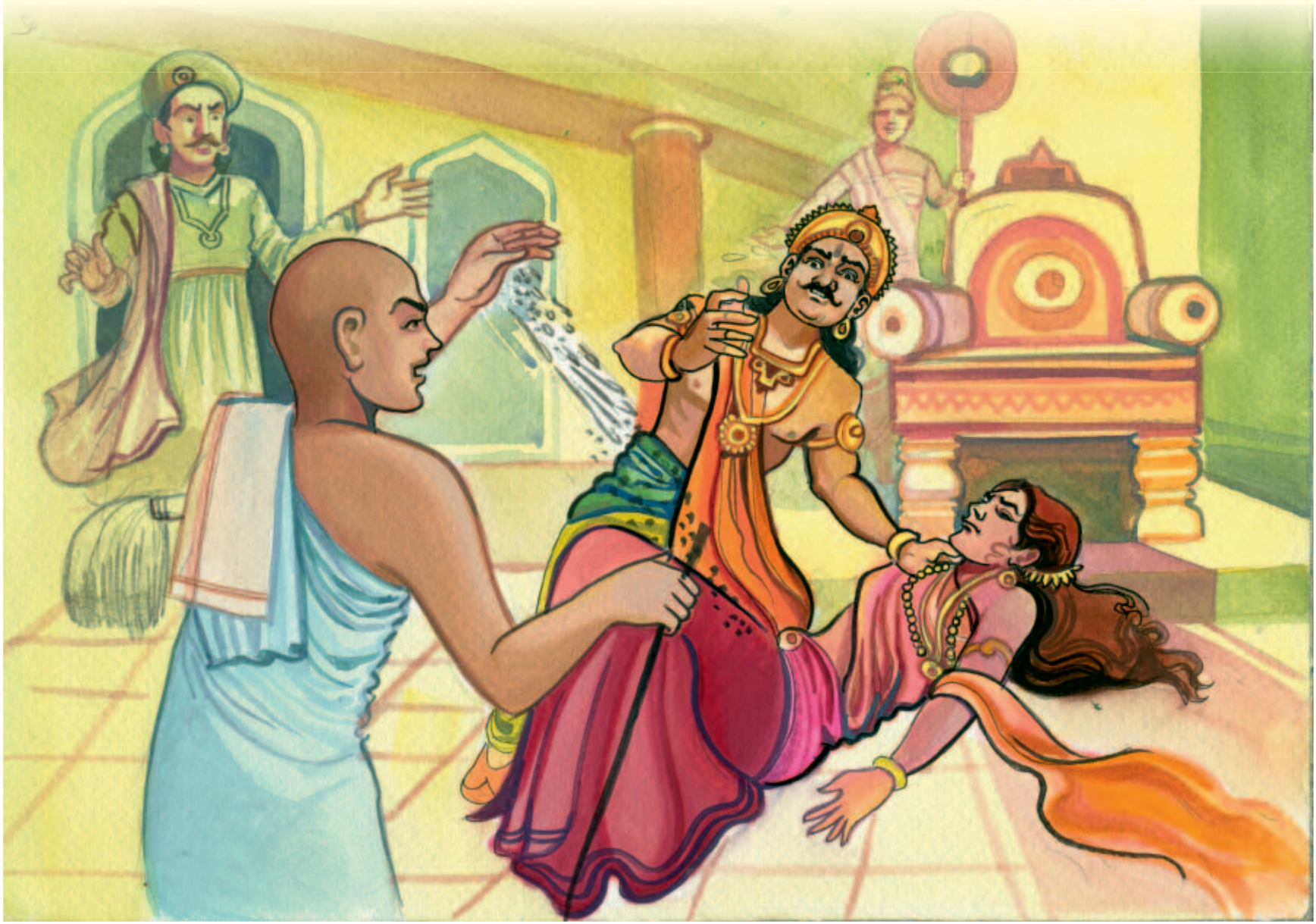

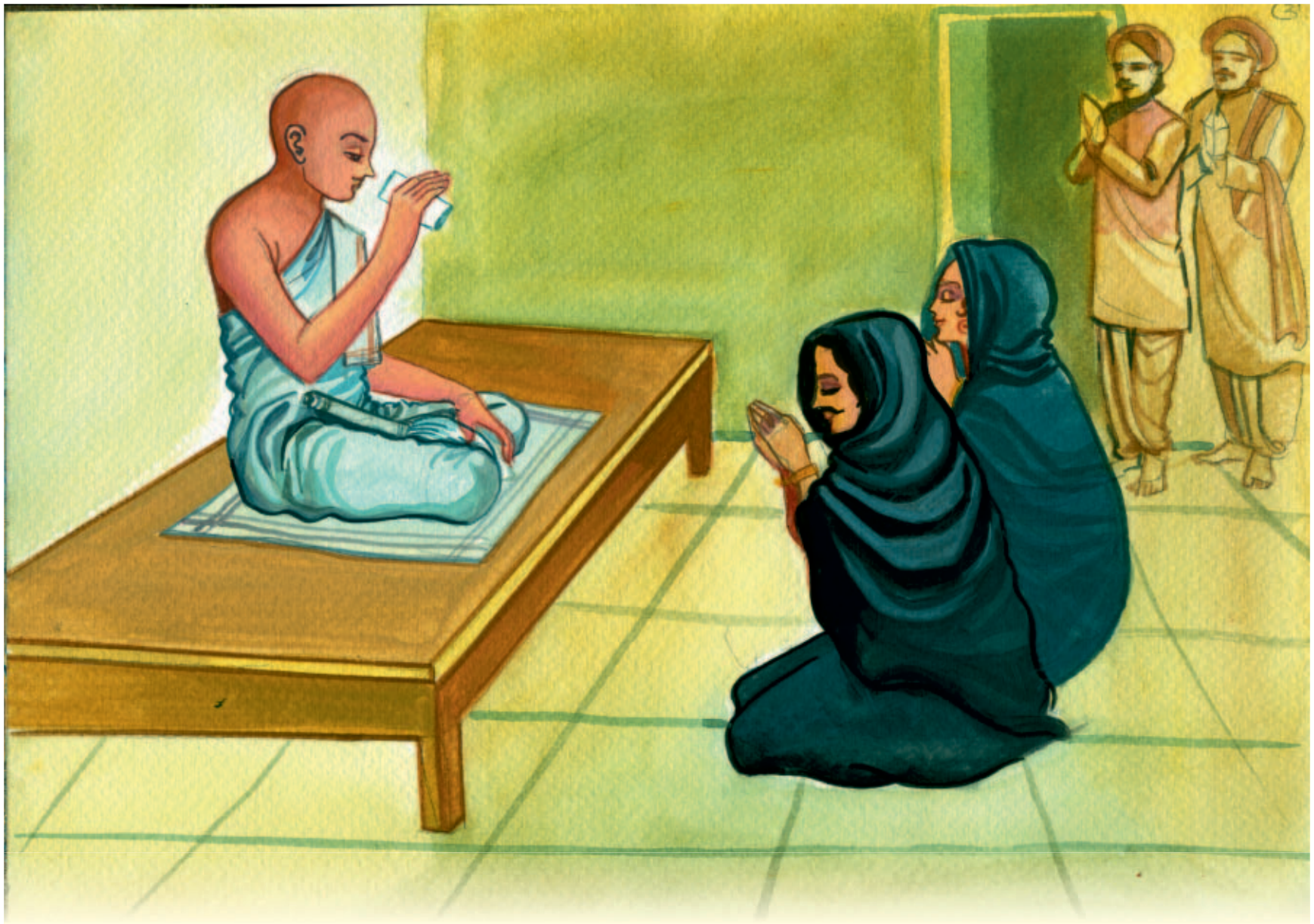

महात्मा ने फिर से छड़ी को लंबा किया और मंत्रविद्या का स्मरण करते ही सभी वृक्ष फिर से ज्यों के त्यों खड़े हो गए । इस घटना को देखकर ही मंत्री पलभर केलिए तो अवाक रह गया, इस मंत्रशक्ति का चमत्कार देखते ही मंत्री ने सीधे राजा के पास जाकर बलिभद्रमुनि के बल का वर्णन किया और कहा, "महाराजा ! महात्मा को कुपित करके आप को, मुझे या राज्य को कोई लाभ होगा नहीं इसीलिए यह महात्मा प्रसन्न रहे ऐसा ही करो !" राजा ने अनिच्छा से भी अपनी हार का स्वीकार करके मंत्री को महात्मा के पास भेजा ।

मंत्री ने मुनि के पास जाकर कहा, ''महात्मा ! राजा आप के चरणस्पर्श करके आपकी क्षमा याचे तो आपको कोई रोष नहीं है न ! क्योंकि शत्रु कैसा भी हों मगर जब सामने आकर शरणागति स्वीकार कर लें तो हर तरह की दुश्मनी का अंत आ जाता है न !'' मुनि ने कहा, ''राजा और रानी काली कम्बल पहनकर यदि यहाँ आकर चरणस्पर्श करें तो रानी स्वस्थ हो जाएगी'' राजा-रानी ने आकर चरणस्पर्श करते ही मुनि शांत हुए और गिरनार महातीर्थ का कब्जा पाते ही रानी को पहले की तरह स्वस्थ किया ।

समस्त जैन श्वेताम्बर संघ और बलिभद्रमुनि बहुत भाव से ''गिरनार की जय, नेमिनाथ भगवान की जय'' के नारे लगाते हुए बाल ब्रह्मचारी नेमिनाथ दादा के जिनालय में पहुँचकर दर्शन-स्पर्शन-पूजन आदि द्वारा प्रभुभक्ति में लीन हुए । आज सब के मनोरथ पूर्ण होने से सभी के आनंद की सीमा न रही ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ गिरनार महातीर्थ के प्रश्न का निराकरण करने के लिए संघ ने कौन से महात्मा का संपर्क किया ?

प्र. २ मंत्री के कौन से गुण के प्रभाव से अग्नि के किले में रास्ता हुआ ?

प्र. ३ मुनि और संघ कौन सा नारा लगाते हुए गिरनार की यात्रा कर रहे थे ?

अहिंसा, संयम और तप के प्रभाव से दिव्यतत्त्व भी सेवा में उपस्थित होते हैं, इसलिए हंमेशां अहिंसा, संयम, और तपधर्म की विशेष आराधना करनी चाहिए ।

अन्य स्थान पर रहकर ध्यावै रैवतगिरि.. पाए केवलज्ञान १८

महाभारत के महापुरुष पांडवों से कौन अनजान होंगे ? उनको कौन नहीं पहचानता ? उन पांडवों के वंश में ही 'पांडुशेण' नाम के एक शूरवीर राजा हो गए । उनको नाम जैसे गुणोंवाली दो पुत्री थी मति और सुमति । एक बार वे दोनों बहनों को अनंते तीर्थंकरों की कल्याणभूमि श्री गिरनार महातीर्थ की स्पर्शना करने की इच्छा हुई । दोनों पुण्यशाली बहने अपने परिवार के साथ जहाज में बैठकर समुद्र मार्ग से श्री गिरनारजी की दिशा में निकल पड़ी ।

जहाज आगे बढ़ रहा था और श्री गिरनार तीर्थ की नजदीक आ रहा था । मति और सुमति दोनों के मन में अत्यंत आनंद था । बस ! कब गिरनार पहुँचें उसी भावना में वे लीन थे । मगर कुदरत को तो कुछ और ही मंजूर था । जहाज जब बीच समुद्र में पहुँचा तब ही अचानक समुद्र में भयंकर तूफान उठा । समुद्र की लहरें पूरी ताकत से उछलने लगी । पश्चिम दिशा की हवाएं तेजी से चलने लगी । नाव मजधार में हिलने-डुलने लगी ।

नाव में बैठे सभी यात्री, तूफान को देखते ही कांपने लगे ! दूर-दूर तक दिखाई दे रहे सागर के पानी में काफी गति थी । तूफान और ज्यादा भयंकर रूप ले रहा था ! थोड़ी देर में तो नाव की पाल ची..र ची..र.. चिरने लगी नाव की पतवार अब काबू में नहीं थी ।

सभी यात्रियों को मौत सामने दिख रही थी । उन सभी के हृदय भय से विचलित हो रहे थे, तब भी मति और सुमति तो शांत ही बैठे थे । दोनों बहनो ने सोचा कि, ऐसी परिस्थिति में बचने का कोई रास्ता नहीं है । श्री गिरनारजी की यात्रा करने की इच्छा मन में ही रह जायेगी । इसीलिए द्रव्य से नहीं मगर भाव से तो श्री गिरनार के श्री नेमिनाथ दादा को वंदन कर लें । जैसे उनके सामने ही गिरनारजी हों वैसे वो वंदन करके मन से श्री नेमिनाथ प्रभु के गीत गा रही थी !

थोड़े पल बीतें और तूफान ने ज्यादा वेग पकड़ा । दो पल बीते और पानी की लहरें नाव को पलटाने के लिए दौड़ी आई ! सागर की लहरों के सामने नाव जैसे अपनी रक्षा करने के लिए जंग लड़ रही थी ! ऐसे समय में जब कुछ यात्री मृत्यु के भय से जोर से रो रहे थे, चीख रहे थे, कुछ चिल्ला कर वातावरण को और भयंकर बना रहे थे, तब उन सब के बीच भी मति और सुमति श्री गिरनारजी के ध्यान में मस्त थे। उनको मृत्यु का कोई भय न था और जीवन की कोई इच्छा भी न थी !

उन बहनों के दिल में भय नहीं, भगवान श्री नेमिनाथ थे, घबराहट नहीं आँखों के सामने श्री गिरनार खेल रहा था और जब एक भयंकर आंधी आई और नाव पलट गई तब शुभ भाव धारा बढने से उनको केवलज्ञान की भेंट मिली।

पानी की लहरों की घात लगकर नाव का चूरा होने से पहले तो इन दोनों बहनो के घाती-अघाती सभी कर्म चूर हो गए। तूफानी लहरों के कारण जहाज टूट गया। उनमें रहे सभी यात्री समुद्र में डूबकर मर गए लेकिन मति और सुमति की आत्मा संसार सागर को तैर गई। उन्होंने 'भाव' के प्रभाव से केवलज्ञान पाया।

मति और सुमति के शरीर को सागर की लहरों ने किनारे पर फेंक दिया,

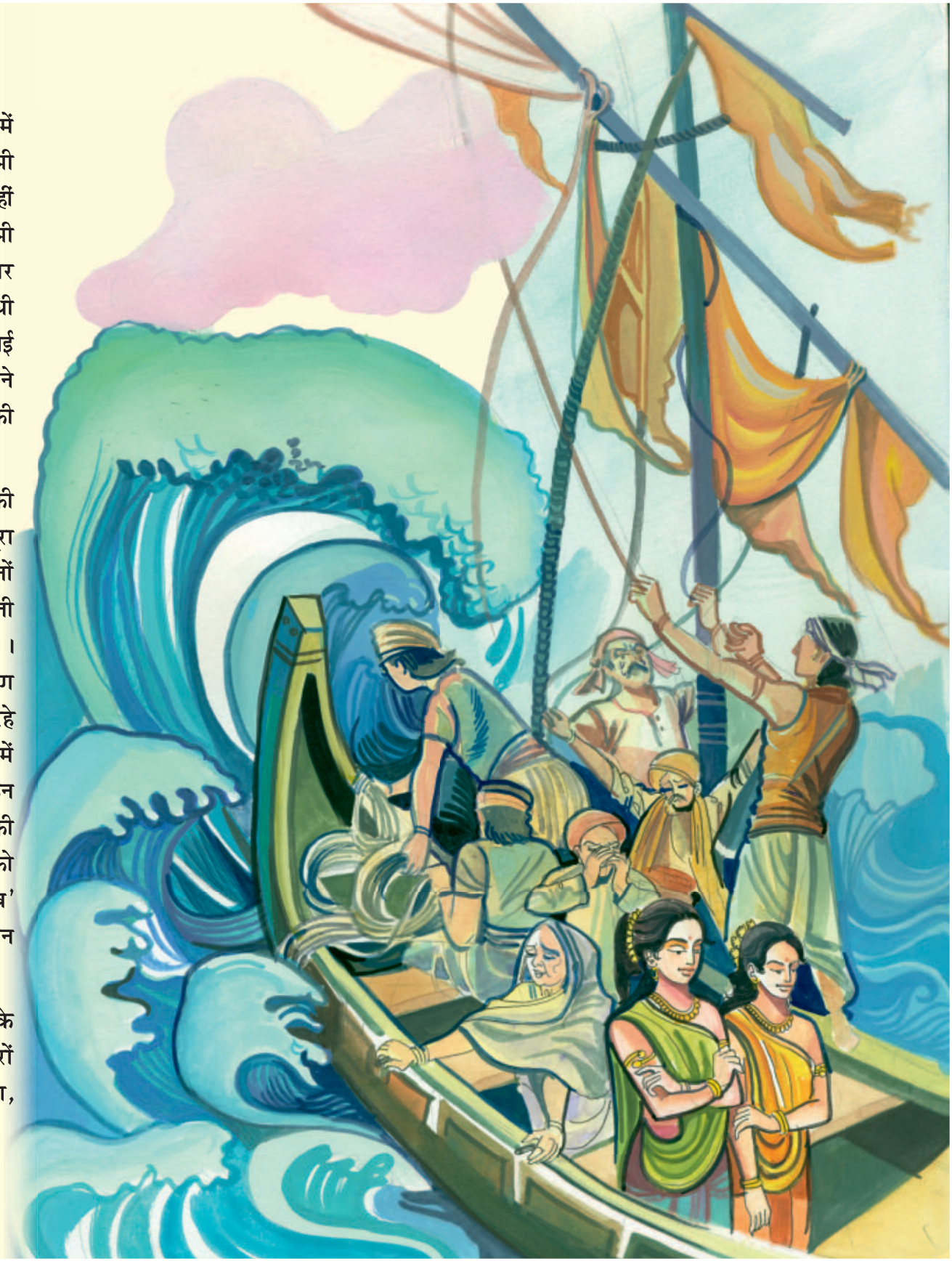

क्योंकि सागर कभी भी मृतदेह का संग्रह करता नहीं है । श्री गिरनारजी के ध्यान से मुक्ति को प्राप्त करनेवाले दोनों का निर्वाण महोत्सव मनाने के लिए सागर के तट पर देवता आ पहुँचे । ऐसा मंगल महोत्सव होने के कारण स्थान विशेष प्रकाशित हुआ और वहाँ 'प्रभास' नामक तीर्थ की स्थापना हुई ।

भगवान श्री नेमिनाथ का गान करनेवाली और श्री गिरनार का ध्यान करके मोक्ष गति को पानेवाली वे मति और सुमति की अमर यशोगाथा गाती यह भूमि आज भी 'प्रभास पाटण' के नाम से प्रसिद्ध है ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ मति-सुमति किसकी पुत्री थी ?

प्र. २ मति और सुमति को केवलज्ञान किस प्रकार मिला ?

प्र. ३ 'प्रभास' तीर्थ की स्थापना किस प्रकार हुई ?

दूर से भी गिरनार की भक्ति से केवलज्ञान आ सकता हों तो साक्षात् उसके दर्शन से कितना सारा लाभ हो सकता है ? शास्त्रों में कहा है न कि घर मे बैठकर भी गिरनार का ध्यान करोगे तो चौथे भव में मोक्ष होगा । अब हम हर रोज घर बैठे सुबह में गिरनार महातीर्थ को याद करके उसका ध्यान करेंगे न !

गिरनार की अजब-गजब की बाते १९

गरवेगढ़ गिरनार के पहाडों में अनेक गुफायें और गुप्तस्थान हैं, जिनके कारण गिरनार बहुत स्थानों में अंदर से काफी खोखला हो ऐसा ध्यान में आता है। इन पहाडों में अनेक संत, महंत, सिद्ध पुरूष, योगी, महात्मा तथा अनेक अघोरी बाबा और महात्माओं ने निवास करके अनेक प्रकार की साधनाओं को सिद्ध किया है।

आज भी अनेक विभूतियाँ इस गिरनार की गुफाओ में आत्मध्यान में लीन होकर आत्म-साधना कर रहे हैं ऐसी जानकारी मिलती हैं, जिनकी उम्र १००-२००-३०० तथा सैकडों वर्षो की भी होती है। जैन ग्रंथों में तथा अन्य धर्मग्रंथों में भी यक्षादि अनेक आत्मा गिरनार में बसे हुए है ऐसा उल्लेख आता है। ऐसी अनेक चमत्कारी बातें आज भी लोकमुख से जानने को मिलती है, कुछ बातें यहाँ कहते है।

(१) जुनागढ के गोरजी कांतीलालजी के कहने के अनुसार जुनागढ के कुछ भाई गध्धेसिंह के पर्वत पर जाकर गधैया के सिक्के इकट्ठे करके गठरी बांध कर बोरदेवी के मुकाम पर आये, उस समय बोरदेवी में उपस्थित बाबा को उन्होंने तंग किया। उससे बाबा का क्रोध आसमान पर चढते ही कुछ तो पागल होकर के वही के वहीं मृत्यु को प्राप्त हुए। कुछ लोग भाग गये उनकी रास्ते में ही मृत्यु हो गई तथा कुछ लोगकी जुनागढ़ में पहुँचने के बाद मृत्यु हुई थी।

(२) गोरजी कांतीलालजी कहते थे कि गिरनार पर 'पत्थर चट्टी' की जगह में रहनेवाला हरनाथगर नामक अघोरी एक बार किसी ब्राह्मण के पुत्र को उठाकर लाया तथा उसका भक्षण किया था। वह ब्राह्मण अपने पुत्र को ढूँढते ढूँढते गिरनार पर आया परन्तु पुत्र न मिलने से अत्यंत दु:खी हृदय से गिरनार के अधिष्ठाक देवों से प्रार्थना करता है। ब्राह्मण के आक्रंद से तुष्ट हुए वरदत्त शिखर के अधिष्ठायक देव जागृत हुए। उनकी सहायता से वह ब्राह्मण पुत्र पुन: जीवित हुआ और अधिष्ठायक देव ने अघोरी की लकडी द्वारा बहुत पीटाई करने पर वह अघोरी लंगडा हो गया। उसके बाद बहुत से अघोरी गिरनार छोड़कर चले गये।

(३) गिरनार के श्री नेमिनाथ दादा की पूजा करनेवाले आराधक आत्मायें धन्य बन जाते है । अरे ! बालब्रह्मचारी नेमिप्रभु के दर्शन-पूजन से कितने ही आराधक आत्माओंने वासना का वमन होते हुए अनुभव किया है। आजभी अनेक मुमुक्षु आत्मायें दीक्षापूर्व श्री नेमिप्रभु तथा दीक्षा कल्याणकभूमि के दर्शन-पूजन-स्पर्श द्वारा संयम अंगीकार करने में आनेवाले विघ्न तथा अंतरायों को तोडने में समर्थ बनते है। कितनी ही आत्मायें इस गिरनार की भक्ति करके ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार करके आत्माराधना में लीन बनी हैं।

(४) एक साधक आत्मा गिरनार के अमिझरा पार्श्वनाथ भगवान के तहखाने में साधना करने अनेकबार आते थे, जब एक रात तहखाने (गुफा) में जाप-ध्यान की आराधना में लीन थे और तहखाने (गुफा) का दरवाजा पूजारी बाहर से बंध करके चला गया था । तब आकाशमार्ग से एक दिव्य प्रकाश का पूंज तहखाने (गुफा) में उतरते हुए देखा और थोडी देर बाद उस प्रकाश के पूंज में से दो चारणमुनियों को अवतारित होते हुए देखा । थोडी देर अमिझरा पार्श्वनाथ भगवान की भक्ति की । उसके बाद उन चारणमुनियों को अत्यंत तेजगति से आकाशमार्ग पर गमन करते हुए देखा था ।

(५) कितने ही साध्वीजी भगवंत श्री नेमिनाथ भगवान का मंदिर मांगलिक होने के बाद बाहर रही हुई शासन अधिष्ठायिका अंबिकादेवी की देहरी के पास आराधना कर रहे थे तब दादा के दरबार में से लगभग पोने घंटे तक लगातार नृत्यों का नाद और नुपूर के झनकार की दिव्यध्वनि का गुंजन सुनाई दिया था ।

(६) इस गिरनार की औषधि के अचिन्त्य प्रभाव से गत सैकडों वर्षों में अनेक महापुरुष आकाशगमन द्वारा तीर्थयात्रा करते थे ।

(७) एकबार एक योगी पुरुष को जिन्दा जलाने में आया । फिर भी उस महात्मा ने तीव्र जलती अग्नि में से सहजतापूर्वक बाहर निकल कर कलकत्ता के अंग्रेज गवर्नर को आश्चर्यचकित कर दिया था ।

(८) एकबार एक बाबाने जंगल में कोई रसकूपिका की खोज करके उसमें से रस लेकर एक तुंबडी में भर दिया था । रात में किसी सोनी के वहाँ रूककर दूसरे दिन सवेरे उठकर वह अपने रास्ते चल निकला । सोनी के घर में जहाँ जहाँ तुंबडी में रहे हुए रस के छींटे गिरे थे । वे सभी वस्तुयें सोने की बन गई थी । इस घटना का ख्याल आते ही सोनी ने तत्काल उस बाबा को खोजने का प्रयत्न किया । परन्तु उस बाबा का कुछ भी पता नहीं लगा ।

(९) एकबार एक लकडहारे ने रतनबाग में किसी बंदर को कुल्हाडी मारी । वह कुल्हाडी योगानुयोग कोई कुंड में गिरने से सोने की हो गई । उस स्थान की खास निशानी रखकर लकडहारा दूसरे दिन वह स्थान ढूँढने लगा । तब अपना किया हुआ निशान नहीं मिलने से वह रास्ता भूल गया था ।

(१०) गिरनार में एसी वनस्पति है जिसकी जड़ो को पका करके खीचडी बनाकर खाने से छे-छे महिने तक मनुष्य की भूख खत्म हो जाती है ।

(११) गिरनार में एक ऐसी वनस्पति है जिसमें से दूध निकलता है । उस दूध की ३-४ बूँद अपने सादे दूध में डाल दी जाए तो अल्पकाल में ही वह दही बन जाता है ।

(१२) एक बार यात्री लोग गिरनार चढ रहे छे । तब सबेरे के समय में कोई झाडी की डाली तोडकर दंतमंजन करने लगे और थोडे ही समय में उनके सभी दाँत गिर गये ।

(१३) जुनागढ गाम के एक श्रावक तथा उसका मित्र रतनबाग की तरफ जानेवाले मार्ग पर आगे बढ़ रहे थे । वहाँ सामने आयी हुई झाड़ी को हाथ से थोडी दूर करने का प्रयास करते है तभी उस डाली ने मानों किसी का हाथ न हो ! उस तरह से उस व्यक्ति के मुख पर जोर से थप्पड मारी, तब उसके आगे के चार दाँत गिर गये थे ।

एसी अनेक बातें इस महाप्रभावक, चमत्कारी गिरनार गिरिवर के इतिहास के साथ जुड़ी हुई है ।

❋

प्रश्न :

प्र. १ किस भगवानकी भक्ति करने के लिए चारणमुनि अवतीर्ण हुए थे ?

प्र. २ किस भूमि के दर्शन-पूजन-स्पर्शन संयम अंगीकार करने में बाधा बने हुए अंतराय को नष्ट करते हैं ?

प्र. ३ किस देहरी के पास आराधना करते साध्वीजी को नुपूर की आवाज सुनाई देती थी ?

आत्मा का कल्याण करनेवाले गिरनार महातीर्थ के चमत्कारो की बाते पढ़कर हमे इस तीर्थ के प्रति विशेष श्रद्धा रखकर धर्म आराधना करके मोक्षपद की प्राप्ति के लिए प्रबल पुरुषार्थ करना है ।

गुणरत्नो के भंडार गिरनार के अर्वाचीन उद्धारकों की झाँकी

प. पू. आचार्य जिनेन्द्रसूरीश्वरजी महाराज साहेब
(जन्म वि. सं 1801 - स्वर्गवास वि.सं. 1884)

मारवाड़ में शुद्धदन्ति (सोजल) में महेता हरखचन्द के धर्म पत्नी श्रीमती गमनाबाई की कुक्षी से वि. सं. 1801 की साल में उनका जन्म हुआ था । वि. सं. 1817 में दीक्षा हुई । ज्ञान अभ्यास आदि योगों में अप्रमत्त रहकर प्रगति करने से वि. सं. 1841 की मृगशीर्ष शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि के दिन उन को वडीलवर्यो के द्वारा आचार्य पद प्रदान किया गया ।

प्रभुवीर की 58वीं पाट में हुए अकबर बादशाह प्रतिबोधक तपागच्छीय प.पू. आचार्य हीरसूरीश्वरजी महाराज की 9वीं पाट पर विराजित पूज्यश्री को वि. सं.1841 माघ मास शुक्ल पक्ष की दसवीं तिथि को गच्छनायक पद पर प्रस्थापित किया गया और माघ मास की शुक्ल एकादशी के दिन श्री शत्रुंजयगिरि पर मोदी प्रेमचन्द की टूंक (चोटी) में श्री सर्वतोभद्र जिनप्रासाद में अनेकों जिन बिम्बों की प्रतिष्ठा उनके करकमलों से हुई ।

आचार्य भगवंत के मार्गदर्शन से श्री गिरनार महातीर्थ के श्री नेमिनाथ भगवान के मुख्य जिनालय के परिसर में, मेरकवसी की टूंक, सगराम सोनी की टूंक आदि जिनालयों में कई प्रकार के जीर्णोद्धार के कार्य हुए थे । उनके वरदहस्त से वि. सं. 1848 वैशाख शुक्ल षष्ठी शुक्रवार के मंगल दिन में अंजनशलाका हुए करीबन 107 प्रभुजी की प्रतिष्ठा नेमिनाथ भगवान के प्रथम रंगमंडप में,भमती में तथा जो यह जीर्णोद्धार की खैर-खबर रख रहे थे वह शेठ जगमाल गोरधन के द्वारा निर्मित जिनालय में की गई थी, वि. सं. 1859/62 की साल में लगभग 87 प्रभुजी की अंजनशलाका प्रतिष्ठा मेरकवसी के जिनालय के परिसर में मुख्य जिनालय के उपरांत अष्टापदजी जिनालय, पंचमेरू जिनालय आदि में हुई थी और वि.सं. 1875/79 आदि साल में लगभग 15 प्रभुजी की अंजनशलाका-प्रतिष्ठा सगराम सोनी के जिनालय में की गई थी । इस तरह गिरनार के अर्वाचीन उद्धार में लगभग 209 प्रभुजी की अंजनशलाका-प्रतिष्ठा तपागच्छीय आचार्य जिनेन्द्रसूरीश्वरजी महाराज साहब के वरदहस्त से हुई हैं इस बात का जिक्र जैन परंपरा का इतिहास भाग-4 में किया गया है ।

इसके अलावा उनके द्वारा वि. सं 1860 में सुरत में शा. प्रेमचंद झवेरचंद ओशवाल और अनेकों श्रावकों द्वारा भराइ हुई जिन प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा हुई थी । शत्रुंजय के पाँच पांडव के देरासर में सहस्त्र फ़ुट की प्रतिष्ठा वि. सं. 1860 के वैशाख शुक्ल पंचमी तिथि को की गई थी, शत्रुंजय महातीर्थ के छाला कुण्ड के ऊपर श्रीपूज की टूंक की प्रतिष्ठा की थी । यह टूंक का दूसरा नाम जिनेन्द्र टूंक भी है । उन्होंने सिरोही में भी जिनेन्द्र टूंक की स्थापना की थी और रांतेज में बावन देहरी वाले जिनालय का जीर्णोद्धार करवाकर प्रतिष्ठा की थी ।

वि. सं. 1884 पौष माह कृष्ण पक्ष की एकादशी के दिन वह सिरोही (या सिहोर) में कालधर्म को प्राप्त हुए ।

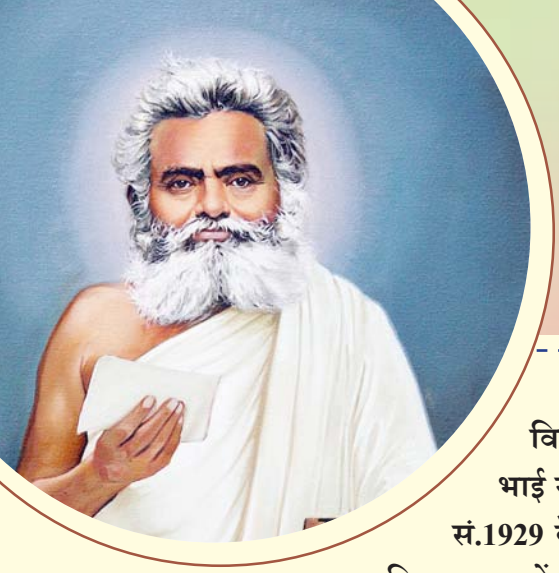

शासन सम्राट
प.पू. आचार्य नेमिसूरीश्वरजी महाराज साहेब
(जन्म वि. सं 1929- स्वर्गवास वि. सं.2005)

सुंदर सोरठ देश की रमणीय धरती पर महुवा नगर आया हुआ है । जिसमें सौराष्ट्र में विख्यात ऐसे सतरा परिवार में बहुत ही धर्मनिष्ठ, संस्कारी,संतोषी और अध्यात्म रसिक लक्ष्मीचंद भाई रहते थे । अनेक गुणों से सदैव दीप्तिमान ऐसे दिवाली बहन नामक उनकी धर्मपत्नी थी । वि. सं.1929 के नूतन वर्ष के प्रथम दिन कार्तिक प्रतिपदा को दिवाली बहन की रत्न कुक्षि से भविष्य में जिन शासन में धर्म का प्रकाश फैलाने वाले पुत्र रत्न का जन्म हुआ था । उनका नाम नेमचंद रखा गया । अनेकविध संस्कार, सत्त्व और शौर्य के स्वामी नेमचंद ने अनेक विघ्नों का सामना करके वि. सं. 1945 ज्येष्ठ मास की शुक्ल सप्तमी तिथि को चारित्र्य ग्रहण किया था ।

दिन प्रतिदिन शास्त्राभ्यास, विचक्षण बुद्धि, मुश्किल समय में तत्काल निर्णय लेने की गजब की शक्ति,त्याग,शासनप्रभावक्ता, गीतार्थता, निर्दम्भता,परोपकारिता, कार्यकुशलता, अलौकिक बुद्धिमत्ता आदि अनेक गुणों को अपने जीवन में आत्मसात किये थे । जिनके कारण अनेक संघ तथा शेठ आनंदजी कल्याणजी पेढ़ी के ट्रस्टी गण भी बारबार उनकी सलाह लेने आते थे ।

पूज्यश्री की तीर्थभक्ति अनूठी थी । स्तम्भनतीर्थ,शेरिसातीर्थ, कदम्बगिरितीर्थ,कापरडाजीतीर्थ आदि के उद्धार एवं प्रतिष्ठा आदि पूज्यश्री के वरदहस्तों से हुए थे । गिरनार महातीर्थ की विषम परिस्थिति के वक्त पूज्यश्री पेढ़ी को सटीक मार्गदर्शन देते और पेढ़ी की सहाय में रहते थे । पूज्यश्री को अपने नामधारी नेमिप्रभु और गिरनार महातीर्थ के साथ सविशेष लगाव होने से उनकी पावन निश्रा में ऐतिहासिक संघों के आयोजन हुए थे ।

वि. सं. 1983 मृगशीर्ष माह कृष्ण पक्ष की तेरहवीं तिथि के मंगल दिन को पूज्यश्री की निश्रा में पाटण के शेठ श्री नगीनदास करमचंद भाई ने पाटण से कच्छ-भद्रेश्वर होकर गिरनार का अनुमोदित संघ निकाला था । जिसमें करीबन 65 साधु महात्माओं, 267 साध्वी जी भगवंतों, 585 मोटर गाड़िवाले, 428 सेवकों, 80 चौकीदार,250 छ'रीपालित भावुकों, 2600 यात्रियों के साथ रजत का जिनालय, तंबू-पाल, शामियाने इत्यादि साधन सामग्रियाँ थी । अचानक शासन के विशिष्ट कार्य हेतु पूज्यश्री को अहमदाबाद जाना अनिवार्य होने के कारण वे 'धांग्रध्रा' से यह संघ से अलग हो गए थे । उस अवसर पर प. पू.आ.नीतिसूरी म.सा.,प. पू.आ.भक्तिसूरी म.सा.,प. पू.आ.माणिक्यसिंहसूरी म.सा.,प. पू.पं. भक्तिविजयजी(राधनपुरवाले) वगैरह पूज्यों संघ के साथ कच्छ-भद्रेश्वर होकर गिरनार पहुँचे थे ।

इसके उपरांत पूज्यश्री की निश्रा में इस युग के भगीरथ कार्य जैसा राजनगर के शेठश्री माणेकलाल मनसुख भाई द्वारा राजनगर-अहमदाबाद से गिरनार महातीर्थ होकर सिद्धाचल महातीर्थ के विशाल संघ

का आयोजन हुआ था । यह संघ में पूज्यश्री समेत पू. सागरजी म.सा., पू.आ. मोहनसूरी म.सा., पू.आ. मेघसूरी म.सा. वगैरह करीबन 275 के करीब मुनिभगवंतों,400 के करीब साध्वीजी भगवन्तों, लगभग तेरह हजार छ'रीपालित यात्रियों, 850 जितनी बेलगाड़ियां,अनेक मोटरगाड़ियाँ वगैरह 1300 जितने वाहनों, चांदी का महेंद्रध्वज,सुवर्णमण्डित चांदी का रथ,चांदी का मेरु पर्वत, चांदी का जिन मंदिर, चांदी का ओहदा, दो-दो गजराज वगैरह अनेकों सामग्रियाँ सहित के इस संघ को देखने के लिए रानी विक्टोरिया भी खास पधारे थे ।

तदुपरांत जामनगर से गिरनार का भी ऐतिहासिक संघ निकाला था ।

वि. सं. 1984 फाल्गुन माह शुक्ल तृतीया शुक्रवार,वि. सं. 1999 फाल्गुन माह शुक्ल द्वितीया सोमवार तथा वि. सं. 2004 वैशाख माह शुक्ल सप्तमी शुक्रवार के मंगल दिन पर पूज्यश्री के वरद हस्तो से अंजनशलाका हुए लगभग 44 प्रभुजी आज भी गिरनार महातीर्थ पर देखने को मिलते हैं । जिनमें से कुछेक प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा स्वयं पूज्यश्री के शुभहस्तों से हुई होने की संभावना है । बाकी वि. सं.2006 वैशाख शुक्ल सप्तमी को पू.आ.नीतिसूरी म.सा. के शिष्य पू.आ.हर्षसूरी म.सा. के शुभहस्तों से हुई थी ।

जीवदया,जीर्णोद्धार, तीर्थरक्षा, शुद्ध संयम पालन,ज्ञानोद्धार, जिन शासन के अनेकविध अंगों में सफलता प्राप्त पूज्यश्री "शासन सम्राट" के विशेषण से प्रसिद्ध हुए थे ।

गिरनार तीर्थोद्धारक

प.पू. आ. श्री. नीतिसूरीश्वरजी महाराज साहेब

(जन्म वि. सं.1930 - स्वर्गवास वि. सं. 1998)

वि. सं. 1978 के वह धन्य दिन की मंगल बेला !

वेरावल में प.पू.आ.श्री.नीतिसूरी महाराज साहब की पावन निश्रा में परमात्मभक्ति का अट्ठाई महोत्सव था । संगीत की सूर लहरी के साथ परमात्मा की पूजा का उच्चारण हो रहा था तब जूनागढ़ के दीवान साहब श्री त्रिभोवनदासभाई पूजा में उपस्थित हुए । परमात्मा की संगीतमय पूजा और पूज्यश्री के दर्शन पाकर धन्यता का अनुभव कर रहें दीवान के मुख पर आनंद की लहरें उठ रही थी तब सालों से गिरनार के जिनालयों का जीर्णोद्धार करने की इच्छा रख रहें पूज्यश्री ने इस मौके का फायदा उठाकर वेरावल के ट्रस्टी गण को इशारा किया । समझदार श्रावकों

ने पूज्यश्री की भावना को जानकर दीवान साहब को ये जीर्णोद्धार के लिए अनुमति दिलाने के लिए बिनती की । दीवान साहब भी जीर्णोद्धार हो इस के लिए राजी होने की वजह से अग्रणियों को जूनागढ़ के संघ के अग्रणियों को साथ लेकर मिलने के लिए आने की जानकारी देकर यह अनुमति दिलाने की तैयारी दर्शाई थी ।

चातुर्मास पूर्ण होते ही पूज्यश्री विहार करके जूनागढ़ पधारे और वेरावल के अग्रणियों तथा जूनागढ़ संघ के अग्रणियों के साथ जाकर दीवान साहब के पास जीर्णोद्धार कराने के लिए प्रस्ताव रखा । दीवान साहब ने वे अग्रणियों के पास से जीर्णोद्धार करने की पद्धति, उसके लिए आर्थिक और वहीवटी व्यवस्था और कार्य करने के लिए विविध समितियों द्वारा कार्य कैसे होगा इत्यादि माहिती जानी तब उन्होंने बताया कि: " नवाब साहब को भी यह जीर्णोद्धार हो इसमें विशेष रुचि होने के कारण यह जीर्णोद्धार सुंदर रूप से सम्पन्न हो उस का ख्याल रखा जाए और उसमें राज्य की ओर से जो भी जरूरत होगी वो मिल जायेगी ऐसा उन्होंने बताया है ।"

पूज्यश्री के प्रचंड पुण्योदय से अनंता तीर्थंकर परमात्मा के अनंता कल्याणकों से भावित हुअे गढ़ गिरनार के जिनालयों का जीर्णोद्धार तय हो गया । जिनालयों की बिगड़ती परिस्थितियों को देखकर सालों से जीर्णोद्धार के स्वप्नद्रष्टा ऐसे पूज्यश्री के आनंद की सीमा न रही । पूज्यश्री ने चारों ओर जीर्णोद्धार के समाचार फैला दिये और प्रत्येक गांव में, अनेक संघों में, सबके हृदय में आनंद समा नहीं रहा था । पूज्यश्री के प्रबल प्रयास और प्रेरणा से गाँव-गाँव से छोटी-मोटी भेंट स्वरूप इस जीर्णोद्धार के लिए राशि जमा होने लगी थी ।

पूज्यश्री के मार्गदर्शन से विविध व्यवस्था की समितियों की कार्य पद्धतियाँ, आर्थिक व्यवस्था,कुशल शिल्पियों द्वारा विविध नक्शे, विविध कारीगरों और योजनाओं के लिए विचारणाओं के साथ चतुर्विध संघ के हर्षोल्लासपूर्वक गिरनार महातीर्थ की पहली टूंक के 14 जिनालयों के जीर्णोद्धार के कार्य की भूमिका रचने का कार्य बहुत जोर से शुरू हुआ । समय समय पर मार्गदर्शन आदि अनुकूलता के लिए पूज्यश्री ने वि. सं.1979 का चातुर्मास जूनागढ़ गाँव में ही किया ।

वि. सं.1979 से शुरू हुआ गिरनार महातीर्थ की पहली टूंक के नेमिनाथ भगवान के मुख्य जिनालय सहित चौदह जिनालयों के जीर्णोद्धार का यह काम लगातार 10-12 साल से ज्यादा चला था । यह जीर्णोद्धार के दौरान प्रत्येक जिनालय में श्वेत रंग के संगेमरमर से परमात्मा की गद्दी, पबासन,गोख (झरोखे), देहरियाँ, खंभे, इत्यादि द्वारा जिनालयों को सुशोभित करने का भगीरथ कार्य किया गया था । कुछेक जिनालयों के गुम्बदों, शिखरों के कार्य भी हुए थे और उसके दौरान वि. सं. 1985 में मा.व.5. के दिन कुछेक नूतन देहरियों में पू.आ.श्री.नीतिसूरी महाराज साहेब के हाथों अनेक प्रभुजी की प्रतिष्ठाएं भी हुई । (बाद में वि. सं.2006 में उनके शिष्य पू.आ. हर्षसूरी म.सा. आदि द्वारा भी अनेक प्रभुजी की प्रतिष्ठाएं हुई थी ।) वर्तमान में यहाँ पू.आ.श्री. नीतिसूरी म. सा. और उनके शिष्य गण द्वारा अंजनशलाका-प्रतिष्ठा हुए लगभग 41 प्रभुजी देखने को मिलते हैं ।

पूज्यश्री के मार्गदर्शन से गिरनार, प्रभासपाटण, मेवाड़,चित्तौड़ आदि अनेक तीर्थों के जीर्णोद्धार तथा संघों के जिनालयों के जीर्णोद्धार भी हुए थे ।

सहसावन (गिरनार) तीर्थोद्धारक

प.पू.आ. हिमांशुसूरीश्वरजी महाराज साहेब

(जन्म-वि. सं.1063 - स्वर्गवास- वि. सं.2059)

गिरनार के पवित्र वायुमंडल से सुवासित हुई जूनागढ़ की पावन भूमि ! हेमाभाई के बरामदे का उपाश्रय !

वि. सं.2027 की संध्या का स्वर्णिम समय ! तपस्वी सम्राट प.पू.आ. हिमांशुसूरीजी महाराज अपने नित्य जाप की आराधना में लीन थे तब अचानक वह स्थान में दिव्य प्रकाश हुआ और शासनदेवीने दिव्य रूप से दर्शन देकर पूज्यश्री को कल्याणक भूमि सहसावन का उद्धार करने की प्रेरणा दी । यह दिव्य प्रेरणा के आधार से पूज्यश्री के मानस पटल पर अनेक विचार गतिमान होने लगे ।

यह तीर्थोद्धार कैसे किया जाये? शुरुआत कहाँ से करें? इत्यादि अनेक प्रश्नों के निराकरण के लिए सोचते सोचते सबसे पहले तो पहली टूंक से सहसावन जाने के मार्ग की सीढ़ियां टूटी हुई और अस्तव्यस्त थी उनकी मरम्मत करने की प्रेरणा हुई और सहसावन से तलहटी तक जाने के लिए केवल जंगल की कच्ची पगडंडी ही मौजूद थी उसके स्थान पर पूज्यश्री की पावन प्रेरणा और पुण्य प्रभाव से सरकारी खाते की सम्मति से काले पाषाण को तराशकर सोपानों का सुगम मार्ग बनाया गया । साथ में ही वि. सं. 2034-35 से अनंता तीर्थंकरों के कल्याणकों से बासित हुए सहसावन के घने जंगल में एक नयनरम्य जिनालय के निर्माण के लिए भूमि उपलब्ध कराने के लिए चक्र गतिमान हुए । उसके फल स्वरूप सहसावन की भव्य भूमि में जहाँ एक फ़ीट की जगह पाना भी मुश्किल था वहाँ हजारों फ़ीट जमीन सरकार श्री के पास से 99 साल के किराये पर मिली ।

यह जगह मिलते ही जिनालय के निर्माण के लिए पूज्यश्री का उल्लास दिनप्रतिदिन बढ़ने लगा । उनकी दीर्घदृष्टि से यह कल्याणक भूमि की भावी भव्यता के लिए नेमिनाथ परमात्मा की दीक्षा और केवलज्ञानकल्याणकभूमि की चिरकालीन सुरक्षा- स्मृति के लिए एक नयनरम्य समवसरण मंदिर का निर्माण कार्य पूरे जोश से चलने लगा और ऐसे जंगल में जिनालय के लिए माल को ऊपर चढ़ाकर काम करना अत्यंत कठिन होने के बावजूद पूज्यश्री के पुण्य प्रभाव से वि. सं. 2040 चैत्र कृष्ण

आ. हिमांशुसूरि म.सा. के पार्थिवशरीर की अंतिम संस्कारभूमि

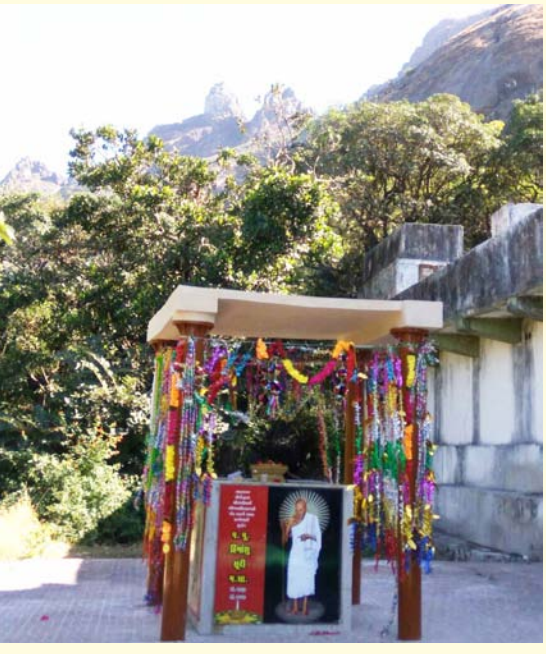

पक्ष पंचमी के शुभ दिन पर पूज्यश्री के उपरांत अनेक पूज्यो की उपस्थिति में समवसरण मंदिर में मूलनायकसंप्रतिकालीन नेमिनाथ भगवान सहित अन्य श्याम वर्ण के श्री नेमिनाथ परमात्मा की अंजनशलाका -प्रतिष्ठा का प्रसंग बहुत ही उल्लासपूर्ण सम्पन्न हुआ ।

जहाँ साल भर में गिनकर 25 यात्री भी सहसावन की कल्याणक भूमि के दर्शन-स्पर्श-पूजन आदि के लिए आते न थे उनके बदले सैकड़ों लोग पहली टूंक से सहसावन कल्याणक भूमि की स्पर्शना कर के ही नीचे उतरने लगे । सबके हृदय में सहसावन कल्याणक भूमि के प्रति आदर भाव बढ़ने से यात्रियों का प्रवाह सहसावन की ओर बढ़ने लगा । इस जिनालय में अंदर प्रवेश करते ही एक विशाल समवसरण के स्वरूप को देखकर साक्षात नेमिनाथ प्रभु के समवसरण में प्रवेश कर रहे हैं ऐसे भाव भाविकों के हृदय में प्रकट होते हैं । जैन बंधुओं के मानसपट से लगभग मिट रही यह कल्याणक भूमि की महत्ता आज सबके हृदय में पुनः जागृत हो गई है । उसके बाद वि. सं. 2047 में पूज्यश्री की प्रेरणा से गिरनार पर से मोक्ष को प्राप्त हुए विगत चौबीसी के 10 तीर्थंकर परमात्मा और आगत चौबीसी में गिरनार से मोक्ष प्राप्त करने वाले प्रथम पद्मनाभस्वामी (श्रेणिक महाराज की आत्मा) आदि चौबीस परमात्मा सहित वरदत्त इत्यादि 18 गणधर और गुफा में नेमिनाथ प्रभु की अंजनशलाका-प्रतिष्ठा की गई थी । फिलहाल जीवित स्वामी नेमिनाथ प्रभुजी भी यहाँ पर विराजित हैं ।

इसके अलावा पूज्यश्री के शुभहस्तों से गिरनार की पहली टूंक की बड़ी भमती में वि. सं. 2038 माघ मास की शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि को लगभग 34 प्रभुजी की प्रतिष्ठा भी हुई थी । श्री संघ की एकता और शासनोत्कर्ष के भीष्म संकल्प के साथ पूज्यश्री ने अपने जीवनकाल के दौरान 3000 से ज्यादा उपवास तथा 11500 से अधिक आयंबिल तप की आराधना की थी ।

सैकड़ों वर्षों के इतिहास में उन्ही की पावन निश्रा में गिरनार तीर्थ की तलहटी में वि. सं. 2058 में प्रायः सर्वप्रथम सामुहिक चातुर्मासिक आराधना का आयोजन हुआ था । उस चातुर्मास के दौरान पूज्यश्री ने गिरनार तीर्थ में भी शत्रुंजय तीर्थ जैसी एक 'जय तलहटी' का निर्माण हों इसीलिए पेढ़ी को प्रेरणा दी थी । उस प्रेरणा को लेकर आज पेढ़ी द्वारा एक भव्य "जय तलहटी" का निर्माण हुआ हैं ।

वि. सं. 2059 में मृगशीर्ष माह शुक्ल पक्ष की चौदहवीं तिथि को जूनागढ के हेमाभाई के संकुल के उपाश्रय में पूज्यश्री कालधर्म को प्राप्त हुए । उनके पार्थिव देह की अंतिम संस्कार विधि भी यह सहसावन में ही होने से गिरनार महातीर्थ की पावन भूमि पर अंतिम संस्कार का नया इतिहास बन गया था ।

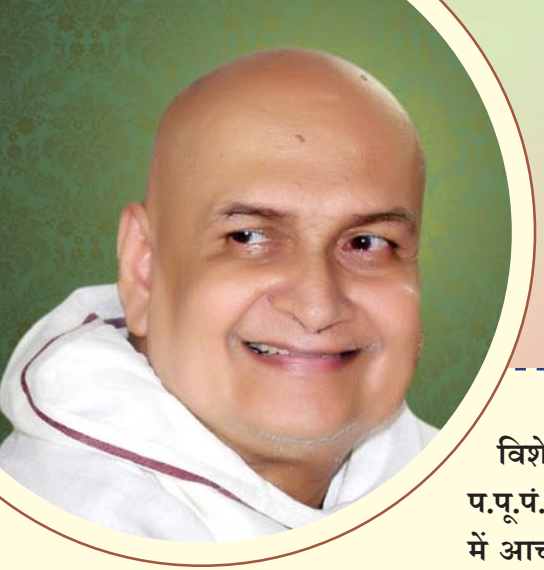

प.पू.पन्यास वज्रसेनविजयजी महाराज साहेब
(जन्म-ई. स.17-5-1952; वि. सं.1998 जेठ शुकल 2)
तथा आ. हेमप्रभसूरि महाराज साहेब
(जन्म-ई. स.2-2-1959, वि. स.2015 माघ शुकल 5)

नमस्कार मंत्र आराधक प.पू. पन्यास भद्रंकरविजयजी महाराज को गिरनार महातीर्थ के प्रति विशेष लगाव था। उन्होंने सहसावन (गिरनार) में आराधना-साधना की थी इसलिए उनके प्रशिष्यों प.पू.पं. वज्रसेनविजयजी महाराज साहब तथा प.पू.मुनिराज हेमप्रभविजयजी महाराज साहब (हाल में आचार्य) को भी गिरनार महातीर्थ के प्रति विशेष लगाव था।

विक्रम संवत 2052 में प.पू.पं. वज्रसेनविजयजी महाराज साहब तथा प.पू.मुनिराज हेमप्रभविजयजी महाराज साहब को गिरनार आना हुआ तब सहसावन तीर्थोद्धारक प.पू.आ. हिमांशुसूरि महाराज साहब अहमदाबाद में बिराजमान थे। उन दोनों महात्माओं की कुशाग्रबुद्धि से वाकिफ सहसावन तीर्थोद्धारक आचार्य भगवंत ने सहसावन के जिनालय में समवसरण मंदिर को विशेष रूप से आकर्षक बनाने के लिए प्रेरणा दी थी। शिल्पकला और रचनात्मक कार्यों में विशेष सूझबूझ वाले दोनों महात्माओं ने कुशल कारीगरों और शिल्पियों के अभिप्राय और सहाय से समवसरण में विशिष्ट प्रकार के अशोक वृक्ष और चैत्यवृक्ष की रचना करवाई थी। साथ में समवसरण के तीन गढ़ के चार-चार दरवाजों पर संगेमरमर की नक्काशी युक्त कलात्मक मेहराब और गढ़ के कांगड़े का निर्माण करवाया था। आज यह समवसरण मंदिर प्रभु के साक्षात समवसरण का स्मरण कराकर भाविकों के हृदय में बोधि बीज का रोपण करने में निमित्त रूप बन रहा हैं।

गिरनार महातीर्थ में कोई योग्य धर्मशाला के अभाव से यात्रियों को रुकने-रहने-भोजन करने की बहुत तकलीफ हो रही थी ऐसे समय लगभग विक्रम संवत 2053 के दौरान इन्ही दो महात्माओं के पुण्य प्रभाव से सभी भावुक जीव गिरनार पधारे और यह कल्याणक भूमि के दर्शन-पूजन-स्पर्शन द्वारा आत्मकल्याणक की आराधना कर सके इसलिए गिरनार तलहटी में ही "श्री नेमिजिन यात्रिक भवन" नामक एक विशाल धर्मशाला का निर्माण हुआ था। जिसके कारण यात्रियों की आवाजाही में बढ़ोतरी होने लगी थी। इस तरह इन दोनों महात्माओं ने भी यह तीर्थ के लिए बहुत अच्छा योगदान दिया है।

उसके बाद कच्छीभवन धर्मशाला और हाल ही में पिछले सात साल के दरमियान "गौरवशाली गिरनार दर्शन धर्मशाला "," श्री गिरनार राजेन्द्र-शांति सेवा ट्रस्ट", श्री देवचंद लक्ष्मीचंद पेढ़ी के परिसर में "कांताबा संकुल" नामक धर्मशालाओं का निर्माण हो गया है और आगामी दो सालों में अन्य दो-तीन धर्मशालाओं का निर्माण होने की संभावना है।

विमल गच्छाधिपति

प.पू.आचार्य प्रद्युम्नविमलसूरीश्वरजी महाराज साहेब

(पूज्य भाई महाराज)

(जन्म ई.स. 09-12-1964)

मरुधर देश के जालोर जिले में जैतू गांव की धन्य धरा पर माता बादलीबाई उकचंद की कुक्षि से एक शासनरत्न बच्चे का जन्म हुआ था जिनका नाम प्रभु रखा गया था। वि. सं. 2032 के मृगशीर्ष शुक्ल चतुर्थी के दिन केवल 11 साल की बाल आयु में प्रभु ने जिनेश्वर प्रभु के निर्देशित चारित्र्य मार्ग का स्वीकार करके अनेकविध साधना के साधक ऐसे प.पू.आ.शांतिविमलसूरी महाराज साहब के चरणों में जीवन समर्पित किया था। बचपन से ही कुशाग्र बुद्धि वाले प्रद्युम्नविमलमुनि ने गुरुकुल वास में रहकर संयम जीवन की ग्रहण-आसेवन शिक्षा प्राप्त की थी। साधक समान गुरु भगवंत की अमी दृष्टि से छोटी उम्र से ही उन्होंने साधना मार्ग में प्रगति की थी। मेधावी बाल मुनि हिंदी,गुजराती,मारवाड़ी, संस्कृत, प्राकृत आदि भाषाओं की सहायता से ज्ञानाभ्यासमें आगे बढ़ते गए और विद्वान मुनिप्रवर पू. जम्बुविजयजी म.सा. के सानिध्य में रहकर उन्होंने जैन धर्म के सिद्धांतों और आगम आदि ग्रन्थो का गहन अभ्यास किया।

मुनि प्रद्युम्नविमल के अनेक गुणों को नजर में रखते हुए उनको ई.स.1983 में गच्छाधिपति पद पर आरूढ़ किया गया और ई.स.1996 की 20 वीं फरवरी के माघ शुक्ल तेरहवीं के शुभदिन आचार्य पद दिया गया था।

प्रचंड प्रभावक पूज्य श्री की प्रेरणा से उन्हीं के शुभहस्तों से 100 से अधिक जिन मंदिर-गुरु मंदिर आदि का निर्माण और प्रतिष्ठा हुई है। उनके प्रयास से तपागच्छाधिष्ठायक श्री माणिभद्रवीर का प्रभावक स्थान मगरवाड़ा (पालनपुर) आज विशेष उत्थान और विकास के मार्ग में आगे बढ़ रहा है। सिध्धगिरि के तलहटी मार्ग पर उनकी पावन प्रेरणा से श्री माणिभद्रवीर का एक स्वतंत्र मंदिर निर्माण हुआ है। इसके अलावा सिध्धगिरि की छत्रछाया में उन्हीं की प्रेरणा से तैयार हुई हिम्मत विहार धर्मशाला में जीवदया-अनुकम्पा के अनेकविध कार्य समय समय पर हुए हैं।

अनंता तीर्थंकर सहित नेमिप्रभु के दीक्षा- केवलज्ञान और मोक्षकल्याणक जिस पावन भूमि पर हुए हैं वो साधना भूमि गिरनार महातीर्थ प्रति भी साधक ऐसे पूज्यश्री को विशेष भाव और आदर-बहुमान होने से पिछले लगभग 9 वर्ष से वो भी इस तीर्थ के साथ अच्छी तरह जुड़कर तीर्थ के उत्कर्ष और विकास के कार्यो में अनंतर या परम्पर अनेक प्रकार से उपयोगी हो रहे हैं। उनकी पावन निश्रा में वि. सं. 2069 में करीबन 500 आराधकों और वि. सं.2072 में सैकड़ों साल के इतिहास में सर्व प्रथम 1500 से अधिक आराधकों की विशाल संख्या के साथ बहुत ही शासनप्रभावनापूर्वक सामुहिक चातुर्मासिक आराधना का आयोजन किया गया था। वि. सं.2075 में स्वसाधना के लिए गिरनार में चातुर्मास किया था। उनकी अमीदृष्टि से एक बहुमंजिला धर्मशाला श्रीगिरनार राजेन्द्र शांति सेवा ट्रस्ट का भी निर्माण हुआ था।

गिरनार तलहटी के भवनाथ विस्तार में कोई दवाई या अस्पताल की योग्य सुविधा के अभाव में उनके शुभाशीष से एक विशाल अस्पताल का निर्माण भी हुआ है। उनके पूण्य प्रभाव से सौ साल से अधिक समय से गिरनार में चल रहे कुछ वादविवादों वाले प्रश्नों का सरल निराकरण लाकर जूनागढ़ कलेक्टर, हिन्दू महंतो-संतो और जैनाचार्यो की उपस्थिति में सर्वत्र शांति स्थापक एक ऐतिहासिक करार करने में आया है। इस तरह पूज्यश्री का गिरनार महातीर्थ के उत्कर्ष के कार्यों में योगदान विशेष रूप से रहा है।

पूज्यश्री की सरलता, नम्रता, उदारता, दीर्घ दृष्टि, आत्मीयता आदि गुणों के कारण वो "भाई महाराज" के उपनाम से लोकप्रियता पाकर सर्वत्र प्रसिद्ध हुए है।

युगप्रधान आचार्यसम प.पू.पं. चंद्रशेखरविजयजी महाराज साहेब के शिष्य-प्रशिष्य

प.पू.आ.धर्मरक्षितसूरि महाराज साहेब

(जन्म वि. सं. 2011 - स्वर्गवास वि.सं. 2075)

जग में तीरथ दो बड़े,शत्रुंजय गिरनार;

एक गढ़ ऋषभ समोसर्या, एक गढ़ नेम कुमार ।।

शत्रुंजय गिरिराज पर से अनंत आत्माएँ सिद्धिपद को प्राप्त हुई हैं जबकि गिरनार गिरिराज पर से अनंत आत्माएँ अरिहंत पद को प्राप्त करके सिद्ध हुए हैं ।

लगभग 12 साल पहले हर साल लाखों भाविक शत्रुंजय महातीर्थ की स्पर्शना द्वारा पावन हो रहे थे लेकिन पिछले कुछ सालों से चतुर्विध संघ द्वारा गिरनार महातीर्थ की तरफ दुर्लक्षित होने के कारण उसकी उपेक्षा की हुई थी, जिनालय अत्यंत जीर्ण शीर्ण होने लगे थे और खंडहर होने को मचल रहे हैं ऐसा लगता था ।

शेठ आणंदजी कल्याणजी की पेढ़ी, जूनागढ़ जैन संघ के भावुक तथा अनेक महात्मा यह तीर्थ की बिगड़ती हुई परिस्थिति को देखकर चिंतित हो गए थे । पेढ़ी तथा जूनागढ़ के भाविकों द्वारा अनेक आचार्य भगवंतों के संपर्क करके इस तीर्थ के विकास के लिए कुछ करने की बिनती की गई फिर भी कोई अनुकूल प्रतिसाद मिलता नहीं था । ऐसे अवसर पर कोई पुण्यशाली ने जिसकी नस नस में शासन प्रेम और हृदय में शासन हित की तलब रहती थी ऐसे प.पू.पं. श्री चंद्रशेखर विजयजी महाराज समक्ष गिरनार तीर्थ की दयनीय परिस्थिति की बात रखकर कुछ करने की प्रार्थना की । पू.पन्यासजी महाराज ने मुनि हेमवल्लभविजयजी को तत्काल गिरनार जाने का आदेश देकर विक्रम संवत 2064 के कांदिवली चातुर्मास की आखिर में मुम्बई से विहार करवाया था । अहमदाबाद से मुनि धर्मरक्षितविजयजी भी उनके साथ जुड़ गए और वे भी गिरनार पहुँच गए थे ।

गिरनार महातीर्थ के जिनालय आदि की अत्यंत करुण परिस्थिति देखकर दोनों मुनियों का दिल दहल गया । पेढ़ी द्वारा अनेक प्रयास करने पर भी लेंड रेवन्यू डिपार्टमेंट, पुरातत्व विभाग और वनविभाग से जीर्णोद्धार करने की सम्मति मिलती नहीं थी ।

वे दोनों महात्माओं ने तीर्थ की सुरक्षा और विकास के संकल्प के साथ स्वयं तथा गिरनार प्रेमी कुछ पूजनीय साधु-साध्वीजी-श्रावक-श्राविका द्वारा विशेष आराधना साधना का आरंभ करवाया । मुनि हेमवल्लभविजयजी ने भी संकल्प के साथ अट्ठम तप की आराधना शुरू की और तीसरे दिन संध्या समय पर तीर्थ की अधिष्ठायिका अम्बिका देवी की ओर से जीर्णोद्धार के बारे में दिव्य संकेत मिला था । बहुत ही कम समय में श्री सरकार की ओर से भी जीर्णोद्धार के लिए सम्मति मिल गई थी ।

लगभग 75 साल बाद विक्रम संवत 2065 वैशाख शुक्ल पंचमी के शुभदिन पर मुनि हेमवल्लभविजयजी महाराज साहेब की निश्रा में जीर्णोद्धार का प्रारंभ हुआ । कुशल शिल्पियों और वास्तुशास्त्रियों के मार्गदर्शन अनुसार कुछ शिल्पदोष और वास्तुदोष निवारण के प्रयत्नों के साथ जीर्ण-शीर्ण जिनालयों की स्थिति के सुधार का कार्य शुरू हुआ । ज्ञानवाव के संभवनाथ जिनालय से यह जीर्णोद्धार का प्रारंभ हुआ और धीरे धीरे एक के बाद एक जिनालयों का कार्य शुरू होने लगा ।

प.पू.आ.हेमवल्लभसूरि महाराज साहेब
(जन्म वि. सं. 2018 ज्येष्ठ शुक्ल चतुर्थी ई.स.06-06-1962)

गिरनार की महिमा से अज्ञात ऐसे चतुर्विध संघ के प्रचार के लिए मुनि हेमवल्लभविजयजी के द्वारा गुजराती,हिंदी,मराठी,अंग्रेजी इन चार भाषा में "चलो गिरनार चले..." पुस्तक का संपादन और प्रकाशन हुआ ।" सब चलो गिरनार चले..." के अभियान का प्रारंभ हुआ और देश-विदेश में प्रचार-प्रसार के माध्यम से सभी जैनों के घर-घर में और घट -घट में गिरनार की महिमा गुंजित हुई ।

गिरनार की छत्रछाया में सामूहिक चौमासे,नव्वाणु(निन्यानबे)यात्रा, आयम्बिल की शाश्वती ओळी, शिबिरों इत्यादि के आयोजन होने लगें । व्याख्यान में मुनि धर्मरक्षितविजयजी द्वारा आराधकों और यात्रियों को अनवरत गिरनार की महिमा की अनेक बातें होने लगी । अनंता तीर्थंकरों के दीक्षा-केवलज्ञान और मोक्षकल्याणक भूमि का स्पर्शन-दर्शन-पूजन इत्यादि के लिए जगह जगह प्रेरणाएं,भाव यात्राएं, प्रचार होने के कारण सब के हृदय में गिरनार के प्रति विशेष भक्ति-बहुमान जगने लगा । अनेक साधु-साध्वीजी भगवंतों, श्रावक-श्राविकाएं, समकित ग्रुप,वर्धमान संस्कार धाम,पार्श्वभक्ति परिवार,गिरनार भक्ति युवा ग्रुप,गिरनार भक्ति परिवार, कल्याणमित्र ग्रुप आदि ग्रुपों के तीर्थ विकास और तीर्थ जागृति के संयुक्त पुरुषार्थ के परिणाम स्वरूप गिरनार पर जैन यात्रियों की आवाजाही बढ़ने लगी । पहले सालाना 30-40 हजार यात्रियों के आवागमन के सामने वर्तमान में सालाना 3 लाख से ज्यादा यात्रियों की आवाजाही शुरू हो गई है ।

आजीवन आयंबिल के अभिग्राही तथा अखंड 8500 उपरांत आयंबिल के तपस्वी मुनि हेमवल्लभविजय ने (हाल में आचार्य) पिछले 11 साल के दौरान बारिश आदि दिनों का छोड़कर लगभग हर रोज गिरनार पर जाकर (करीबन 3150 यात्रा करने के साथ) जीर्णोद्धार के कार्य में मार्गदर्शन दिया है । आज लगभग पहली टूंक के 12 जिनालयों में अति आवश्यक हों ऐसे जीर्णोद्धार के कार्य हो चुके हैं और अन्य दो जिनालयों का कार्य चल रहा है ।

यह जीर्णोद्धार के दरमियान कुछ शिल्पदोषादि के कारण स्थान में बदलाव किए गए लगभग 37 प्रभुजी तथा दीक्षा-केवलज्ञान की देहरी की चरणपादुका की पुनः प्रतिष्ठा इन्ही महात्माओं के द्वारा हुई हैं । उन्हीके पुरुषार्थ के कारण आज गिरनार में भी शत्रुंजय महातीर्थ जैसी "जय तलहटी" का निर्माण हुआ है तथा यात्रियों के लिए सहसावन कल्याणकभूमि तीर्थोद्धार समिति- जूनागढ द्वारा ''गौरवशाली गिरनारदर्शन धर्मशाला'' तथा देवचंद लक्ष्मीचंद पेढी संचालित "कांताबा संकुल" का भी निर्माण हुआ है ।

बाल ब्रह्मचारी नेमिनाथ परमात्मा की असीम कृपा, शासनदेव-देवियों तथा चतुर्विध संघ की सहायता और दीर्घकालीन आयम्बिल तपस्वी ऐसे ये दोनों महात्माओं के तप-जप-संयम आदि के प्रभाव और भगीरथ पुरुषार्थ से आज देश-विदेश में बसते लाखो जैन बच्चे-युवाओं और बुजुर्गों के हृदय और होंठों पर गिरनार के गुणगान का गुंजन होने लगा है, सब के श्वास प्रश्वास में '" जय जय गरवो गिरनार.." की गूंज सुनाई दे रही है ।

सब चलो गिरनार चले... सब चलो गिरनार चले...

जय गिरनार जय नेमिनाथ

प्रसाद

विश्व की श्रेष्ठतम आध्यात्मिक भूमि गौरवशाली गिरनार की अनेक भव्य गाथाएँ दिव्य पुरुषों द्वारा आलेखित हुई हैं । विविध धर्मग्रंथों में यह भव्यतापूर्णभूमि का अद्भुत, अलौकिक वर्णन देखने को मिलता है । भारत के विविध कोनों में साधना कर चुके साधकों को सिद्धि के लिए गिरनार आना अनिवार्य होता हैं । इस गिरनार ने अनेक सिद्ध साधकों - संतों - सिद्ध योगियों की भेट दी है । उन्हीं में से एक माने पूज्य आचार्य हेमवल्लभसूरि महाराज साहब । लगभग 3150 बार गिरनार यात्रा और आजीवन आयंबिल तप को सिद्ध करनेवाले यह महात्मा वास्तव में गिरनारी/(गिरनार के) साधक हैं । उनकी साँस साँस में गिरनार है । इसीलिए जिनकी प्राण वायु ही गिरनार हो उनके द्वारा संपादित पुस्तक भी प्रसाद स्वरूप ही है ।

प्रस्तुत ग्रंथ **"गिरनारकी बालकथाएँ"** में लगभग 19 जितनी धर्मभक्तिसभर कहानियाँ सचित्र वर्णित हैं । इसके अलावा करीबन 7 जितने आचार्य साधकों की साधना सिद्धियाँ, आशीर्वाद के रूप में प्रसाद भाव से प्रकाशित की गई हैं । मेरे पूज्य पिता श्री रतिलाल जोषी ने 1960-70 के दशक में गिरनार में कठिन साधना की थी । इसीलिए गिरनार के प्रति गिरनार की कृपा से भक्ति भाव रहा हैं । वो बारबार कहते थे कि "पूर्वजों की कृपा हों तो ही गिरनार के बारे में जान सकते हैं, गिरनारी साधकों की कृपा हों तो गिरनार देख सकते हैं, परंतु ईश्वर की कृपा हों तो ही गिरनार जा सकते है ।"

प्रस्तुत प्रसाद स्वरूप पुस्तक अनेक बच्चों - विद्यार्थियों - यात्रियों - प्रवासियों - संशोधकों के लिए आदर्श जीवन का प्रेरणा स्रोत बनेगा यह निश्चित है । पूज्य हेमवल्लभसूरि म.सा.के द्वारा ग्रंथों की धारा बहती रहें यही अभ्यर्थना । गुजरात और गिरनार के गौरव समान हेमवल्लभसूरि महाराज के चरणों में वंदन सह जय जिनेन्द्र ।

प्रोफ. डॉ. विशालभाई आर. जोषी

अध्यक्ष, इतिहास विभाग भक्तकवि नरसिंह महेता

युनिवर्सिटी - जुनागढ

गिरनारकी बालकथाएँ

संदर्भसूचि

- शत्रुंजय माहात्म्य
- सुकृतसागर
- वस्तुपाळ चरित्र
- आवश्यक निर्युक्ति
- शत्रुंजय कल्पवृत्ति
- प्रभावक चरित्र
- प्रबंधचिंतामणी
- पुरातन प्रबंध संग्रह
- रैवतक उद्धार प्रबंध
- गिरनार महातीर्थकल्प
- सम्यक्त्व सप्ततिका
- रैवतगिरिरासु
- जैन परंपरा नो इतिहास
- ऐतिहासिक राससंग्रह
- रैवतगिरि स्पर्शना
- तीर्थोद्धारक आचार्य
- शासनसम्राट
- विसमी सदीनी विरल विभूति

JSBN: gyann0006

KIRIT GRAPHICS
9898490091 I 9409342601

9 788194 935308
ISBN : 978-81-949353-0-8